जुलाई-दिसंबर, 2022

अंक 5, संख्या 2

रेशा किरण

प्राकृतिक रेशा पर आधारित अर्धवार्षिक राजभाषा पत्रिका

भाकृअनुप ICAR

केपसरेअसं CRIJAF

भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
(आईएसओ 9001: 2015 प्रमाणित संस्थान)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
बैरकपुर, कोलकाता - 700121

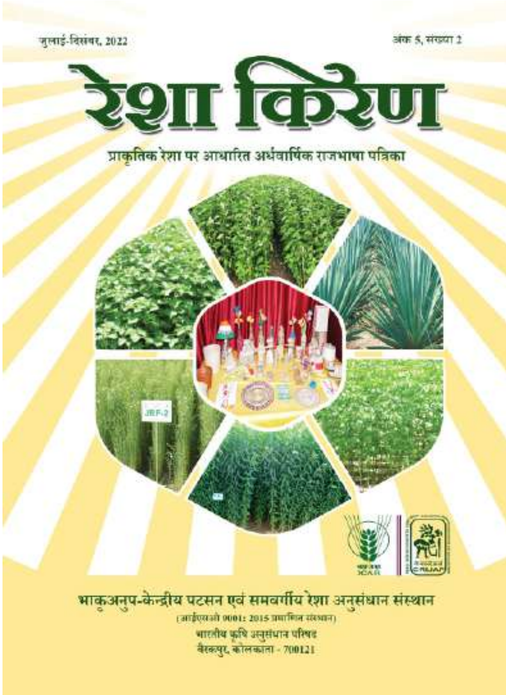

जुलाई-दिसंबर, 2022
अंक 5, संख्या 2
रेशा किरण
प्राकृतिक रेशा पर आधारित अर्धवार्षिक राजभाषा पत्रिका
भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
(आईएसओ 9001: 2015 प्रमाणित संस्थान)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
बैरकपुर, कोलकाता - 700121

ICAR-CRIJAF

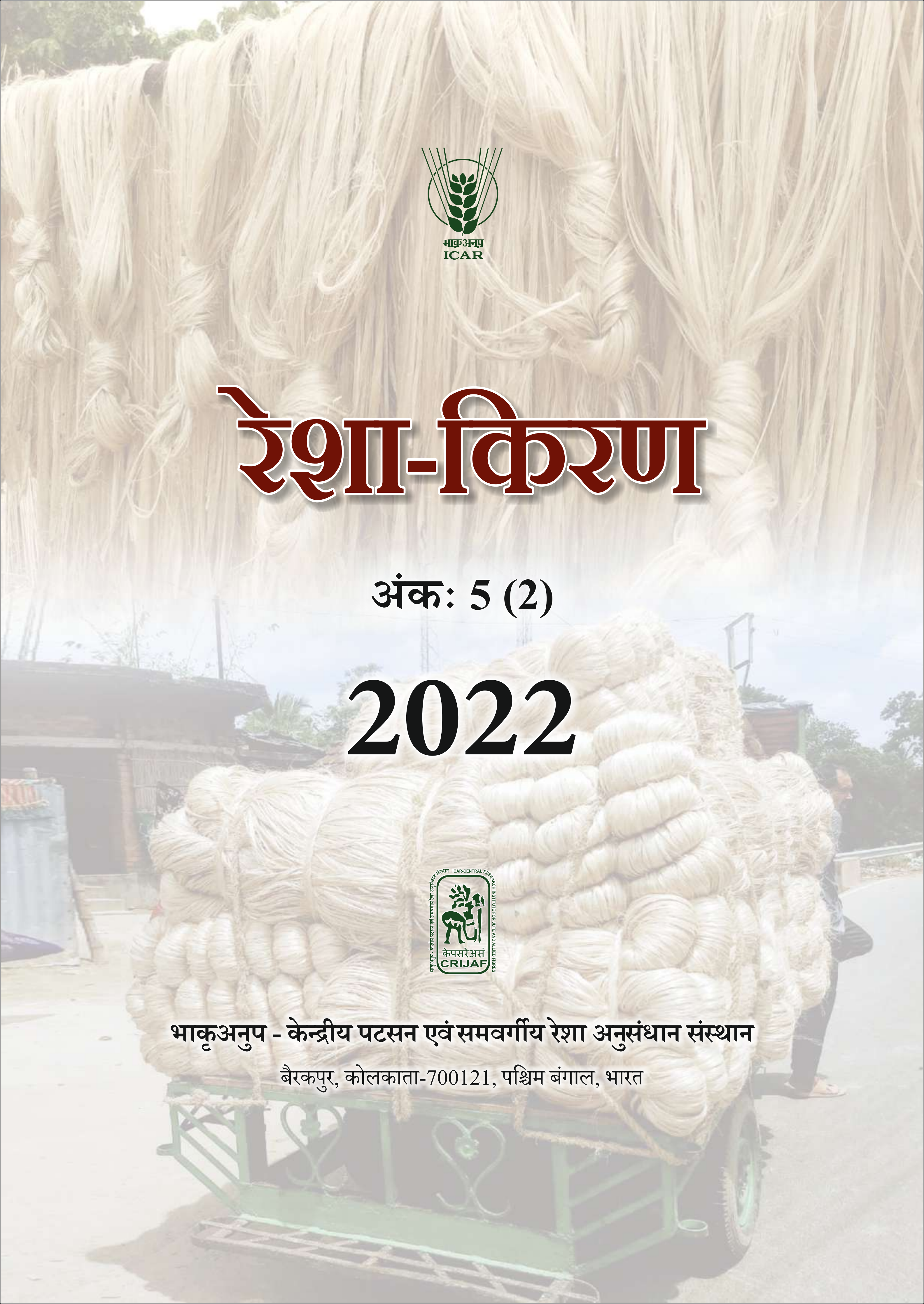

रेशा-किरण

अंक: 5 (2)

2022

भाकृअनुप - केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान

बैरकपुर, कोलकाता-700121, पश्चिम बंगाल, भारत

संरक्षक एवं प्रकाशक

डॉ. गौरांग कर, निदेशक

भाकृअनुप - केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान

बैरकपुर, कोलकाता-700121, पश्चिम बंगाल, भारत

दूरभाष: (033) 25356124, 25356125

फैक्स: (033) 2535 0415

ई मेल: director.crijaf@icar.gov.in

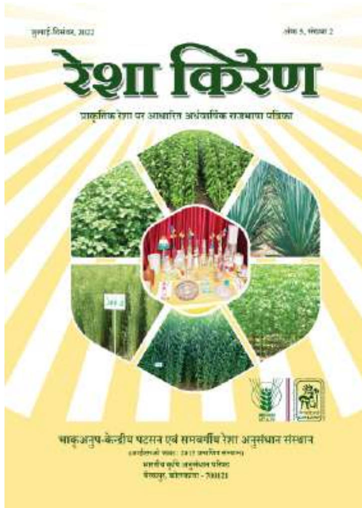

संपादक मंडल

डॉ. एस. के. पाण्डेय
डॉ. कुमार निशांत चौरसिया
डॉ. एस. के. झा
डॉ. शैलेश कुमार
डॉ. एस. सतपथी
डॉ. ए.के. सिंह
श्री विकास कुमार केशरी
श्री मनोज कुमार राय
डॉ. गौरांग कर

उचित उद्दरण

रेशा किरण 2022. अंक 5(2), भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता-700121

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण पूर्णतया संबंधित लेखक के हैं। संस्थान अथवा राजभाषा कक्ष का इससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

© इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री प्रकाशक की अनुमति के बिना कहीं भी प्रस्तुत करना निषेध है।

निदेशक की कलम से

भाषायी समस्या का निदान करते हुए तथा राजभाषा हिन्दी को माध्यम बना कर भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान विगत कुछ वर्षों से अर्ध-वार्षिक गृह राजभाषा पत्रिका "रेशा-किरण" का सतत प्रकाशन में अग्रसर है, जिसके माध्यम से संस्थान द्वारा विकसित पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों के नवीनतम विधाओं को सरल एवं आसान शब्दों में कृषक बंधुओं तथा इस व्यवसाय से जुड़े अन्य उद्यमियों तक पहुँचाने में प्रयत्नशील है। इस प्रकार यह कहना अनुचित नहीं होगा कि राजभाषा हिन्दी देश के विभिन्न प्रान्तों में निवास करने वाले लोगों द्वारा बड़ी सहजता के साथ समझा तथा बोलचाल में प्रयुक्त किया जा रहा है, जो देश को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने में एक सशक्त माध्यम के रूप में महती भूमिका निभा रहा है, इस क्रम में हमारी राजभाषा पत्रिका 'रेशा-किरण' भी इसी मापदण्ड के साथ आगे बढ़ रही है।

संस्थान की गृह पत्रिका "रेशा-किरण" का पंचम अंक भाग-2 को प्रस्तुत करते हुए अत्यंत हर्ष की अनुभूति हो रही है। पत्रिका के इस अंक में पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों के कृषि संबंधित विभिन्न वैज्ञानिक पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है तथा आधुनिक यंत्रों के प्रयोग द्वारा उत्पादन लागत में उल्लेखनीय कमी लाकर शुद्ध आय में वृद्धि के तरीकों को भी भली-भाँति दर्शाया गया है। आप इस पत्रिका में एक ओर पटसन फसल के किस्मों के रखरखाव के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे, तो वहीं दूसरी ओर प्लास्टिक के विकल्प के रूप में पटसन के विभिन्न उपयोग से अवगत भी होंगे। इस पत्रिका में पटसन फसल में जैविक खाद और उर्वरक की महती भूमिका के साथ-साथ जीनोम एडिटिंग, जैव ईंधन, पटसन कृषि में ड्रोन का उपयोग, जलवायु परिवर्तन द्वारा फसलों के कीटों पर संभावित प्रभाव के बारे में विस्तृत चर्चा की गई है। इसके साथ ही इस अंक में समय-समय पर संस्थान में कार्यान्वित राजभाषा संबंधित विभिन्न गतिविधियों की झलक से भी आप भली-भांति परिचित होंगे।

पत्रिका की भाषा अत्यंत सरल, सुगम्य एवं सुबोध हो, इसका यथा सुझाव प्रयास किया गया है ताकि पाठकों के मन-मस्तिष्क पर अपनी अमिट छाप छोड़ सके। पत्रिका के इस अंक के प्रकाशन में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से जुड़े संस्थान के समस्त वैज्ञानिक, अधिकारी, कर्मचारी तथा संपादक मण्डल के सभी सदस्य बधाई के पात्र हैं। इस पत्रिका के सतत एवं निरंतर प्रकाशन एवं प्रगति की कामना करता हूँ, जोकि पटसन कृषि के वैज्ञानिक विधाओं के साथ-साथ राजभाषा के प्रचार-प्रसार के मार्ग को भी प्रसस्त करेगा।

गौरांग कर

दिनांक : 20.12.2022

(गौरांग कर)
निदेशक
भाकृअनुप- केपसरेअसं

G20

भारत 2023 INDIA

वसुधैव कुटुम्बकम्

ONE EARTH • ONE FAMILY • ONE FUTURE

इस अंक में

क्र.सं.	तकनीकी लेख	पृष्ठ सं.
1	**बदलते पर्यावरणीय परिवेश में प्लास्टिक प्रदूषण कम करने में पटसन की भूमिका** एस.के. झा, एस. कुमार, एम.एल. रॉय, आर.के. नायक, षम्ना ए., तन्मय समाजदार एवं बी. दास	8
2	**पटसन एवं मेस्ता के आनुवांशिक सुधार हेतु अंतर-प्रजातीय संकरण की संभावना** प्रतीक सत्या, सुरेन्द्र कुमार पाण्डेय एवं लक्ष्मी शर्मा	14
3	**पटसन आधारित फसल प्रणाली में एकीकृत पोषक-तत्व प्रबंधन** एस.पी. मजुमदार, ए.आर. साहा, बि. मजुमदार, आर. साहा, एस. सरकार, सौरव घोष, अल्का पासवान एवं बिश्वजित बिश्वास	21
4	**पटसन खेती में भूजल की स्थिति एवं भूजल पुनर्भरण** देबारती दत्ता, ए.के. सिंह, सौरव घोष, सब्यसाची मित्र एवं गौरांग कर	25
5	**जलवायु परिवर्तन : फसल कीटों पर संभावित प्रभाव** एस. सतपथी, बी.एस.गोट्याल, वी. रमेश बाबू एवं एस.के. झा	33
6	**पटसन आधारित फसल प्रणाली में जैविक खाद और जैव उर्वरक की भूमिका** बिजन मजुमदार, अमित रंजन साहा, सितांशु सरकार, रितेश साहा, अल्का पासवान, सोनाली पाल मजुमदार, देबारती दत्ता एवं सौरव घोष	38
7	**पैकेजिंग सामग्री के रूप में पटसन : प्लास्टिक का विकल्प** ए.के. सिंह, षम्ना ए., टी. गोस्वामी एवं जी. कर	42
8	**पटसन किस्मों का विकास : एक अवलोकन** जितेंद्र कुमार मीना, कुमार निशांत चौरसिया, त्रिभुवन आर., नीतू मोहन, लावण्या ए.के., शाहिद मुख्तार एवं जीवन मित्र	46
9	**धीमें बहते हुये जल में पटसन सड़न की एक उन्नत तकनीक : परीक्षण व परिणाम** आर.के. नायक, षम्ना ए., बिजन मजुमदार, एस.के. झा, एम.एस. बेहेरा एवं गौरांग कर	52
10	**सनई बीज उत्पादन तकनीक** एस.के. सरकार	55
11	**कृषि में ड्रोन का योगदान** सौरव घोष, देबारती दत्ता, एन.एम. आलम एवं गौरांग कर	59
12	**जैव ईंधन : स्रोत और उत्पादन** लक्ष्मी शर्मा, गौरंग कर, सुमन रॉय, प्रतीक सत्या, सुरेन्द्र कुमार पाण्डेय, बिजन मजूमदार, टिंकू गोस्वामी एवं बिनीता देव	66
13	**जीनोम एडिटिंग : फसल सुधार के अंतर्गत एक सफल प्रौद्योगिकी** त्रिभुवन आर., जितेंद्र कुमार मीणा, कुमार निशांत चौरसिया एवं सुमन रॉय	73
14	**फसल किस्मों का रखरखाव** हेम राज भण्डारी, चन्दन सौरभ कर, अमित बेरा एवं जितेंद्र कुमार मीणा	78
15	**संस्थान में राजभाषा गतिविधियाँ : एक झलक** मनोज कुमार राय, विकास कुमार केशरी एवं कुमार निशांत चौरसिया	81

बदलते पर्यावरणीय परिवेश में प्लास्टिक प्रदूषण कम करने में पटसन की भूमिका

एस.के. झा, एस. कुमार, एम.एल. रॉय, आर.के. नायक, षम्ना ए., तन्मय समाजदार एवं बी. दास
भाकृअनुप– केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

आज का परिदृश्य

पूरी दुनिया में लगातार करीब 500 अरब प्लास्टिक की बोरियों का उपयोग किया जाता है। एक करोड़ से ज्यादा प्लास्टिक के बोरे हर पल इस्तेमाल हो रहे हैं और ये हमारे मौजूदा पर्यावरण को काफी प्रभावित कर रहे हैं । प्लास्टिक के बोरे जैव विघटनशील नहीं होते हैं,जो पानी को गंदा और दूषित करते रहते हैंऔर मामूली कणों में विभाजित होने के लिए उन्हें 1,000 वर्षों तक की आवश्यकता हो सकती है। प्लास्टिक कचरे की सबसे बड़ी मात्रा पैकेजिंग उद्योग से आती है जिसमें : i) परिवारों द्वारा दो तिहाई योगदान एवं ii) उद्योग और वाणिज्य द्वारा एक तिहाई योगदान होता है।

क्या आप जानते हैं कि कम विकसित देशों के लोगों की तुलना में अमीर देशों के लोग अधिक प्लास्टिक कचरा उत्पन्न करते हैं ?

विश्व में प्लास्टिक का प्रति व्यक्ति औसत खपत लगभग 28 कि.ग्रा./ वर्ष है। अमेरिका और ग्रेट ब्रिटेन प्रति वर्ष औसतन क्रमश: 109 कि. ग्रा. एवं 99 कि. ग्रा. प्लास्टिक अपशिष्ट का उत्पादन करते हैं जबकि दक्षिण कोरिया और जर्मनी तीसरे और चौथे स्थान पर हैं। भारत, दुनिया का दूसरा सबसे अधिक आबादी वाला देश, सालाना लगभग 5.6 मिलियन टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न करता है। भारत में अभी प्रति व्यक्ति औसत खपत 11 कि.ग्रा. है, जो 2022 तक 20 कि.ग्रा. तक बढ़ सकती है। जनसाधारण में जागरूकता के अभाव में प्लास्टिक की थैलियों के उपयोग के व्यवहार और प्रवृत्ति को बदलना शायद ही संभव हो, जो मिट्टी, जल, पृथ्वी और पर्यावरण को भारी मात्रा में प्रदूषित कर रहे हैं।

वर्तमान स्थिति

एक यूरोपीय देश (जर्मनी) के लोगों में इस विषय पर जागरूकता की जानकारी

अंठावन प्रतिशत (58%) उत्तरदाता प्लास्टिक उत्पादों के हानिकारक प्रभावों से अवगत हैं जबकि 33 प्रतिशत अनभिज्ञ है। बारह प्रतिशत (12%) खुद को इसके नकारात्मक पहलुओं से आंशिक रूप से अवगत महसूस करते हैं । बियालीस प्रतिशत (42%) लोग प्लास्टिक के मानव स्वास्थ्य और पृथ्वी

आज की स्थिति
(प्राकृतिक रेशा बनाम प्लास्टिक कचरा)

पर होने वाले जहरीले प्रभाव के बारे में नहीं जानते। वे परिणामों पर विचार किए बिना आसानी से प्लास्टिक कचरे को फिर से प्रकृति में खरीद , उपयोग और फेंक देते हैं। ग्यारह प्रतिशत (11%) उत्तरदाताओं को प्लास्टिक उत्पादों का कोई विकल्प खोजने में कोई दिलचस्पी नहीं है और वे प्लास्टिक के घटकों के कारण होने वाले गंभीर खतरों के बारे में चिंतित नहीं हैं, न तो अपने लिए, न ही भविष्य की पीढ़ी के लिए। आईये जानते हैं प्लास्टिक कचरे का दुष्प्रभाव ये तथाकथित माइक्रोप्लास्टिक दुनिया की सबसे ऊँची चोटी माउंट एवरेस्ट से लेकर सबसे गहरी गर्त मारियाना ट्रेंच तक पाए गए हैं। विभिन्न क्षेत्रों में इनसे होने वाले प्रदूषण / नुकसान :

आर्थिक नुकसान : समुद्र तट पर प्लास्टिक कचरे पर्यटन राजस्व पर नकारात्मक (एक सौंदर्य मुद्दा है) प्रभाव डालते हैं। अंतरराष्ट्रीय डंपिंग के कारण अंडमान और निकोबार द्वीप समूह प्लास्टिक कचरे के सौंदर्य संबंधी समस्या का सामना कर रहे हैं।

पेयजल प्रदूषण : नगरपालिका द्वारा आपूर्ति की गयी पेयजल में प्लास्टिक माइक्रो रेशा पाए गए हैं जो हवा के माध्यम से बहते हैं और हमारे पेयजल को प्रदूषित करते हैं।

भूमि प्रदूषण : इनसे निकलने वाली खतरनाक रसायनों के रिसाव के परिणामस्वरूप पृथ्वी की सतह की गुणवत्ता में गिरावट और भूमि की उर्वरता प्रभावित होती है।

वायु प्रदूषण : इसके जलाने से वातावरण में जहरीले रसायन निकलते हैं जो हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं और जीवित प्राणियों में श्वसन संबंधी विकार पैदा करते हैं।

भूजल प्रदूषण : बारिश होने पर लैंडफिल में डंप किए गए प्लास्टिक में मौजूद खतरनाक रसायन भूमिगत हो जाते हैं। लीचिंग द्वारा रसायन और जहरीले तत्व भूजल में मिलकर भूजल की गुणवत्ता को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हुए जलभृतों और जल स्तर में घुसपैठ करते हैं।

जलीय एवं अन्य जन्तुओं पर दुष्प्रभाव : माइक्रोप्लास्टिक्स 100 से अधिक जलीय प्रजातियों में पाए गए हैं, जिनमें मछली, झींगा और घोंघा इत्यादि शामिल हैं। जलीय जंतुओं की मृत्यु अधिकांशतःप्लास्टिक उलझाव और इसके फलस्वरूप भूख में कमी के कारण होती है। सील, व्हेल, कछुए और अन्य जलीय जंतुओं को मछली पकड़ने के गियर से चोट लगने पर मृत्यु हो जाता है। इसी तरह से हाथियों, लकड़बग्घा, जेब्रा, बाघ, ऊँट, मवेशी और अन्य बड़े स्तनधारियों सहित भूमि-आधारित जानवरों द्वारा प्लास्टिक का सेवन किया जाता है, कुछ मामलों में ये मृत्यु का कारण भी बन जाता है। इस कारण से यकृत और कोशिका क्षति और प्रजनन प्रणाली में व्यवधान की भी पुष्टि की है। कुछ प्रजातियों, जैसे सीप में कम अंडा देने का कारण उसे ही बताया है।

कृषि पर प्लास्टिक की थैलियों नकारात्मक प्रभाव

इससे कृषि के ऊपर निम्नलिखित दुष्प्रभाव पड़ता है :

- मिट्टी की उर्वरता में कमी,
- नाइट्रोजन स्थिरीकरण में कमी,
- मिट्टी में पोषक तत्वों की भारी कमी,
- फसल कटाई में कमी,
- मिट्टी पर पाये जानेवाली वनस्पतियों और जीवों आदि में असमानता।

मानव स्वास्थ्य के लिए निहितार्थ

प्लास्टिक से निकलने वाले अनेक यौगिक रसायन जैसे पॉलीब्रोमिनेटेड डिपेनिल ईथर (एंटी-एंड्रोजन), बिस्फेनॉल ए (प्राकृतिक महिला हार्मोन एस्ट्रोजन का नकल) और फ़ेथलेट्स (एंटी-एंड्रोजन) मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं जिससे विभिन्न हार्मोनल और आनुवंशिक विकार होते हैं। ये रसायन अंतः स्रावी तंत्र और थायराइड हार्मोन के कामकाज में हस्तक्षेप द्वारा प्रजनन योग्य महिलाओं और छोटे बच्चों को नुकसान पहुंचाते है।

वैश्विक परिदृश्य एवं भारत

वस्त्र निर्माण क्षेत्र में प्राकृतिक रेशा की वैश्विक माँग और खपत की बात करें तो कपास के विकल्प के रूप में पूरी दुनिया में मानव निर्मित रेशा (एम.एम.एफ.) वस्त्रों की माँग बढ़ रही है। वर्तमान में, एम.एम.एफ. की हिस्सेदारी 72% और प्राकृतिक रेशों की 28% है। कपास और अन्य प्राकृतिक रेशों के विकास में अंतर्निहित सीमाओं के कारण एम.एम.एफ. का हिस्सा लगातार बढ़ रहा है। एक अनुमान के अनुसार मानव निर्मित रेशा की वैश्विक माँग वर्ष 2025 तक 3.7% की दर से बढ़ने की

उम्मीद है। वर्तमान में, भारत की रेशा खपत 5.5 कि.ग्रा./व्यक्ति (एम.एम.एफ. 3.1 कि.ग्रा./व्यक्ति + प्राकृतिक रेशा 2.4 कि.ग्रा./व्यक्ति) है । प्राकृतिक रेशा की खपत केवल 2.4 कि.ग्रा./ व्यक्ति है जो विश्व में प्रति व्यक्ति एमएमएफ खपत की तुलना में सबसे कम है (यहां तक की अफ्रीका से भी कम)।

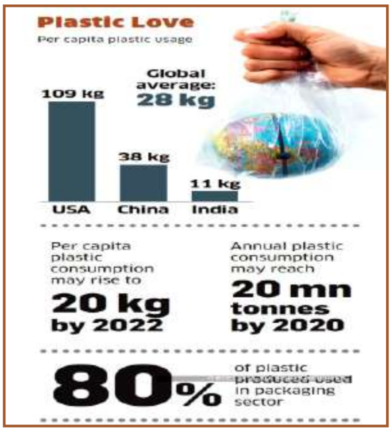

आखिर इसके लिये सबसे उपयुक्त पटसन क्यों है ?

पर्यावरण के लिए कपास की तुलना में पटसन से लाभ

- कपास और अन्य सामग्री की तुलना में पटसन की फसल के लिए कम कीटनाशक का प्रयोग किया जाता है।
- कपास की तुलना में उच्च उत्पादन स्तर क्योंकि इसे हर चार महीने में काटा जा सकता है।
- पटसन हवा को साफ करता है। एक है. पटसन की खेती 11 टन ऑक्सीजन छोड़ती है और 15 टन कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करती है।
- पेट्रोलियम संसाधनों पर बोझ कम करता है - क्योंकि प्लास्टिक की थैलियां पेट्रोलियम से बनी होती हैं जो खतरनाक गति से घट रही है।
- पटसन से बने बैग और फर्नीचर को अपनाकर लाखों पेड़ों को कटाई से बचा सकते हैं।
- जल की बचत - कपास की तुलना में पटसन की फसल को कम सिंचाई की आवश्यकता होती है।
- पटसन एक प्राकृतिक रेशा है जिसे इसकी सुनहरी और रेशमी चमक के कारण इसे स्वर्णिम रेशा (गोल्डन रेशा) के रूप में जाना जाता हैऔर इसका व्यापक उपयोग पैकेजिंग उत्पादों और वस्त्र निर्माण में किया जाता है।
- एक पैकेजिंग सामग्री के रूप में पटसन एक अच्छा इन्सुलेशन, कम तापक्रम चालकता और मध्यम नमी प्रतिधारण जैसे सुविधा प्रदान करता है।
- वर्ष 2018 में पटसन उत्पादन की अधिकतम मात्रा वाले देश भारत (2.1 मिलियन टन) और बांग्लादेश (1.6 मिलियन टन) थे, जिसमें वैश्विक उत्पादन में उनका संयुक्त हिस्सा 93 प्रतिशत था।

हमें यहाँ फोकस करने की जरूरत है। यदि पटसन धीरे-धीरे और नियमित रूप से पैकेजिंग सामग्री के रूप में प्लास्टिक को विस्थापित करता है तो 50% प्रतिस्थापन के लिए पटसन / अन्य प्राकृतिक रेशों की 8 मिलियन टन अतिरिक्त आवश्यकता होगी।

क्या पटसन इको फ्रेंडली है?

- कपास के बाद पटसन दूसरा सबसे महत्वपूर्ण वनस्पतिक रेशा है जो कपास से भी अधिक टिकाऊ है।
- इसके उत्पादन के लिए कम पानी, रखरखाव, कीटनाशक और उर्वरक की आवश्यकता होती है। इसकी खेती करने वाले समुदाय प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से इसका लाभ उठाते हुये स्वयं का आर्थिक विकास कर सकते हैं।
- लकड़ी, कागज, कपड़े और बैग, फर्नीचर और अन्य प्रयोगों के लिए पटसन की खेती से प्लास्टिक की खपत के खिलाफ एक स्थायी और कुशल लड़ाई हो सकती है।
- कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन तथा कार्बन पदचिह्नों को कम करने और जलवायु परिवर्तन के कुप्रभाव से लड़ने के लिए नए और वैकल्पिक संसाधनों को खोजने का अतिरिक्त लाभ।
- पटसन पर्यावरण अनुकूल वस्तुओं में से एक है जो पर्यावरण के लिए लाभप्रद है।

क्या पटसन अगले दशक तक प्लास्टिक की जगह ले सकता है?

कपास के बाद, पटसन को उपयोग और उत्पादन मात्रा में सबसे किफायती प्राकृतिक रेशा माना जाता है। जैव विघटनशील प्रकृति के कारण यह जैविक पदार्थ ने अत्यधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि यह टिकाऊ और उत्पादन लागत कम है।

पटसन एक प्राकृतिक रेशा है जिसे इसकी सुनहरी और रेशमी चमक के कारण स्वर्णिम रेशा (गोल्डन रेशा) के रूप में जाना जाता है, और इसका व्यापक रूप से पैकेजिंग उत्पादों और वस्त्रों के निर्माण में उपयोग किया जाता है। एक पैकेजिंग सामग्री के रूप में, जूट अच्छा इन्सुलेशन, कम तापीय चालकता और मध्यम नमी प्रतिधारण जैसे फायदे प्रदान करता है। पटसन के थैलों का उपयोग थोक सामानों के साथ-साथ खरीदारी और उपहार बैग के लिए पैकेजिंग सामग्री के रूप में किया जाता है।

पटसन के बोरे पटसन के धागों से निर्मित होते हैं जिसे औद्योगिक और कृषि वस्तुओं जैसे अनाज, तिलहन, नमक, चीनी और अन्य वस्तुओं की पैकिंग के लिए उपयोग किए जाते हैं। निर्मित और कृषि उत्पादों की पैकिंग और रैपिंग के लिए औद्योगिक और कृषि क्षेत्रों में उत्पादों की बहुत माँग है।

यह एक टिकाऊ और मजबूत सामग्री है जिसे कई बार पुन: उपयोग किया जा सकता है और यह संभावित रूप से प्रदूषण भी नहीं फैलता है।

हरे-भरे पटसन के पौधों से बने पटसन के थैले पर्यावरण की रक्षा में मदद करता है और वातावरण को बहुत आवश्यक ऑक्सीजन प्रदान करके पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखता है;

पटसन बैग की उत्पादन प्रक्रिया सरल है और सिंथेटिक्स के विपरीत, इसमें जहरीले व अवांछनीय हानिकारक रसायनों की उपस्थिति लगभग शून्य होती है।

पटसन के बोरे चावल और गेहूँ जैसे सूखे खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता को बनाए रखते हैं क्योंकि थैलियों में अंतर्निहित वायवीय गुण होते हैं और भंडारण उद्देश्यों के लिए सुरक्षित होते हैं।

पटसन और संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्य (एस.डी.जी.)

पटसन उत्पादन और खपत में वृद्धि (प्लास्टिक के विकल्प के रूप में) संयुक्त राष्ट्र के सत्रह सतत विकास लक्ष्यों में से पाँच को पूरा करेगी ।

1. गरीबी को हर जगह उसके सभी रूपों में समाप्त करना

प्लास्टिक की समस्या के बारे में बढ़ती जागरूकता से पटसन निर्मित वस्तुओं के उपयोग से पटसन की माँग में वृद्धि होगी और बांग्लादेश तथा भारत या अन्य देश के अधिक से अधिक किसान लाभान्वित होंगे । उनकी जीवन शैली में सुधार और उनकी आय में वृद्धि होगी।

2. स्वस्थ जीवन सुनिश्चित करना और सभी उम्र में सभी के लिए कल्याण को बढ़ावा देना

संयुक्त राष्ट्र द्वारा लिखित घोषणा "स्वस्थ जीवन सुनिश्चित करना और सभी उम्र में सभी के लिए कल्याण को बढ़ावा देना सतत विकास के लिए आवश्यक है" की दिशा में पटसन की खपत में वृद्धि (प्लास्टिक उत्पादन में कमी) से महासागरों की सफाई प्रक्रिया में सुधार होगा।

3. टिकाऊ खपत और उत्पादन पैटर्न सुनिश्चित करना

इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु पटसन के दैनिक उपयोग से जीवन की गुणवत्ता सुधार करते हुए पूरे जीवन चक्र में संसाधनों के बेहतर सदुपयोग तथा प्रदूषण में कमी आएगी।

4 . जलवायु परिवर्तन और उसके दुष्प्रभावों का मुकाबला करने के लिए तत्काल कार्रवाई करना

प्लास्टिक की थैलियों का उत्पादन करने का मतलब है कि बहुत अधिक गैस उत्सर्जन से जलवायु परिवर्तन की समस्या को और भी गंभीर बनाना।

5. महासागरों, समुद्रों और समुद्री संसाधनों का संरक्षण और स्थायी रूप से उपयोग करना

समुद्र में प्लास्टिक से समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र में परिणामी परिवर्तन के साथ कई समुद्री जानवरों जैसे समुद्री कछुओं की संख्या और स्थिति में परिवर्तन । प्लास्टिक की थैलियों के उत्पादन में कमी से कई जानवरों को विलुप्त होने से बचाया जा सकेगा।

प्राकृतिक रेशा - पर्यावरण के अनुकूल एवं बायोडिग्रेडेबल होने के कारण स्वच्छ एवं हरित भारत निर्माण में प्लास्टिक / सिंथेटिक्स के लिए उचित विकल्प हो सकता हैं । क्रिजैफ विविध उपयोग के लिए गुणवत्तायुक्त पटसन रेशा उत्पाद जैसे टेक्सटाइल ब्लेंडिंग, बैग, कार्यालय फ़ोल्डर, सजावटी सामान, भू-टेक्सटाइल आदि विकसित कर रही है। एक आँकलन के अनुसार निम्नलिखित पटसन निर्मित विविध समग्रियों को बनाने हेतु करीब 25 लाख बेल अतिरिक्त पटसन की माँग बढ़ेगी जिससे पटसन कृषकों को लाभ होगा और उनकी आमदनी में बढ़ोत्तरी होगी।

पटसन मिलों से एकत्रित आँकड़ों के आधार पर प्रत्येक उत्पाद के लिए आवश्यक रेशा की गणना

क्रम	सामग्री	अनुमानित आवश्यक ईकाई संख्या करोड़	रेशा (ग्रा.) प्रति ईकाई	कुल वजन
1	पटसन शापिंग बैग (छोटा, मध्यम, बड़ा)	105	750	262500
2	हस्त निर्मित पटसन फ़ैन्सी बैग	30	1150	115000
3	पटसन कार्यलीय फोल्डर, बैग आदि	05	600	16000
4	हस्त निर्मित पटसन दरी	0.5	2000	10000
5	पटसन निर्मित विविध उत्पाद (बॉटल बैग, पुष्प गुच्छ, पेन स्टैण्ड, कोस्टर, टेबल मैट, डोर हैंगर, पटसन के गहने)	72.6	760	49700
	कुल आवश्यक रेशा	453200 टन = 25.17 लाख बेल्स		

'पेरिस घोषणा' और जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना' और 'सह-प्रणाली सेवाओं' में योगदान

- कच्चा पटसन (पटसन और मेस्ता) में उच्चतम कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषण दर होता है। मात्र 120 दिनों में 15 टन कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करती है और 11 टन ऑक्सीजन छोड़ती है।
- पटसन (जेआरओबी -2) और केनाफ (एमटी -150) की विकसित किस्म जैव ईंधन, कागज और लुग्दी के लिए उपयुक्त (60-70 टन हरे बायोमास)

निष्कर्ष

- प्लास्टिक बैग के विकल्प जैसे पटसन बैग, पेपर बैग आदि पर्यावरण अनुकूल विकल्पों को बढ़ावा देना।
- खाद्य पैकेजिंग उद्योग को जैव विघटनशील सामग्री का उपयोग करने के लिए आवश्यक कानून बनाना।
- सरकारी तथा गैर सरकारी संगठनों को प्लास्टिक बैग के नकारात्मक प्रभावों को उजागर करना।
- प्लास्टिक बैग के अल्पकालिक और दीर्घकालिक हानिकारक प्रभावों का प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया और सोशल मीडिया के माध्यम से जनता को जागरूक करना।
- प्राकृतिक रेशों के बढ़ते उपयोग को सुविधाजनक बनाने के लिए सरकारी नीति को प्रोत्साहित करना।
- पटसन उत्पादकों के हित में पटसन रेशा की माँग बढ़ाकर उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रेरित करना।
- विविध मूल्य वर्धित पर्यावरण अनुकूल पटसन उत्पाद बनाने के लिए उद्यमियों को प्रोत्साहित करना।

प्राकृतिक रेशा अपनाएँ , प्लास्टिक को दूर भगाएँ ।

पटसन एवं मेस्ता के आनुवांशिक सुधार हेतु अंतर- प्रजातीय संकरण की संभावना

प्रतीक सत्या, सुरेन्द्र कुमार पाण्डेय एवं लक्ष्मी शर्मा
भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

1. प्रस्तावना

फसल प्रजातियों के जंगली तथा अकृषित प्रजातियों में अनेकों मूल्यवान गुण विद्यमान होते हैं जोकि कृषित प्रजातियों की उत्पादकता में व्यापक आनुवांशिक सुधार लाने में मददगार साबित हो सकते हैं, लेकिन अंतर-प्रजातीय संकरण में आने वाली अनिषेच्य बाधाएं अक्सर जंगली प्रजातियों से कृषित प्रजातियों में लक्षणों के हस्तांतरण को सीमित कर देती हैं। जब अन्य प्रजातियों अथवा वंशजों के पराग कण किसी मादा युग्मक को निषेचित करने का प्रयास करते हैं तो एक प्रकार से अनिषेच्य बाधाएं फिल्टर के तरह कार्य करते हैं। इन बाधाओं को पार करके, अंतर-प्रजातीय संकरण के द्वारा विभिन्न प्रजातियों के आनुवंशिक लक्षणों के आदान-प्रदान के माध्यम से नए जीनों के अधिग्रहण के अवसरों को विस्तार दिया जा सकता है। इन तकनीकों का प्रयोग व्यवहार्य अंतर-प्रजातीय संतति उत्पन्न करने के लिए किया जाता है जहां पारंपरिक संकरण सफल न हो। इस प्रकार, अंतर-प्रजातीय संकरण, पादप प्रजनन के उपकरणों का एक संग्रह है जो प्रजातियों के जीन पूल को विस्तार देने में सक्षम है।

2. अंतर-प्रजातीय संकरण की बाधाएं

2.1 पूर्व-निषेचन बाधाएं

पूर्व-निषेचन बाधाएं पुष्पन तथा परागण के समय एवं अवधि में अंतर, संचार परिवर्तन के परिणामस्वरूप विदेशी पराग कण की अस्वीकृति, विकृत आकार, पराग ट्यूब विकास के आकार एवं पद्धति, कॉलोज़ डिपोजिशन और मादा गैमेंटोफाइट द्वारा पराग ट्यूब की गैर-मान्यता आदि कारणों से उत्पन्न हो सकती हैं। ऐसे मामलों में नर और मादा युग्मकों को या तो यांत्रिक बाधाओं अथवा अस्वीकृति तंत्रों के द्वारा रोका जाता है। स्व-अनिषेच्यता एवं नर-बंध्यता एक प्रजाति के भीतर मौजूद दो प्रकार की पूर्व-निषेचन जीनोटाइपीक बाधाएं हैं। अंतर-प्रजातीय संकरण के लिए विभिन्न पूर्व-निषेचन बाधाओं को मुख्य रूप से स्टिग्मेटिक, स्टाइलर या डिम्बग्रंथि बाधाओं के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

2.1.1 स्टिग्मेटिक बाधाएं

स्टिग्मेटिक बाधाएं विदेशी पराग को अंकुरित होने या स्टिग्मेटिक सतह में प्रवेश करने की अनुमति नहीं देते हैं जोकी विभिन्न दूरस्थ प्रजातियों के बीच मौजूद सबसे प्रमुख बाधा है। स्टिग्मेटिक बाधाओं के अंतर्गत, परागण के लिए आवश्यक पानी की उपलब्धता को कम करके पराग के अंकुरण को प्रतिबंधित कर दिया जाता है तथा स्टिग्मेटिक पोर्स के माध्यम से पराग ट्यूब के प्रवेश को प्रतिबंधित किया जाता है।

2.1.2 स्टाइलर बाधाएं

पराग नलिका की वृद्धि का स्टाइलर अवरोध और भ्रूण थैली में पराग नली के प्रवेश की अस्वीकृति, अंतर- प्रजातीय संकरण के लिए प्रमुख अवरोधक हैं। पराग नलियों की वृद्धि दर में अंतर स्टाइलर अवरोध का एक प्रमुख कारण है। पराग नलिका के वृद्धि में अंतर कई कारणों, जैसे पराग कण के अंकुरण में देरी, सीमित संसाधनों के लिए कई पराग नलियों की प्रतिस्पर्धा या स्टाइल में पराग नली के विकास में रुकावट आदि से हो सकता है। कॉलोज़ प्लग आगे बढ़ने वाली पराग नली के भीतर बनते हैं, जो पराग केन्द्रक के गति को रोकता है।

2.1.3 डिम्बग्रंथि बाधाएं

डिम्बग्रंथि अवरोध नर और मादा युग्मकों के निषेचन को रोकता है। यह अवरोध अंतिम निवारक बाधा के रूप में कार्य करता है जो सामान्यतया कम पाया जाता है।

2.2 निषेचनोपरांत बाधाएं

जब पूर्व-निषेचन बाधाएं अनुपस्थित होती है और नर और मादा युग्मक के मिलन की पूर्णतः अनुकूलता बावजूद भी कई बार निषेचन के बाद की जटिलताएं भ्रूण विकास में बाधक बन सकती हैं। निषेचन के बाद की प्रमुख बाधाएं निम्नवत हैं:

2.2.1 गुणसूत्र असंतुलन एवं अर्धसूत्री विभाजन के दौरान अस्थिरता

विभिन्न प्रजातियों के गुणसूत्र के बीच युग्मन की क्षमता दोनों प्रजातियों के गुणसूत्र समरूपता या जीनोमिक संबंध पर निर्भर करती है। यदि दोनों प्रजातियां समान या बहुत समान जीनोम साझा करती हैं, तो अंतर-प्रजातीय संकर में सामान्य रूप से गुणसूत्र युग्मन की प्रक्रिया सम्पन्न होती है और सामान्य रूप से अर्धसूत्री विभाजन होता है। कुछ प्रजातियों में, जीनोमिक विषमता अर्धसूत्री विभाजन के दौरान अधिक प्रभावी नहीं होती है, जबकि अन्य प्रजातियों में प्राकृतिक अंतर-प्रजातीय संकर विकसित करने के हेतु सख्त जीनोमिक समरूपता की आवश्यकता होती है। इसके अलावा, यदि अलग-अलग गुणसूत्र संख्या वाली दो प्रजातियों को संकरित किया जाता है, तो अतिरिक्त गुणसूत्र युग्मक साथी को खोजने में सक्षम नहीं होंते, जिसके परिणामस्वरूप अर्धसूत्री विभाजन के दौरान अस्थिरता उत्पन्न हो जाती है और अतिरिक्त अयुग्मित गुणसूत्र स्वतः विलुप्त हो जाता है।

2.2.2 एंडोस्पर्म संतुलन में गड़बड़ी

निषेचन के उपरांत बीज के एंडोस्पर्म विकास के दौरान दोनों पित्रों के जीनोमिक योगदान के संतुलन की सख्त आवश्यकता होती है, क्योंकि यह भ्रूण का पोषण करता है। एंडोस्पर्म संख्या संतुलन परिकल्पना के अनुसार, एक संकर भ्रूण सामान्यरूप से तभी विकसित हो सकता है जब मातृ एवं पैतृक जीनोम का जीनोमिक अनुपात संकर कोशिकाओं के एंडोस्पर्म में 2:1 हो। बीज के एंडोस्पर्म में माता-पिता के जीनोम असंतुलन से भ्रूण नष्ट हो जाता है।

2.2.3 पूर्ण या आंशिक जीनोम का विलोपन

भ्रूण के प्रारंभिक अवस्था में समसूत्री कोशिका विभाजन के दौरान एक प्रजाति के पूर्ण जीनोम के विलोपन के कारण अंतर-प्रजातीय संकरण असफल हो सकता है। इसलिए संकर केवल एक ही जीनोम को बरकरार रखता है। कुछ मामलों में मात्र कुछ गुणसूत्र ही विलुप्त होते हैं।

2.3 बीज अंकुरण के उपरांत बाधाएं

कभी-कभी अंतर-प्रजातीय संकर बीज सफलतापूर्वक अंकुरित हो जाता है, तो कई बार अंकुरण के बाद की बाधाएं भी वानस्पतिक वृद्धि, विकास एवं प्रजनन में समस्याएं पैदा कर सकती हैं जो इस प्रकार हैं:

2.3.1 घातक या उप-घातक जीन की अभिव्यक्ति

प्रायः घातक जीन की अभिव्यक्ति के कारण भी अंतर-प्रजातीय संकरण सफल नहीं होते हैं। प्रकट होने वाले लक्षणों के आधार पर घातक प्रतिक्रियाओं को हाइब्रिड क्लोरोसिस या हाइब्रिड नेक्रोसिस कहा जाता है। क्लोरोसिस और नेक्रोसिस की अलग-अलग डिग्री देखी जाती है, खासकर तब, जब अलग-अलग बहुगुणित गुणसूत्रों वाली दो प्रजातियों को संकरित कराया जाता है।

2.3.2 संकर बंध्यता

कुछ अंतर-प्रजातीय संकरणों में व्यवहार्य बीज बनते हैं जो पूर्णतः विकसित पौधे का रूप भी ले लेते हैं। किन्तु, संकर पौधे में युग्मक निर्माण के दौरान अनियमित अर्धसूत्री कोशिका विभाजन के होने के कारण बंध्य पराग का निर्माण होता है। मादा युग्मक कभी-कभी अर्धसूत्री विभाजन के दौरान अपने खंडीय कोशिका विभाजन के कारण अनियमित अर्धसूत्री विभाजन से बच जाते हैं, किन्तु नर पराग बंध्य हो जाते हैं।

3. पटसन तथा मेस्ता में अंतर-प्रजातीय संकरण में बाधाएं

पटसन (*कोरकोरस प्रजातियाँ*) और मेस्ता (*हिबिस्कस प्रजातियाँ*) भारतवर्ष तथा अन्य देशों में उगायी जाने वाली दो महत्वपूर्ण बास्ट रेशा उत्पादक फसलें हैं। पटसन और मेस्ता में अंतर-प्रजातीय संकरण के लिए अनेकों प्रयास किए गए हैं तथा कुछ सफल अंतर-प्रजातीय संकर प्राप्त होने के रिपोर्ट भी दर्ज हैं। ज्यादातर मामलों में, अंतर-प्रजातीय संकरण विफल हो गये है, क्योंकि पटसन (*कोरकोरस ओलिटोरियस* और *कोरकोरस कैप्सुलरिस* के बीच) तथा मेस्ता की प्रजातियों (*हिबिस्कस कैनाबिनस* और *हिबिस्कस सबडारिफा* के बीच) के ज्यादातर मामलों में अंतर-प्रजातीय संकरण सफल नहीं हुए हैं।

3.1 पटसन

पटसन में लक्षित आनुवंशिक सुधार की शुरुआत से कई शोधकर्ताओं ने पटसन में सफल अंतर-प्रजातीय संकर विकसित करने का प्रयास किया है। 1917 में फिनलो तथा 1944 में पटेल द्वारा *सी. ऑलिटोरियस* और *सी. कैप्सुलरिस*

के बीच अंतर-प्रजातीय संकर विकसित करने के कुछ प्रारंभिक प्रयास असफल रहे किन्तु संकर बीज प्राप्त नहीं किया जा सका। कुछ अन्य प्रयासों में अंतर-प्रजातीय संकरण के दौरान F1 बीज तो प्राप्त हुए किन्तु बीज सिकुड़े हुए, उनमें अंकुरण क्षमता का अभाव, आगामी पीढ़ियों में पृथकरण का अभाव तथा पूर्णतः मातृ फेनोटाइप के समान थे। पटसन में अंतर-प्रजातीय संकरणों की कुछ बाधाएं तालिका 1 में सूचीबद्ध हैं :

तालिका 1: पटसन के अंतर-प्रजातीय संकरणों में परिलक्षित बाधाएं

बाधा की प्रकार	विवरण	शोध सूची
संकरण के पहले	कोई फल नहीं बना	फिनलो (1917,1921,1923)
	कोई फल नहीं बना	हावर्ड (1924)
	कोई संकर नहीं	बनर्जी और दत्ता (1960)
संकरण के बाद	बीज वृद्धि की समयपूर्व समाप्ति	श्रीनाथ और कुंडू (1952)
	संकर बीज अंकुरित नहीं हो पाया	गणेशन एट अल। (1957)
	कुछ मृत बीज प्राप्त हुए	पटेल और दत्ता (1960)
	फल परिपक्वता प्राप्त नहीं कर सके	स्वामीनाथन एट अल। (1961)

3.2 मेस्ता

केनाफ (*हिबिस्कस कैनाबिनस*) तथा इसके जंगली प्रजातियों के अंतर-प्रजातीय संकरणों में बाधाएं मुख्यतः पूर्व-जाइगोटिक (भ्रूण बनाने के पूर्व) हैं। दो प्रजातियां, *एच. एसीटोसेला* तथा *एच. रेडियेटस* केनाफ के निकट कुटुम्ब हैं, जिनके जीनोम प्रायः केनाफ से संबंधित होते हैं। यह देखा गया है कि *एच. कैनबिनस* स्टिग्मा पर विदेशी पराग कण के अंकुरण की सीमा 50% के करीब होती हैं (तालिका 2)। मादा के स्टाइल में विदेशी पराग नलिका का उच्च घनत्व पराग नली के वृद्धि को कम कर देता है। ज्यादातर मामलों में, केनाफ में स्टाइलर बाधाएं अंतर-प्रजातीय संकरणों में रुकावट पैदा करता है। हालांकि, *एच. कैनाबिनस* और *एच. विटिफोलियस* के बीच की बाधा मुख्य रूप से स्टिगमेंटिक ही पायी हाती है। पराग नली की वृद्धि में कमी पराग नलिकाओं में कॉलोस के उच्च जमाव के कारण होता है। पराग नली में कॉलोज़ जमाव की मात्रा जंगली प्रजातियों पर निर्भर करता हैं। मेस्ता की *एच. रेडियेटस* तथा *एच. एसिटोसेला* जैसी जंगली प्रजातियों ने *एच. कैनाबिनस* के साथ उच्च संकरण क्षमता प्रदर्शित की है।

तालिका 2: *हिबिस्कस कैनाबिनस* के स्टिग्मा पर विदेशी पराग का अंकुरण

	एच. कैनाबिनस/ एच. कैनाबिनस	*एच.कैनाबिनस /एच. सुराटेंसिस*	*एच. कैनाबिनस/ एच. एसिटोसेला*	*एच. कैनाबिनस/ एच. रेडियेटस*	*एच. कैनाबिनस/ एच.विटिफोलियस*
पराग अंकुरण क्षमता (%)	86.3	47.6	50.7	65.9	6.0

4. अंतर-प्रजातीय संकरण के बाधाओं को दूर करने की तकनीक

अंतर-प्रजातीय संकरण के बाधाओं को दूर करने के लिए कई तकनीकों का उपयोग किया जाता है । इनमें निनलिखित मुख्यरूप से शामिल है :

4.1 पराग मिश्रण के साथ परागण

स्व और विदेशी परागकणों के मिश्रण का उपयोग करके विदेशी पराग को मादा के स्टिग्मा पर अंकुरित कराया जा सकता है। अंतर-प्रजातीय संकरण को सुनिश्चित करने के लिए स्व-परागकणों को विकिरण का उपयोग करके आनुवंशिक रूप से निष्क्रिय बना दिया जाता है।

4.2 संकरण को बढ़ावा देने वाले पदार्थ

ग्रोथ हार्मोन और इम्यूनोसप्रेसर्स सहित कुछ अन्य रसायन अंतर-प्रजातीय संकरण में बीज उद्‌भवन में सकारात्मक सुधार लाते हैं। गिबेरेलिन्स, ऑक्सिन्स तथा साइटोकाइनिन से मादा प्रजनन अंग को उपचारित करने पर संकरण दर में प्रत्यासित वृद्धि पायी जाती है। अंतर-प्रजातीय संकरण को बढ़ावा देने हेतु सैलिसिलिक एसिड तथा एन-कैप्रोइक अम्ल जैसे इम्यूनोस-प्रेसर रसायनों का भी उपयोग किया जाता है।

4.3 स्टिग्मा और स्टाइल की यांत्रिक अभियांत्रिकी

इस तकनीकी को स्टंप परागण या इंट्रास्टाइलर परागण के नाम से भी जाना जाता है। यह स्टिग्मा और स्टाइल के हिस्से को आंशिक अथवा पूर्ण रूप से हटाकर किया जाता है। एक गैर-संगत प्रजाति की आंशिक रूप से हटाई गई स्टाइल पर पराग के अंकुरण के साथ संगत वर्तिकाग्र का ग्राफ्टिंग एक अन्य तकनीक है जो स्टिग्मेटिक अवरोध को दूर करने में सहायक है।

4.4 इन-विट्रो परागण एवं संकरणइन-विट्रो कल्चर

तकनीक द्वारा इन-विट्रो परागण एवं संकरण को प्रक्रिया एक रोगाणु विहीन पात्र में किया जाता है। पराग को कटे हुए स्टिग्मा पर लगाया जा सकता है (स्टिग्मेटिक परागण) या सीधे मादा डिम्ब में रखा जा सकता है (जरायु नाल-परागण)।

4.5 भ्रूण संवर्धन

संकरण के पश्चात की बाधाओं से बचने के लिए भ्रूण संवर्धन सबसे आम तरीका है। यहां, संकर भ्रूण को मादा से हटा दिया जाता है और संकर पौधे को पुन: उत्पन्न करने के लिए इन-विट्रो तकनीकी से संवर्धित किया जाता है।

4.6 अंडाशय और डिम्ब संवर्धन

कुछ फसल प्रजातियों में, भ्रूण का गर्भपात बहुत प्रारंभिक अवस्था में ही हो जाता है, जिससे भ्रूण को अलग नहीं किया जा सकता है। ऐसे मामलों में, संकर भ्रूण प्राप्त करने के लिए डिम्ब के *इन-विट्रो* संवर्धन और अंडाशय का पूरा या कुछ हिस्से का संवर्धन बेहतर विकल्प हैं।

4.7 गुणसूत्र दोहरीकरण

गुणसूत्र का दोहरीकरण एक मुख्य तकनीक है, जो अंतर-प्रजातीय संकर में प्लोइडी स्तर के अंतर की समस्या को दूर करती है। इसमें अर्धसूत्री कोशीय विभाजन को रोककर ऑटो और एलो-पॉलीप्लोइड विकसित करने के लिए कोल्सीसिन का नियमित रूप से उपयोग किया जाता है।

5. पटसन तथा मेस्ता में अंतर-प्रजातीय संकरण की वर्तमान स्थिति

5.1 पटसन

शोधकर्ताओं जैसे स्वामीनाथन और अय्यर (1961), इस्लाम और राशिद (1961), चौधरी और मिया (1962) तथा राउत और नाइक (1983) ने *सी. कैप्सुलरिस* एवं *सी. ओलिटोरियस* के कुछ संकरणों के संततियों को प्राप्त करने की कोशिश की। इन दो प्रजातियों के बीच सफल संकर प्राप्त करने के लिए विभिन्न तकनीकों का प्रयोग किया गया, जैसे कि स्टिग्मा का कटाव, ग्राफ्टिंग और वृद्धि हार्मोन का अनुप्रयोग (तालिका 3) । हालांकि, प्रजनन बन्ध्यता के कारण इन संकरणों से संततियों की बनाए रखने में सफलता प्राप्त नहीं हो सका । हाल ही में, भाकृअनुप- क्रिजाफ ने *कोरकोरस कैप्सुलरिस* और *कोरकोरस ओलिटोरियस* से एक अलग संतान विकसित की है, जिसे कैपोली लाइनों के नाम से जाना जाता है।

तालिका 3: पटसन में अंतर-प्रजातीय संकरण बाधा पर काबू पाने में प्रयुक्त तकनीकें

इस्तेमाल की गई तकनीकें	शोधकर्ता सूची
विकिरणित पराग	मिया और शेख (1967)
वृद्धि हार्मोन अनुप्रयोग और भ्रूण संवर्धन	इस्लाम (1964)
वृद्धि हार्मोन अनुप्रयोग	अरंगजेब और खातून (1980)
आईएए पेस्ट का अनुप्रयोग	फ्रॉस्ट एंड बोस (1966)
प्लोइडी परिवर्तन	चौधुरी और मिया (1962)
पारस्परिक ग्राफ्टिंग; आईएए पेस्ट का अनुप्रयोग और भ्रूण कल्चर	होक एट अल. (1988)
ऑटोटेट्राप्लोइड जूट और जंगली जूट के संकरण	दत्ता एट अल. (1960)

जंगली कोरकोरस प्रजातियों से कृषित पटसन प्रजातियों में वांछित लक्षणों को स्थानांतरित करने के लिए संकरण के अनेकों प्रयास किये गये है। कुछ संकर संयोजनों से सफलता पूर्वक संकर संततियां विशेष रूप से सी. ओलिटोरियस × सी. एस्टुअन्स, सी. ओलिटोरियस × सी. ट्रिलोकुलरिस तथा सी. ओलिटोरियस × सी. ट्राइडेंस में विकसित भी किए गए हैं। (तालिका 4)।

तालिका 4: पटसन में अंतर-प्रजातीय संकरण के प्रयास

संकर संयोजन	शोधकर्ता सूची
सी. सिलिकोसस और सी. कैप्सुलरिस	पटेल और दत्ता, 1960
सी. सिडोइड्स × सी. सिलिकोसस	दत्ता और सेन, 1961
सी. एस्टुअन्स × सी. कैप्सुलरिस	इस्लाम और सत्तार, 1961 अरंगजेब और खातून, 1980
सी. ट्रिलोकुलरिस × सी. कैप्सुलरिस	*फारुकी, 1962*
सी. कैप्सुलरिस × सी. ट्रिलोक्यूलिस	*चौधरी और मिया, 1962*
सी. ओलिटोरियस × सी. ट्रिलोकुलरिस	बसाक 1966; अरंगजेब 1994; भाकृअनुप-क्रिजफ 2014, 2021
सी. ओलिटोरियस × सी. एस्टुअन्स	इस्लाम और हक 1967, अरंगजेब और खातून 1980, भाकृअनुप-क्रिजफ, 2015, 2018, 2021
सी. ओलिटोरियस × सी. ट्राइडेंस	भाकृअनुप-क्रिजफ, 2015

सी. कैप्सुलरिस x *सी. ओलिटोरियस* का पहला सफल संकर भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर कोलकाता में जेआरसी 212 तथा जेआरओ 524 (चित्र 2) के संकरण से प्राप्त किया गया था। वर्ष 2021 में पृथक संतति को आगे बढ़ाते हुए पुनर्सन्योजक- इनब्रेड (कैपोली समूह) की एक श्रृंखला विकसित की गई और संयोजक-इनब्रेड-8 (आरआईएल 8) पीढ़ी तक उन्नत किया गया। इन अग्रणी समूह के कुछ प्रभेदों ने रेशा उपज तथा उपज संबंधी अन्य लक्षणों के लिए उच्च उत्कृष्टता का प्रदर्शन किया। गैर-शाखायुक्त आदर्श लक्षणों तथा सामान्य बीज अंकुरण के साथ कुल 16 उत्कृष्ट कैपोली प्रभेदों की पहचान की गई, जिनमें से तीन प्रभेदों ने जेआरओ 524 की तुलना में 50% से भी अधिक रेशा उपज दर्ज कराया। इसके अतिरिक्त *सी. एस्टुअन्स* तथा *सी. ट्रिलोकुलरिस* जैसी जंगली प्रजातियों से भी कई वांछित गुण स्थानांतरित किए जा रहे हैं। एक प्रभेद आरएस-6, जो कि *सी. एस्टुअन्स* और *सी. ओलिटोरियस* के संकरण से विकसित की गई, ने तना सड़न रोग के प्रति उच्च प्रतिरोध के साथ-साथ पूर्व-पुष्पन (समय से पहले) के प्रति भी प्रतिरोधिता दर्ज कराया है। एक अन्य प्रभेद जेआरओवी-5 को *सी. ट्रिलोक्यूलिस* तथा *सी. ओलिटोरियस* के संकरण से विकसित किया गया है।

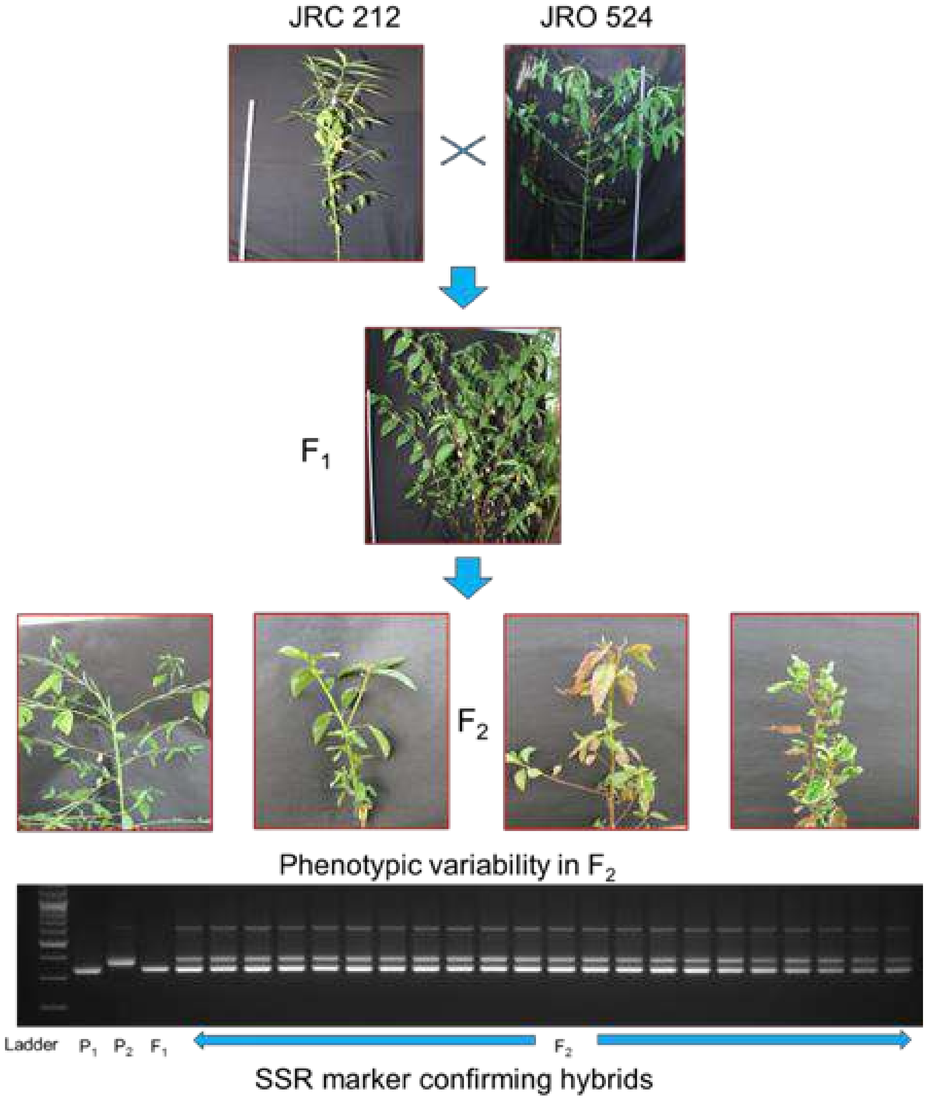

चित्र 1: *सी. कैप्सुलरिस* x *सी. ओलिटोरियस* का अंतर-प्रजातीय संकरण (कैपोली प्रक्रिया)

5.2 मेस्ता

मेस्ता में भी अंतर-प्रजातीय संकरण के कुछ सफल प्रयास दर्ज है। खेती वाली दो प्रजातियां, हिबिस्कस कैनाबिनस (केनाफ) तथा हिबिस्कस सबदरिफा (रोजेल) का अब तक अंतर-प्रजातीय संकर नहीं बनाया जा सका है क्योंकि इनके अलग जीनोम और अलग प्लोइडी के कारण ये संकरण के प्रति सक्षम नहीं हैं। मेंन्ज़ेल और विल्सन द्वारा वर्ष 1969 में एच. कैनाबिनस x एच. एसिटोसेला के कुछ सफल संकरण दर्ज की गई है। आईसीएआर-क्रिजफ के वैज्ञानिकों द्वारा भी *एच. कैनाबिनस* x *एच. सुरटेंसिस, एच. कैनाबिनस* x *एच. एसिटोसेला* और *एच. कैनाबिनस* x *एच. रेडियेटस* के संकर पौधे विकसित किये गये है। संकर पौधे मध्यवर्ती प्रकार के थे और इन्हें रूपात्मक तथा आणविक दोनों मार्कर का उपयोग करके चिन्हित किया जा चुका है (चित्र 2)। *एच. कैनाबिनस* और *एच. एसिटोसेला* का अंतर-प्रजातीय संकर मादा के रूप में किसी भी प्रजाति का उपयोग करके प्राप्त किया जा सकता है। सभी संकर पौधों ने उच्च बन्ध्यता का प्रदर्शन किया। सभी संकरों के परागकोष अल्पविकसित पाये गए। संकर पौधे अर्ध-बहुवार्षिक प्रकृति के तथा तना कटिंग से वानस्पतिक संवर्धन के प्रति संवेदनशील पाये गये। इसके अतिरिक्त दोनों माता-पिता के पराग कणो के द्वारा हाथ के परागण से भी कोई व्यवहार्यजन बीज प्राप्त नहीं होना, यह दर्शाता है कि मादा युग्मक या एंडोस्पर्म का विकास भी इन संकरों में सामान्य रूप से नहीं हो सका।

6. भविष्य की संभावनाएं

अंतर-प्रजातीय संकरण एक प्रभावशाली पादप प्रजनन विधि है, लेकिन पटसन तथा मेस्ता के प्रजातियों के आनुवंशिक सुधार में इसके अनुप्रयोग में आनुवंशिक अवरोधों के कारण इस पादप प्रजनन विधि का दोहन नहीं किया जा सका है। ज्यादातर मामलों में, यहां तक कि सफल अंतर-प्रजातीय संकर तथा उनकी संततियां भी कृषित प्रजातियों से मिलती-जुलती हैं, जिनमें जंगली प्रजातियों से बहुत कम रूपात्मक विशेषताएं मिलती हैं। हाल के शोधों में कई आशाजनक परिणाम सामने आ रहे हैं, जैसे पटसन की कैपोली प्रभेदों का विकास तथा जंगली प्रजाति सी. एस्टुअन्स से कृषित पटसन में वांछनीय लक्षणों का स्थानांतरण। हालांकि आणविक विश्लेषण ने साबित कर दिया कि ये पौधे वास्तविक अंतर-प्रजातीय संकर हैं, फिर भी उनकी रूपात्मक विशेषताएं केवल मातृ प्रजातियों के ही समान हैं। इन सफल प्रयासों के आधार पर, यह उम्मीद की जा सकती है कि निकट भविष्य में पटसन तथा मेस्ता के पूर्व-प्रजनन और प्रजनन कार्यक्रम में अंतर-प्रजातीय संकरण महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे।

चित्र 2: एच. कैनाबिनस के साथ एच. सुरटेंसिस और एच. रेडियेटस के संकर

पटसन आधारित फसल प्रणाली में एकीकृत पोषक-तत्व प्रबंधन

एस.पी. मजुमदार, ए.आर. साहा, बि. मजुमदार, आर. साहा, एस. सरकार, सौरव घोष, अल्का पासवान, एवं बिश्वजित बिश्वास

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि पटसन पूर्वी भारतीय राज्यों की एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक फसल है। अनुकूल जलवायु के कारण आज भारत में 9 लाख 70 हजार है. भूमि पर पटसन का उत्पादन किया जा रहा है। लगभग 90 प्रतिशत तक पटसन का उत्पादन पश्चिम बंगाल, बिहार एवं असम में किया जाता है। भारत को निश्चित रूप से इस फसल पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है, विशेष रूप से कम लागत के साथ उपज और गुणवत्ता में इसकी वृद्धि। पटसन की उपयोगिता के कारण कृषि में इसे बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

पटसन-धान-सब्जी फसल प्रणाली पश्चिम बंगाल में सबसे अधिक लोकप्रिय फसल प्रणाली में से एक है, परंतु इस फसल चक्र के लगातार अपनाने से मृदा में बहुत सारे प्रमुख पोषक तत्वों की कमी देखी गयी है। इस फसल प्रणाली का निरंतर उपयोग मिट्टी की उर्वरता, भौतिक और रासायनिक गुणों को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती हैं, जिससे मृदा का स्वास्थ खराब हो जाता है और फसल उत्पादकता में गिरावट आ जाती है। खाद्य सुरक्षा में वृद्धि और गरीबी उन्मूलन के लिए खाद्य फसलों की उत्पादकता में सुधार की आवश्यकता है। इस प्रकार, कृषि उत्पादकता बढ़ाने और पर्यावरण की सुरक्षा के लिए प्रभावी और कुशल रूप से मृदा की उर्वरता और पोषक तत्व प्रबंधन प्रणालियों का विकास अनिवार्य है।

"मृदा उर्वरता" का तात्पर्य उसकी क्षमता से है, जो पौधे की वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्वों को संतुलित मात्रा व उपलब्ध अवस्था में आपूर्ति करता है। साथ ही मृदा किसी दुष्प्रभाव या विषैले प्रभाव से पूर्णतया मुक्त हो। मृदा उर्वरता से हमें उसमें पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता के स्तर का बोध होता है। पोषक तत्वों की मात्रा मृदा परीक्षण के अधार पर प्रयोग करनी चाहिए। पोषक तत्वों की असंतुलित मात्रा न केवल कम व निम्न गुणवत्ता का उत्पादन देती है, बल्कि मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों के भंडार का भी अत्यधिक दोहन (over exploits) करती है। फसल की उत्पादकता में वृद्धि करने के लिए मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का उचित उपयोग करना बहुत आवश्यक है, परंतु जहां मृदा परीक्षण संभव नहीं, वहां फसलों की खेती में रासायनिक उर्वरकों की सामान्य अनुशंसा के साथ उपयोग किया जा सकता है।

मृदा-उर्वरता सामान्यतः मिट्टी की भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों पर निर्भर करती है। देश के अनेक कृषि क्षेत्रों में पौधों के लिए तीन मुख्य पोषक तत्वों - नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश का प्रयोग एक अनिश्चित अनुपात में किया जा रहा है। जबकि इनका आदर्श अनुपात 4:2:1 होना चाहिए। किसानों द्वारा खेतों में लगातार एक ही प्रकार के उर्वरकों का प्रयोग करने से मृदा में कुछ सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी आ रही है।

हमारे देश की मृदाओं में नाइट्रोजन की कमी सर्वव्यापी है। नाइट्रोजन के साथ ही कई क्षेत्रों में फास्फोरस की भी व्यापक कमी देखी गई है। विभिन्न सूक्ष्म पोषक तत्वों में जस्ते (ज़िंक) व लौह तत्व की कमी देश के अनेक क्षेत्रों में मुख्य रूप से देखी गई है। सूक्ष्म-पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए सूक्ष्म-पोषक तत्वों को मृदा में सम्मिलित कर अथवा पर्णीय छिड़काव द्वारा दूर किया जा सकता है। संतुलित पोषण प्रबंधन से न केवल उत्पादन में वृद्धि होती है, अपितु पोषक तत्व उपयोग क्षमता व जल उपयोग क्षमता को भी बढ़ाया जा सकता है, जो अंततः कृषि के लाभ को बढ़ाता है।

समन्वित पोषण प्रबंधन से तात्पर्य यह है कि पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने वाले सभी संभव स्रोतों जैसे रासायनिक, जैविक, जैविक उर्वरक इत्यादि है। फसल अवशेष का कुशलतम समायोजन कर फसलों को संतुलित पोषण दिया जाना चाहिए। ये सभी स्रोत पर्यावरण हितैषी हैं और इनसे मुख्य पोषक तत्व भी पौधों को धीरे-धीरे व लम्बे समय तक प्राप्त होते रहते हैं। सघन फसल प्रणाली के अंतर्गत फसलें मृदा से जितने

पोषक तत्वों का अवशोषण करती हैं, उनकी क्षतिपूर्ति मृदा स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए अति आवश्यक है।

मृदा परीक्षण के आधार पर मुख्य, गौण और सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जस्ता, लौह, तांबा, बोरोन, मौलिब्डेनम, मैगनीज व क्लोरीन की बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है। यदि फसल अवशेष व अन्य जैविक खादों का नियमित प्रयोग होता रहे, तो पौधों को इन तत्वों के अतिरिक्त पोटाश की भी कमी नहीं होती है। फास्फोरस की कमी जीवाणु खाद द्वारा बीज का जीवाणु उपचार करके पूरी की जा सकती है।

पटसन उगाने के लिए खेत को तैयार करते समय, प्रारम्भिक तौर पर ही लगभग 5 से 8 टन गोबर खाद प्रति है. के हिसाब से मृदा में मिलाना चाहिए। इसके उपरांत फसल की अच्छी उपज के लिए 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति है. की दर से प्रयोग कर सकते हैं। खेतों में पहली बुवाई के 20-25 दिनों के बाद, 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन के साथ पूरी मात्रा में फॉस्फोरस एवं पोटाश को डाला जा सकता है। शेष नाइट्रोजन का छिड़काव हम 2 बार बराबर भागों में क्रमश: बुवाई के 21-30 और 40-45 दिनों के अंतराल पर कर सकते हैं। पटसन की खेती के लिए सल्फर (गंधक) एक महत्वपूर्ण तत्व है। पटसन के पौधें अपनी जड़ों के माध्यम से सल्फर को सल्फेट के रूप में अवशोषित करते हैं। मृदा में रहने वाले जीवाणु इसे सूक्ष्मजीवी प्रक्रिया के माध्यम से पौधे के लिए उपलब्ध कराते हैं। इसलिए हमेंशा सलाह दी जाती है कि मौलिक सल्फर @ 30 कि.ग्रा./है. फसल की बुवाई से 3-6 सप्ताह पहले लगाएं। इससे पटसन की उत्पादकता में वृद्धि होती है।

धान एक ऐसी फसल है, जिसमें पोषक तत्वों की आवश्यकता अधिक होती है। सामान्य तौर पर धान की फसल के लिए 80 कि.ग्रा./है. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा./है. फास्फोरस एवं 40 कि.ग्रा./है. पोटाश की सिफारिश की जाती है। साथ ही धान की रोपाई के 25 से 30 दिन पहले प्रति है. 10 से 15 टन गोबर की खाद का इस्तेमाल मृदा के लिए काफी लाभप्रद माना जाता है। गोबर खाद को पूरे खेत में अच्छी तरह से मिलाने के पश्चात एक जुताई कर सकतें हैं। इससे खेत के हर हिस्से में पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो जाते है।

धान की विभिन्न किस्मों के मुताबिक ही खाद एवं उर्वरक का प्रबंधन किया जाता है। धान की कम अवधि वाली किस्मों के लिए प्रति है. 100 कि.ग्रा. ग्राम नाइट्रोजन, 40 ग्राम फास्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. ग्राम पोटाश डालना चाहिए। वहीं धान की मध्यम अवधि की किस्मों के लिए प्रति है. 150 कि.ग्रा. ग्राम नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. ग्राम फास्फोरस तथा 50 कि.ग्रा. ग्राम पोटाश पर्याप्त होता है। लंबी अवधि की किस्मों के लिए प्रति है. 150 कि.ग्रा. ग्राम नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. ग्राम फास्फोरस तथा 80 कि.ग्रा. ग्राम पोटाश की आवश्यकता होती है। धान की रोपाई के समय फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा डाल देना चाहिए। वहीं नाइट्रोजन को चार बराबर भागों में बांटकर अलग-अलग समय पर डालना चाहिए। नाइट्रोजन की पहली खुराक रोपाई के समय, दूसरी खुराक रोपाई के 40-60 दिनों बाद, तीसरी खुराक फूल आने की अवस्था (45-90 दिनों बाद) तथा चौथी व अंतिम खुराक फसल की फूलगुच्छा अवस्था (75-120 दिनों बाद) में देना चाहिए। ध्यान देने योग्य बात यह है कि टॉप ड्रेसिंग (ऊपर से छिड़काव) के समय खेत में पानी की निकासी कर देना चाहिए। आवश्यकता पडऩे पर 24 घंटे के उपरांत ही खेत में पानी भरना चाहिए।

टमाटर भारत में पूरे वर्ष उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण फसल है। अपने पोषक गुणों और विविध उपयोगों के कारण टमाटर सबसे महत्वपूर्ण सब्जी वाली फसल है। रोपाई के पहले गोबर की खाद 25 से 30 टन प्रति है. की दर से खेत में अच्छी तरह मिला लेनी चाहिए। पहली जुताई के दौरान 2 कि.ग्रा. एजोफॉस तथा 100 कि.ग्रा. नीम की खली अथवा 2 कि.ग्रा. सान्द्र नीम प्रति एकड़ खेत में डालकर उपयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित विकल्पों में से किसी एक का प्रयोग किया जा सकता है।

(क) 25 कि.ग्रा. यूरिया, 75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट और 10 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश; अथवा।

(ख) 15-16 कि.ग्रा. यूरिया, 25 कि.ग्रा. डीएपी और 10 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश; अथवा।

(ग) 20 कि.ग्रा. यूरिया, 23 कि.ग्रा. एनपीके (10-26-28) और 35 कि.ग्रा सिंगल सुपर फॉस्फेट।

रोपाई के 21-40 दिनों के बाद 12-15 कि.ग्रा.यूरिया और 5

कि.ग्रा.पोटाश प्रति बीघा की दर से छिड़काव करना लाभप्रद होता है। प्रत्येक 3-4 फसल चक्र के बाद मृदा में होने वाले सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए रोपाई से पहले मृदा में 3.5 कि.ग्रा. जिंक-सल्फेट, 1.5 कि.ग्रा. बोरेक्स और 75 कि.ग्रा. मोलिब्डेनम प्रति एकड़ डालना चाहिए। यदि पत्तियों पर छिड़काव करना आवश्यक हो, तो 2 कि.ग्रा. प्रति लीटर के दर से रोपाई के 1.5 महीने के बाद पर्ण छिड़काव किया जा सकता है। फलों को सड़ने और फटने से बचाने के लिए कैल्शियम क्लोराइड (0.2 प्रतिशत) और बोरेक्स (0.3 प्रतिशत) का दो बार छिड़काव करना अत्यंत लाभकारी पाया गया है।

फूलगोभी हमारे देश में एक पौष्टिक और लोकप्रिय सब्जी है। सही तरीके से और व्यापक रूप से की गयी फूलगोभी की खेती हमारे लिए आय का एक बढ़िया साधन बन सकती है। हालांकि यह आम तौर पर सर्दियों की सब्जी है लेकिन फूलगोभी की कई उन्नत क़िस्मों की उपलब्धता के कारण लंबे समय तक ये बाज़ार में पाये जाते हैं।

फूलगोभी की पहली जुताई के समय खेत में 30-40 क्विंटल सूखा गोबर या खेत की सड़ी हुई खाद या 15-20 क्विंटल केंचुआ खाद मिट्टी में मिलाना चाहिए। जैविक खाद डालने से 8-10 दिन पहले 1 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा विरिडी और 1 कि.ग्रा. स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस को ढेर में मिलाकर बोरे से ढककर रख दें। समय-समय पर इसमें थोड़ा पानी छिड़कें और फिर इस मिश्रण का उपयोग करने से मृदा जनित रोग को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है। जैविक खाद को 2 कि.ग्रा. एजोफॉस प्रति एकड़ और 50-100 कि.ग्रा. नीमखोल के साथ मिश्रित करना चाहिए। अंतिम जुताई के समय निम्नलिखित में से किसी एक अनुप्रोयोग का चयन कर सकते हैं :

(क) 22 कि.ग्रा. यूरिया, 85 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट और 12 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश, अथवा।

(ख) 10 कि.ग्रा. यूरिया, 30 कि.ग्रा. डीएपी और 12 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश; अथवा।

(ग) 20 कि.ग्रा. यूरिया, 10 कि.ग्रा. एनपीके (10-26-28) और 10 किग्रा सी.सी. सिंगल सुपर फॉस्फेट।

बुवाई के 21 और 42 दिनों बाद 10 कि.ग्रा. यूरिया और 5 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति एकड़ खाद के रूप में डाला जा सकता है। इसके अलावा मृदा की उर्वरता को बढ़ाने के लिए 3.5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट, 1.5 कि.ग्रा. बोरेक्स और 75 ग्राम अमोनियम मोलिब्डेट का भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

पत्तागोभी एक ऐसा पौधा है जो पोषक-तत्वों से भरपूर, अच्छी जलनिकासी वाली मृदा में बढ़ता है। पत्ता गोभी सर्दियों की सब्जियों में से एक है। विभिन्न प्रकार के खनिजों के अलावा गोभी विटामिन ए और विटामिन सी से भरपूर होती है। पत्ता गोभी अब पूरे साल पायी जाती है। इसके अच्छी उपज के लिए मृदा को 3-4 गहरे जुताई से तैयार करना चाहिए और साथ ही मृदा में पर्याप्त मात्रा में जैविक खाद, एजोफॉस, ट्राइकोडर्मा और स्यूडोमोनास जैविक कीटनाशकों को मिलाया जाना चाहिए। अंतिम जुताई के समय निम्नलिखित उर्वरकों में से किसी एक विकल्प का प्रयोग कर सकते हैं :

(क) 18 कि.ग्रा. यूरिया, 100 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट और 15 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश, अथवा

(ख) 15 कि.ग्रा. यूरिया, 35 कि.ग्रा. डीएपी और 15 म्यूरेट ऑफ पोटाश, अथवा

(ग) 25 कि.ग्रा. यूरिया, 15 कि.ग्रा. एनपीके (10-26-28) और 80 किग्रा सिंगल सुपर फॉस्फेट

प्रति एकड़ में बुवाई के 20-25 और 40-45 दिनों के बाद 15 कि.ग्रा. यूरिया और 8 कि.ग्रा. पोटाश डालना चाहिए। इसके साथ ही इसमें भी हम 3.5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट, 1.5 कि.ग्रा. बोरेक्स और 75 ग्राम अमोनियम मोलिब्डेट प्रति बीघा का इस्तेमाल मृदा की उर्वरता बढ़ाने के लिए कर सकते हैं।

बैंगन की खेती अधिक ऊंचाई वाले स्थानों को छोड़कर भारत में लगभग सभी क्षेत्रों में प्रमुख सब्जी की फसल के रूप में की जाती है। पौष्टिकता की दृष्टि से इसे टमाटर के समकक्ष समझा जाता है। इस फसल को उगाने के लिए मृदा में 25-30 क्विंटल गोबर की खाद या कम से कम प्रति बीघा 100 कि.ग्रा. नीम की खली का उपयोग कर खेत की जुताई करनी चाहिए। इसके साथ 2 कि.ग्रा. एजोफॉस प्रति बीघा दर से मिलाना चाहिए। निम्नलिखित में से किसी एक विकल्प को चुना जा सकता है :

(क) 25 कि.ग्रा. यूरिया, 75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट और 10 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश

(ख) 15 कि.ग्रा. यूरिया, 25 कि.ग्रा. डीएपी और 10 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश

(ग) 22 कि.ग्रा. यूरिया, 25 कि.ग्रा. एनपीके (10-26-28) और 35 किग्रा सिंगल सुपर फॉस्फेट

रोपाई के 21-40 दिन बाद 15 कि.ग्रा. यूरिया और 5 कि.ग्रा. पोटाश प्रति एकड़ खाद के रूप में डाला जा सकता है। इसके साथ ही मृदा की उर्वरता बढ़ाने के लिए 3.5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट, 1.5 कि.ग्रा. बोरेक्स और 75 ग्राम अमोनियम मोलिब्डेट प्रति एकड़ का इस्तेमाल कर सकते हैं।

भिंडी एक लोकप्रिय सब्जी है। सब्जियों में भिंडी का प्रमुख स्थान है जिसे लोग लेडीज फिंगर या ओकरा के नाम से भी जानते हैं। प्रति बीघा में 25-30 क्विंटल कम्पोस्ट का प्रयोग कर 3 से 4 बार खेत की जुताई की जा सकती है। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित विकल्पों में से किसी एक का प्रयोग किया जा सकता है।

(क) 25 कि.ग्रा. यूरिया, 75 कि.ग्रा. सीसी। फॉस्फेट और 10 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश

(ख) 15 कि.ग्रा. यूरिया, 26.5 कि.ग्रा. डीएपी और 10 कि.ग्रा. म्यूरेट पोटाश

(ग) 20 कि.ग्रा. यूरिया, 23 कि.ग्रा. एनपीके (10-26-28) और 35 किग्रा सीसी फास्फेट

बुवाई के 21-40 दिन बाद 12 कि.ग्रा. यूरिया और 5 कि.ग्रा. म्यूरेट पोटाश खाद के रूप में डाला जा सकता है। जैव उर्वरक वर्तमान में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। विभिन्न सब्जियों की फसलों जैसे टमाटर, बैंगन, फूलगोभी, पत्तागोभी आदि में प्रति एकड़ 1 कि.ग्रा. एजोटोबैक्टर और 1 कि.ग्रा. पीएसबी दिया जाता है। रोपाई से पहले बीजों को इन जैव उर्वरकों में 20-30 मिनट तक भिगोना चाहिए। मृदा की जांच के बाद सही तरीके से खाद डालने से सब्जियों की पैदावार बढ़ेगी और मृदा स्वस्थ रहेगी।

"राष्ट्र की भाषा अंग्रेजी को राष्ट्रभाषा बनाना देश में 'ऐसपेरेण्टों' को दाखिल करना है। अंग्रेजी को राष्ट्रीय भाषा बनाने की कल्पना हमारी निर्बलता की निशानी है"

- महात्मा गाँधी

पटसन खेती में भूजल की स्थिति एवं भूजल पुनर्भरण

देबारती दत्ता, ए.के. सिंह, सौरव घोष, सब्यसाची मित्र एवं गौरांग कर

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

भूजल हमारे सबसे मूल्यवान संसाधनों में से एक है। भूजल वर्षा के रूप में शुरू होता है, जैसे सतही जल। एक बार पानी जमीन में प्रवेश कर जाता है, यह आगे बढ़ता रहता है। अमेरिकी भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण (USGS) के अनुसार, पृथ्वी के ताजे पानी का केवल 1.2% सतही जल है। इसका लगभग दो-तिहाई हिस्सा हिमनद और ध्रुवीय क्षेत्रों में हिम चादरों और हिम टोपियों के रूप में जमा है; जबकि भूजल केवल 30% हिस्सा है। भूजल या भूगर्भिक जल का तात्पर्य यह है कि जो जल जमीन के निचली सतह में पाया जाता है। भूजल पीने, कृषि उत्पादन तथा झीलों, नदियों एवं नालों के पुनर्भरण के लिए ताजा पानी प्रदान करता है। भारत के 1.38 अरब निवासियों की 85% पेयजल और 60 प्रतिशत से अधिक सिंचित कृषि भूजल पर निर्भर करती है। गाँवों में, जहाँ आज भी 80 प्रतिशत लोगों को नल का पानी उपलब्ध नहीं है, पेयजल के लिये भूमिगत जल पर ही निर्भर रहना पड़ता है। भारत दुनिया का सबसे ज्यादा भूजल उपयोग करने वाला देश है जो संयुक्त राज्य अमेरिका से दोगुना और पश्चिमी यूरोप का 6 गुना है। भारत सालाना 600 अरब क्यूबिक मीटर (158 खरब गैलन) से अधिक पानी का उपयोग करता है। उस राशि में से 245 अरब क्यूबिक मीटर जलभृतों (aquifers) से निकाला जाता है। पूरे देश के लिए भूजल निकासी का औसत चरण लगभग 63% है। भूजल, पुनर्भरण वर्षा, भू-आकृति, मिट्टी के प्रकार और भूमि उपयोग, तेजी से शहरीकरण, जलवायु और क्षेत्र के भूगर्भीय कारक पर निर्भर करता है। पिछले कुछ वर्षों में, भूजल पुनर्भरण में कमी आई है, जिसके परिणाम स्वरूप भारत के कई हिस्सों में पानी की गंभीर समस्या हो गई है। दिन प्रति दिन, हमारे देश में सतही जल का आभाव होता जा रहा है और भूजल का कृषि के लिए उपयोग बढ़ता जा रहा है जोकि हमारे देश की खेती के लिए बहुत बड़ा संकट बन सकता है। देश में कुल 6881 मूल्यांकन इकाइयों (ब्लॉकों/मंडलों/तालुका) में से, 1186 इकाइयों (17%) को 'अति-शोषित' के रूप में वर्गीकृत किया गया है, जो भूजल निष्कर्षण को वार्षिक पुनःपूर्ति योग्य भूजल पुनर्भरण से अधिक दर्शाता है।

केंद्रीय भूजल बोर्ड, भारत सरकार (CGWB, Govt. of India) के एक रिपोर्ट के अनुसार लगभग 58 प्रतिशत भूजल पुर्नभरण में मानसून वर्षा का योगदान होता है। हमारे देश में विभिन्न कार्यक्षेत्र जैसे घरेलु पेयजल, उद्योग और कृषि में भूजल की बढती मांग को देखते हुए लगता है कि भूजल का प्रबंधन जरूरी बनता जा रहा है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के एक रिपोर्ट के अनुसार पाया गया है कि भारत की भूजल स्तर 1-2 मीटर प्रति वर्ष की दर से घटती जा रही है। भूजल के उपयोग को कम करने के लिए सतह जल का संग्रह जरूरी है, ताकि संसाधन का उचित प्रबंधन हो सके और उसकी गुणवत्ता बरक़रार रखने में सहायक हो। इसे सतह और भूजल संसाधनों के प्रबंधन के एकीकृत दृष्टिकोण से हल किया जा सकता है। भूजल उपयोग योजना और एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन रणनीतियों के विकास के लिए भूजल पुनर्भरण क्षमता का आकलन आवश्यक है। चूंकि अधिक से अधिक कृषि क्षेत्र भूजल की कमी का सामना कर रहे हैं, व्यवसायों और समुदायों को इन महत्वपूर्ण जल संसाधनों के प्रबंधन और संरक्षण में अधिक सक्रिय भूमिका निभाने की आवश्यकता होगी।

भूमिगत जल के गिरते स्तर का कारण

तेजी से बढ़ती जनसंख्या, बढ़ता औद्योगिकीकरण, फैलते शहरीकरण के अलावा वैश्विक तापमान से उत्पन्न जलवायु परिवर्तन भी भूमिगत जल के गिरते स्तर के लिए जिम्मेदार हैं। बढ़ती आबादी के कारण जहाँ जल की आवश्यकता बढ़ी है, वहीं प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता भी समय के साथ कम होती जा रही है। कुल आकलनों के अनुसार सन 2000 में जल की आवश्यकता 750 अरब घन मीटर (घन किलोमीटर) थी। सन 2025 तक जल की यह आवश्यकता 1050 अरब घन मीटर तथा सन 2050 तक 1180 खरब घन मीटर तक बढ़

जाएगी। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय देश में प्रति व्यक्ति जल की औसत उपलब्धता 5000 घन मीटर प्रति वर्ष थी। सन 2000 में यह घटकर 2000 घन मीटर प्रतिवर्ष रह गई। सन 2050 तक प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 1000 घन मीटर प्रतिवर्ष से भी कम हो जाने की संभावना है। स्पष्ट है कि बढ़ती जनसंख्या के कारण जल की उपलब्धता कम हो जाने के चलते भूमिगत जल पर भी दबाव बढ़ा, जिसका परिणाम इसके गिरते स्तर के रूप में सामने आया।

पहले गाँव और कस्बे में तालाब बहुत होते थे जिनकी परम्परा अब लगभग समाप्त हो चुकी है। इन तालाबों का जल भूगर्भ में समाहित होकर भूजल को संवर्द्धित करने का कार्य करता था। लेकिन, बदलते समय के साथ लोगों ने तालाबों को नष्ट करने का काम किया। वैसे वर्षा का क्रम बिगड़ने से भी काफी तालाब सूख गए। धरातल से विभिन्न स्रोतों से प्राप्त जल के भूगर्भ में पहुँचने के कारण ही भूजल की सृष्टि होती है। इन स्रोतों में एक है वर्षा का जल जो पाराम्य शैलों से होकर रिस-रिसकर अन्दर पहुँचता है। शैल रंध्रों के बन्द हो जाने से जल रिसकर नीचे नहीं जा पाता है। वैश्विक तापमान से उत्पन्न जलवायु परिवर्तन से वर्षा का जल-चक्र गड़बड़ हो गया है जिससे वर्षा की मात्रा कम हो गई है। दूसरी ओर, वृक्षों को अन्धाधुन्ध काटने से वनक्षेत्र कंक्रीट के जंगलों में तब्दील होते जा रहे हैं और भूजल का पुनर्भरण नहीं हो पा रहा है।

पटसन उगाने वाले क्षेत्रों में भूजल की स्थिति

पटसन मुख्य रूप से भारत के छोटे और सीमांत किसानों द्वारा उगाया जाता है और इस फसल का उत्पादन मानसून पूर्व (pre-monsoon) वर्षा के परिमाण और वितरण के साथ अत्यधिक सम्बन्ध रहता है। भारत में लगभग 15% पटसन क्षेत्र सिंचित है और अधिकांश क्षेत्र वर्षा आधारित है। पटसन की रेशा उपज को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों में, आसन्न जलवायु परिवर्तन के बीच जल प्रबंधन प्राथमिक रखता है। सूखा और जलजमाव दोनों ही फसल के लिए हानिकारक हैं। मार्च से मई तक, पटसन की फसल आमतौर पर 75-80 दिनों के एक अनिश्चित वर्षा निर्भर चरण से गुजरती है, जो अक्सर कम फसल उपज का कारण बनती है। पिछले 25 वर्षों में, जलवायु परिवर्तन के कारण, पटसन उगाने की अवधि के दौरान मानसून पूर्व वर्षा (मार्च-जून) की कमी 40-50% के क्रम में पाई गई है। उचित सिंचाई से प्राप्त लाभों को अच्छी तरह से प्रलेखित किया गया है, जिससे उपज में वृद्धि होती है, फसल की गुणवत्ता में सुधार होता है, फसल सूक्ष्म जलवायु संशोधन, उर्वरकों की दक्षता में वृद्धि आदि होती है। सिंचाई का प्रयोग मानसून पूर्व अवधि के दौरान फसल की रेशा उपज में 25-34% की वृद्धि हुई। इसलिए, पटसन की उपज और आर्थिक लाभ बढ़ाने के लिए जीवन रक्षक सिंचाई के साथ-साथ जल निकासी के माध्यम से मिट्टी में पर्याप्त नमी बनाए रखना अत्यंत महत्वपूर्ण है।

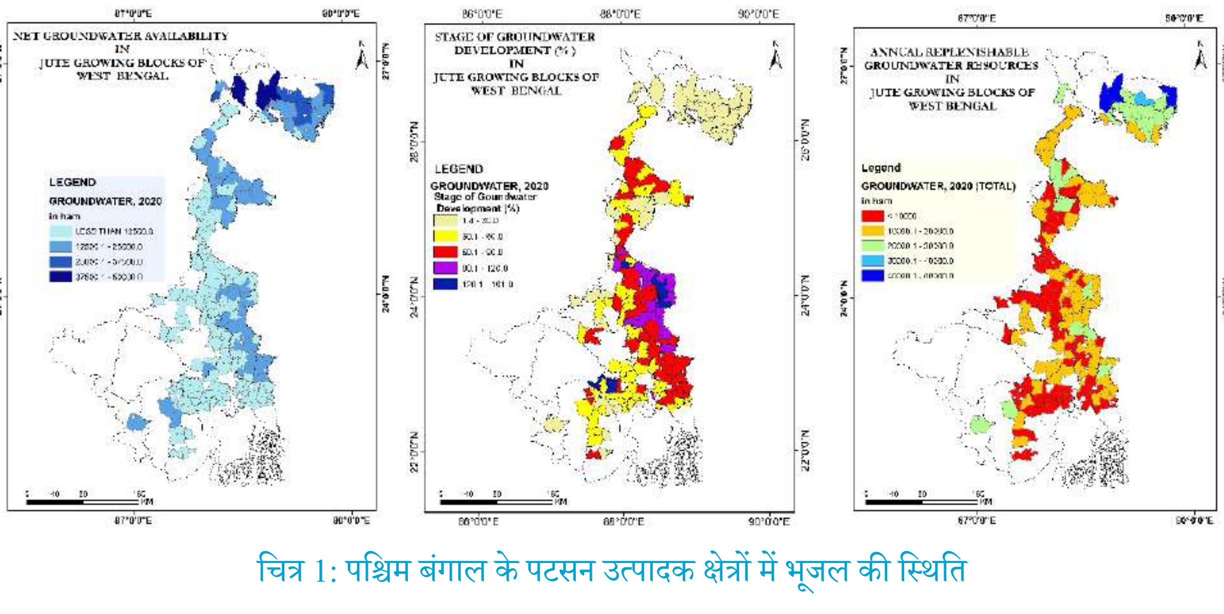

चित्र 1: पश्चिम बंगाल के पटसन उत्पादक क्षेत्रों में भूजल की स्थिति

पश्चिम बंगाल के अधिकांश पटसन उत्पादक क्षेत्रों में किसानों द्वारा बोरो धान उगाया जाता है। यह पूरी तरह से सिंचित फसल है और बोरो धान की खेती के विस्तार से भूजल सिंचाई में तेजी से वृद्धि हुई है। भूजल स्तर में गिरावट अक्सर बोरो धान की खेती के कारण बढ़ी हुई सिंचाई से जुड़ी हुई है। उच्च तापमान और अधिक अनियमित वर्षा के कारण, वाष्पीकरण में वृद्धि भूजल पुनर्भरण को प्रभावित कर रही है। इस तरह भूजल की अत्यधिक खनन पटसन खेती के लिए भी चुनौती है तथा जलवायु परिवर्तन के कारण भूजल पुनर्भरण में परिवर्तन की सही प्रकृति को समझने के लिए और अधिक शोध करने की आवश्यकता है। पश्चिम बंगाल के पटसन उत्पादक क्षेत्रों में भूजल की स्थिति (वर्ष 2020) चित्र 1 में दिखाया गया है। यह देखा गया है कि पश्चिम बंगाल के अधिकांश जूट उत्पादक जिलों में भूजल स्तर घट रहा है। मानसून के दौरान भूजल का पुनर्भरण नहीं होता है (तालिका 1)।

भूजल के अत्यधिक दोहन से जुड़ी समस्याएँ

हमलोग जानते है कि हमारे देश के विभिन्न प्रांत में भूजल की समस्या उत्पन्न हो चुकी है जोकि हमारे देश की खेती के लिए अनुकूल नहीं है। हमारे देश में भूजल से सम्बंधित समस्याएं निम्नलिखित है जोकि कृषि को प्रभावित कर रही है :

भूजल स्तर का कम होना : भूजल के अति-शोषण का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव यह है कि जल स्तर कम हो रहा है। साथ ही, जैसे-जैसे जल स्तर गिरता है, कुएं में पानी की मात्रा भी कम हो सकती है।

उपयोगकर्ता के लिए बढ़ी हुई लागत : जैसे-जैसे भूजल की गहराई बढ़ती है, पानी को भूजल की गहराई से जमीन की सतह तक उठाने की खर्च भी बढ़ जाती है। यदि पानी के पंपों का उपयोग पानी को उठाने के लिए किया जाता है, तो पानी के पंप को संचालित करने के लिए अधिक विद्युत ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

तालिका 1: पटसन उत्पादक जिलों में जल स्तर की गहराई

पटसन उत्पादक जिले	जल स्तर की गहराई (मीटर जमीनी स्तर से नीचे)			भूजल उपलब्धता
	मानसून पूर्व (अप्रैल)	मानसून के बाद (नवंबर)	शुद्ध परिवर्तन	
जलपाईगुड़ी	7.21	17.88	10.67	कमी
कूचबिहार	3.12	3.35	0.23	कोई परिवर्तन नहीं
उत्तर दिनाजपुर	4.20	5.42	1.22	कमी
दक्षिण दिनाजपुर	2.27	11.11	8.84	कमी
मालदा	14.89	25.46	10.57	कमी
मुर्शिदाबाद	25.67	29.35	3.68	कमी
नदिया	9.25	7.82	1.43	बढ़ोतरी
उत्तर 24 परगना	15..00	3.79	1.21	बढ़ोतरी
दक्षिण 24 परगना	22.08	14.85	7.23	बढ़ोतरी
हावड़ा	13.96	17.30	3.34	कमी
हुगली	15.80	15.85	0.05	कोई परिवर्तन नहीं
पूर्व बर्धमान	27.20	26.66	0.54	कोई परिवर्तन नहीं
पूर्व मेंदनीपुर	22.18	15.96	6.22	कमी

(स्रोत: ग्राउंड वाटर ईयर बुक ऑफ़ वेस्ट बंगाल, 2022)

भूस्खलन : भूमि धंसने का मुख्य कारण जमीन की सतह के नीचे सहारे की कमी है। कभी-कभी, जब भूजल का अत्यधिक दोहन होता है, तो मिट्टी ढह जाती है। यह विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है, जैसे कि मिट्टी का प्रकार, जलभृत की भौतिक विशेषताएं, जल-स्तर और भू-विज्ञान।

पानी की गुणवत्ता में गिरावट : खारे पानी की घुसपैठ ताजे भूजल आपूर्ति के दूषित होने का प्रमुख कारण और खतरा है। अत्यधिक पंपिंग की स्थिति में खारे पानी का अंतर्देशीय प्रवास हो सकता है और इससे पानी दूषित हो जाती है। पश्चिम बंगाल के छिछला जलदायी भूजल स्तर में आर्सेनिक की बढ़ती मात्रा भी उस क्षेत्र की जनसंख्या के लिए बहुत बड़ी समस्या है।

भूजल पुनर्भरण

भूजल पुनर्भरण का तात्पर्य भूजल संसाधनों की पुनःपूर्ति से है। यह प्रक्रिया नियमित रूप से बारिश और हिमपात के माध्यम से स्वाभाविक रूप से होती है। इसे कृत्रिम रूप से प्रेरित भी किया जा सकता है। भूजल संसाधनों के सतत उपयोग के लिए, यह महत्वपूर्ण है कि एक जलभृत से विभिन्न उपभोग्य उपयोगों के लिए निकाले गए पानी की मात्रा को पुनर्भरण के माध्यम से वापस किया जाए। भूजल पुनर्भरण तब होता है जब जमीन की सतह पर गिरने वाले पानी का एक हिस्सा मिट्टी के माध्यम से रिसकर जल स्तर तक पहुंच जाता है। पुनर्भरण मौसम, मिट्टी के प्रकार, सतह के आवरण (जैसे, वनस्पति, अभेद्य फुटपाथ), ढलान और जल स्तर की गहराई जैसे कारकों से प्रभावित होता है। आमतौर पर, पुनर्भरण अध्ययन केवल वर्षा-संचालित पुनर्भरण पर विचार करते हैं। वर्षा के अलावा, सिंचाई और अपशिष्ट जल भी पुनर्भरण प्रदान कर सकता है। पुनर्भरण छोटे (स्थानीयकृत) से लेकर बड़े (वितरित) प्रकार के पैमानों पर होता है। जैसे ही किसी खेत में वर्षा होती है, उसका कुछ भाग फसली क्षेत्रों की मिट्टी से होकर जल स्तर तक पहुँच जाता है। जल निकासी और अपवाह से पानी को एक बड़ी खाई या नहर में पहुँचाया जाता है और फिर उसे एक जलाशय में डाला जाता है। भारत के कठोर चट्टानी क्षेत्र इसके भौगोलिक क्षेत्र का 65% है जहाँ वर्षा से पुनर्भरण मुश्किल से 10% है। इसलिए यदि किसान को एक वर्ष में लगभग 750 मिमी वर्षा प्राप्त होती है, तो केवल 75 मिमी ही प्राकृतिक पुनर्भरण होता है और बाकी बह जाता है। दीर्घकालिक भूजल उपयोग को बनाए रखने, भूजल आवंटन निर्णय लेने और ऑन-फार्म जल प्रबंधन रणनीतियों को विकसित करने के लिए कृषि क्षेत्रों में पुनर्भरण की मात्रा महत्वपूर्ण है।

भूजल पुनर्भरण कैसे काम करता है

जल पुनर्भरण प्राकृतिक और कृत्रिम रूप से हो सकता है। प्राकृतिक पुनर्भरण को उन क्षेत्रों के संरक्षण द्वारा समर्थित किया जा सकता है जो प्राकृतिक पुनर्भरण क्षेत्र हैं, जैसे आर्द्रभूमि। पुनर्भरण तालाब और इंजेक्शन कुएं (अंतःक्षेपण कूप) अन्य कृत्रिम पुनर्भरण विकल्प हैं। पुनर्भरण तालाब भूमि की सतह पर बनाए जाते हैं और पानी को धीरे-धीरे मिट्टी के माध्यम से भूमिगत जलभृत में प्रवेश करने देते हैं। इंजेक्शन कुएं पुनर्भरण तालाब के समान हैं, लेकिन वे अधिक गति और दबाव में पानी को भूमिगत करने के लिए पंपों का उपयोग करते हैं। क्लाइमेंट रेजिलिएंट इंटीग्रेटेड वाटर मैनेजमेंट प्रोजेक्ट (CRIWMP) ने भूजल प्रतिधारण में सुधार के लिए भूजल रिचार्जिंग प्रथाओं की शुरुआत की, जिससे प्राकृतिक जल नालियों का निरंतर आधार प्रवाह सुनिश्चित होता है जो लंबे समय तक सूखे के दौरान भी छोटे जलाशयों में पानी ले जाते हैं।

भूजल स्तर में गिरावट का प्रबंधन तथा उसकी गुणवत्ता में सुधार

हमें ऐसे समुदाय की आवश्यकता है जिन्होंने जमीनी स्तर पर काम किया हो और समस्याओं को हल करने का प्रयास किया हो, नीति निर्धारण में सक्रिय रूप से शामिल हों। भूजल सर्वेक्षण और विकास एजेंसी (जीएसडीए) जैसे संगठनों को मजबूत किया जाना चाहिए और सामुदायिक स्तर पर जल प्रबंधन पर काम कर रहे जमीनी स्तर के संगठनों के साथ काम करने के मॉडल में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इसलिए, स्थायी भूजल प्रबंधन समाधान विकसित करने के लिए आवश्यक कई विषयों को एकीकृत करने वाले सहयोगों को उत्प्रेरित करने की आवश्यकता है।

भूजल निकासी के बारे में जागरूकता: सरकारों और किसानों को यह महसूस करने की जरूरत है कि हमारा खाद्य उत्पादन और बागवानी उत्पादन 300 मिलियन टन से अधिक हो गया है, यह सिंचाई के लिए भूजल के अत्यधिक दोहन की कीमत पर है। जब तक भूजल पुनर्भरण कार्यक्रम बड़े पैमाने पर

नहीं किए जाते, हमें प्रारंभिक विफलताओं का सामना करना पड़ेगा । इसलिए भूजल पुनर्भरण के महत्व के बारे में जागरूकता पैदा करके किसानों को शिक्षित करने की आवश्यकता है।

अच्छी खेती के लिए सतही और भूजल का संयुक्त उपयोग : संयुक्त उपयोग एक जल प्रबंधन साधन है जो ख़राब गुणवत्ता वाले भूजल का उपयोग सतह जल के साथ करके भूजल की सिंचाई दक्षता को बढ़ाता है। इस पद्धति का मुख्य लक्ष्य भूजल और सतह जल की दक्षता को बढ़ाना है। आमतौर पर इस पद्धति का उपयोग दो कारणों के लिए किया जाता है, पहला सिंचाई के पानी की आपूर्ति में वृद्धि लाने के लिए, और दूसरा भू-जल की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए। भूजल के संयोजन के उपयोग से, हम सतह जल के नुकसान को पचास प्रतिशत तक काम कर सकते है और फसल की उत्पादन को भी बढ़ा सकते हैं। इस विधि के अनुसार कृषि की उपज को बढ़ाया जा सकता है और साथ ही साथ यह देश की खाद्य सुरक्षा में भी सहयोग करेगा।

भूजल प्रबंधन के लिए भारत सरकार की प्रमुख योजनाएं

सरकारों को हमारे कृषि इंजीनियरिंग स्नातकों का उपयोग करने की आवश्यकता है जो भूजल में प्रशिक्षण प्रदान कर सके। वैसे भूजल संचयन एवं प्रबंधन के लिए काफी प्रयास किये जा रहे है, हाल ही में भारत सरकार ने इस समस्या के हल के लिए जल शक्ति अभियान के नाम से "हर गाँव हर घर" में सन 2024 तक जल पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया है। भू-जल और सतह जल के संरक्षण और प्रबंधन करने के लिए भारत सरकार के द्वारा विभिन्न योजना प्रारम्भ की गयी है जैसे राष्ट्रीय भूजल प्रबंधन विकास योजना, प्रधान मंत्री कृषि सिंचाई योजना, प्रधान मंत्री फसल बीमा योजना, राष्ट्रीय बागवानी मिशन, महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका गारण्टी योजना आदि।

पटसन के बाद कम पानी, उच्च मूल्य की फसलें : किसान और हमारी सरकार, अगर वे वास्तव में कीमती और दुर्लभ भूजल के बारे में चिंतित हैं, तो उन्हें पहले कुएं की सिंचाई से वर्तमान फसल प्रणाली के बारे में सोचना चाहिए। उदाहरण के लिए, भूजल का उपयोग करके बोरो धान की खेती करना कितना नैतिक है? यदि किसान अभी भी उनकी खेती करने का निर्णय लेते हैं, तो उन्हें यह महसूस करना चाहिए कि वे वास्तव में लगभग 20,000 रुपये मूल्य का भूजल का उपयोग प्रति एकड़ धान के लिए कर रहे हैं। उच्च मूल्य वाली फसलें जैसे फूलों, फलों, सब्जियों को टपकन सिंचाई (drip irrigation) या छिड़काव सिंचाई (sprinkler irrigation) के माध्यम से कर सकते हैं। पारंपरिक सतही सिंचाई की तुलना में जल की औसतन 40 से 50 प्रतिशत बचत की जा सकती है, वहीं उत्पादन में 20 से 25 प्रतिशत तक की वृद्धि भी होती है। टपकन सिंचाई का एक बड़ा अन्य लाभ यह भी है कि शुष्क अथवा अर्ध-शुष्क इलाकों में पाए जाने वाले भूमिगत लवणीय पानी को भी उपयोग में लाया जा सकता है।

उन्नत कृषि पद्धति : खेत की सतह से वर्षा के जल का बहाव रोकने के लिए खेत के चारों ओर हल्का मेंड़ बना दें। लेजर द्वारा समतलीकरण की तकनीक में पानी की उत्पादकता में काफी वृद्धि लाई जा सकती है। लेजर द्वारा समतलीकरण किए गए धान के खेतों में 10 प्रतिशत एवं गेहूँ के खेतों में 10-20 प्रतिशत पानी की बचत की जा सकती है जिससे भूजल का खनन भी काम हो सकता है। वृक्षारोपण भी भूजल संवहन में बहुत बड़ी भूमिका निभाती है, यह जल स्तर को बढ़ाने में बहुत मददगार साबित होता है। जैविक खादों जैसे गोबर की खाद 10-20 टन/है. की दर से डालने से मिट्टी में पानी धारण क्षमता बढ़ जाती है। पलवार (mulching) का व्यवहार करने से खेत की मिट्टी से जल का वाष्पीकरण नहीं हो पाता और खरपतवार में भी कमी होती है। भूजल की वर्तमान स्थिति को सुधारने के लिए इस दिशा में काम किए जाने के अलावा उचित उपायों से भूजल संवर्धन की व्यवस्था हमें करनी होगी। हाल के वर्षों में, सुदूर संवेदन (remote sensing) उपग्रह-आधारित चित्रों के विश्लेषण तथा भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) द्वारा भूजल संसाधनों के प्रबन्धन में मदद मिली है। भूजल की मॉनिटरिंग एवं प्रबन्धन में भविष्य में ऐसी तकनीकों को और बढ़ावा दिए जाने की आवश्यकता है। भूजल संसाधनों के बारे में जनसाधारण को जागरूक बनाने और जल की महत्ता के बारे में उन्हें शिक्षित करने के लिये प्रदर्शनी, डॉक्यूमेंटरी फिल्मों, सूचनापरक विज्ञापनों आदि का सहारा भी लिया जा सकता है।

स्वस्थान पटसन सड़न और पारिस्थितिक खेती के लिए जल संचयन तालाब

वर्षा के अनियमित वितरण, सामुदायिक सड़न टैंक की अनुपलब्धता, जल संसाधनों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में कमी, खेती और श्रम की उच्च लागत और नदियों, तालाबों/नहरों की सूखापन को ध्यान में रखते हुए, किसानों को पटसन की उचित सड़न की समस्या का सामना करना पड़ता है। कटाई के समय अपर्याप्त जल संचयन की समस्या को दूर करने के लिए, किसानों को सलाह दी जाती है कि वे वर्षा ऋतु से पहले यानि जून से पहले खेत के निचले कोने में स्वस्थान पटसन सड़न तालाब की तैयारी पूरी कर लें ताकि बारिश का पानी जो अपवाह के रूप में चला जाता है, उसको पटसन सड़न के लिए उपयोग में लाया जा सके। इन खेत तालाबों का उपयोग वर्षा जल संचयन और आसपास के खेतों में जलभृतों और जल स्रोतों को पुनर्भरण करने के लिए किया जा सकता है। तालाब के मेंढ़ का उपयोग पपीता, केला और सब्जियों जैसे पौधों को उगाने के लिए किया जा सकता है (चित्र 2)। अन्य उपयोगों में मछली पालन, मधुमक्खी पालन, मशरूम की खेती, वर्मी कम्पोस्टिंग इत्यादि शामिल हैं। रेशा की गुणवत्ता में कम से कम एक से दो ग्रेड तक सुधार किया जा सकता है।

पुनर्भरण और वाटरशेड जल संसाधन प्रबंधन : वाटरशेड के भीतर भूजल पुनर्भरण की सीमा हाइड्रोलॉजिकल चक्र, भूजल आपूर्ति और पारिस्थितिक तंत्र को प्रभावित करती है। पुनर्भरण एक वाटरशेड में विभिन्न प्रकार के भूमि उपयोग के तहत भूजल की गहराई को प्रभावित करता है (चित्र 3)। खेत के ऊपरी ढलान पर पानी के बहाव का एक सुरक्षित रास्ता बनाया जाता है जो खेत से किसी नदी नाले में जा सके। इसे किसान सहकारी समितियों या सरकार की मदद से कर सकते हैं।

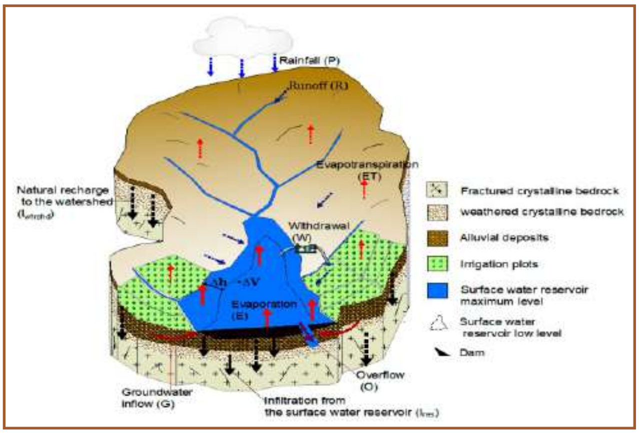

चित्र 3: वाटरशेड जल संसाधन प्रबंधन

चित्र 2: पारिस्थितिक खेती के लिए जल संचयन तालाब

भूजल पुनर्भरण के लिए वर्षा जल का संचयन: लगातार गिरते जा रहे भूमिगत जलस्तर के उत्थान हेतु पूरे विश्व में भरसक प्रयास किये जा रहे हैं। इनमें तालाबों का निर्माण, ग्रामीण क्षेत्रों में जलग्रहण क्षेत्र प्रबंधन कार्य एवं शहरी क्षेत्रों में छत का पानी जमीन में उतारना व सोख्ता गड्ढ़ों का निर्माण प्रमुख हैं (चित्र 4)।

- वर्षा जल का संचय करने के लिए संचय तालाब का निर्माण करना चाहिए। यह तालाब यदि संभव हो तो ऐसी जगह बनाया जाए, जहाँ से कम से कम खर्च में अधिक से अधिक खेतों में जरूरत के समय फसल की सिंचाई की जा सके।
- कुछ ऐसे भी उपाय हैं जिसके द्वारा किसान वर्षा के जल को संचय कर कुछ समय तक के लिए मिट्टी में नमी कायम रख सकते हैं। इन उपायों में एक है - फसल की कतारों के बीच गहरी नालियाँ बनाना, जिससे वर्षा का जल संचित हो और काफी समय तक मिट्टी में नमी को कायम रखा जा सके। दूसरा उपाय है - फल वृक्षों वाले जमीन में वृक्ष की कतारों के बीच छोटे-छोटे गड्ढे, जगह-जगह पर बना कर वर्षा जल को संचित किया जा सकता है और इस जल से अगल - बगल के फल वृक्षों में जरूरत के समय सिंचाई कर मिट्टी की नमी को कायम रखा जा सकता है।

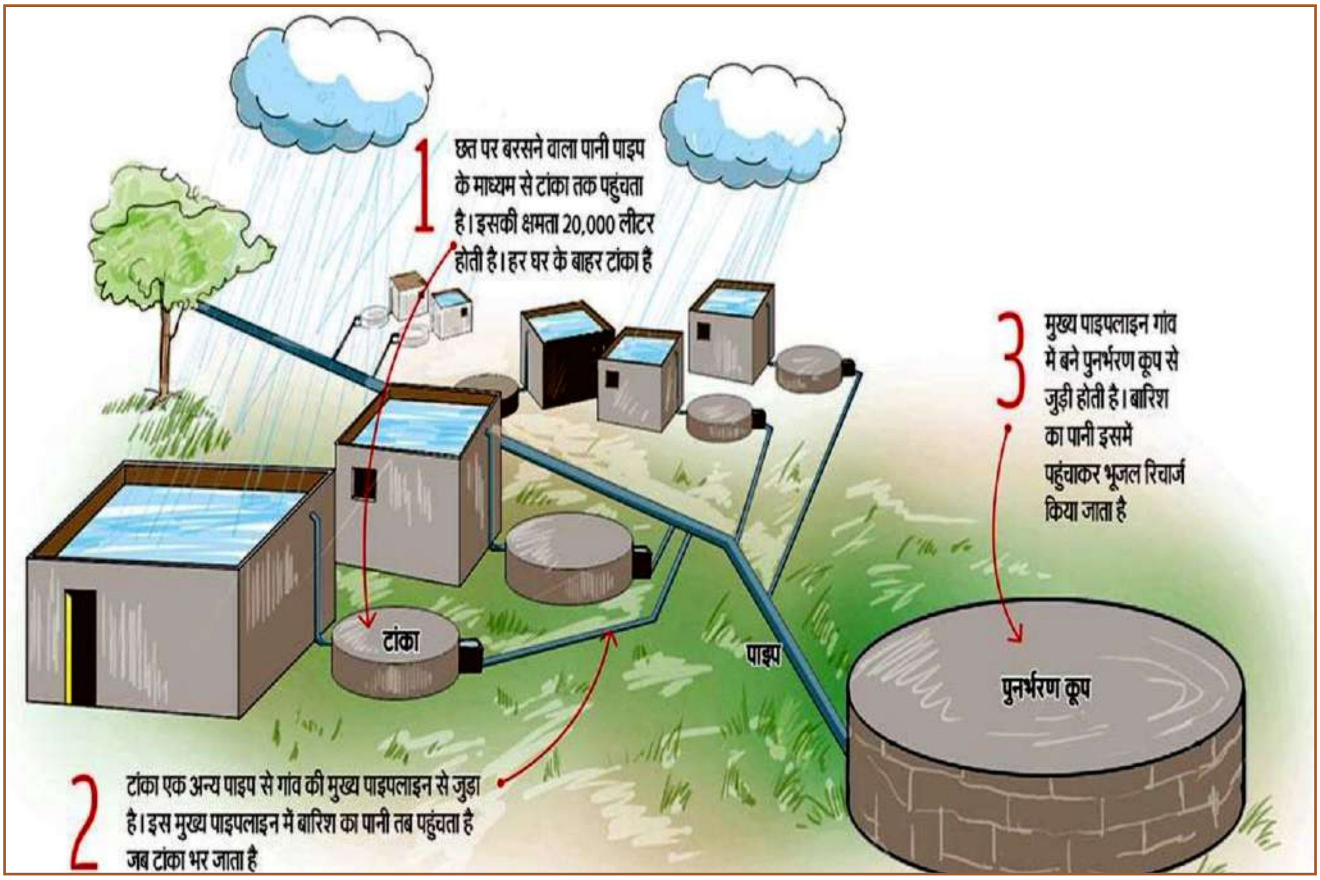

चित्र 4: भूजल पुनर्भरण के लिए वर्षा जल का संचयन

- शहरी क्षेत्रों में, रूफ टॉप रेन वाटर को संरक्षित किया जा सकता है और भूजल के पुनर्भरण के लिए उपयोग किया जा सकता है। इस दृष्टिकोण के लिए पानी को मौजूदा कुओं/ट्यूब वेल/बोरवेल या विशेष रूप से डिजाइन किए गए कुओं की ओर मोड़ने के लिए छत के ऊपर से आउटलेट पाइप को जोड़ने की आवश्यकता है। शहरी आवास परिसरों या संस्थागत भवनों में छत के ऊपर वर्षा जल संचयन और रिचार्जिंग के लिए उपयोग किया जा सकता है।
- भूमि की सतह के नीचे से जल प्राप्ति के दो स्रोत हैं। एक कुआं एवं दूसरा नलकूप। कुएँ का सतह तक तो यानी कड़ी चट्टान के ऊपर आसानी से पुनर्भरण हो जाता है, लेकिन बहुत कम जल नलकूपों की गहराई तक प्रवेश कर पाता है। वर्षा का अधिकांश जल बहकर समुद्र में चला जाता है। उस बहकर जाने वाले जल को नलकूप पुनर्भरण की पारम्परिक तकनीक में कुछ संशोधन कर बड़े पैमाने पर पुनर्भरण का कार्य किया गया है।

निष्कर्ष

भूजल पुनर्भरण जलभृतों को फिर से भरने के लिए या तो प्राकृतिक पुनर्भरण या कृत्रिम पुनर्भरण परियोजना को अपनाया जा सकता है। यह सतही अपवाह को कम करने, सिंचाई के लिए पानी की उपलब्धता बढ़ाने, घरेलू और औद्योगिक क्षेत्र, जल निकासी में सुधार, झरनों के पुनरुद्धार और भूजल की गुणवत्ता में सुधार आदि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह अधिक टिकाऊ जल आपूर्ति करके किसानों, कृषि वित्त संस्थानों और नगर निगम के उपयोगकर्ताओं को लाभान्वित करने के लिए है। कृषि क्षेत्र, आवासीय क्षेत्र एवं औद्योगिक क्षेत्र में भी जल प्रबंधन के लिए विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए, जहाँ हमारे जल स्रोतों का सबसे अधिक दोहन किया जाता है। पटसन उगने वाले क्षेत्रों में बोरो धान की जगह सब्जियों, फलों का सूक्ष्म सिंचाई पद्धति से खेती करना चाहिए, ताकि किसानों को अधिक लाभ मिले तथा भूजल खनन भी कम हो। इसके साथ ही स्वस्थान पटसन सड़न तालाब का निर्माण करके विभिन्न उद्यमों के एकीकरण, भूजल पुनर्भरण, उपलब्ध संसाधनों का दक्षतापूर्वक इस्तेमाल तथा प्रतिकूल मौसम की नकारात्मक प्रभाव का कम होने के कारण पर्याप्त आमदनी संभव है। पहले से ही भूजल पुनर्भरण के लिए सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनो व क्षेत्र के मूल निवासियों के सहयोग से कई तरह के प्रयास किये जा रहे हैं, और बहुत से इलाकों में इसके सकारात्मक परिणाम भी प्राप्त हुए है, लेकिन अभी भी भूजल संचयन, पुनर्भरण एवं प्रबंधन के क्षेत्र में और कार्य करने की आवश्यकता है।

"मैं उन लोगों में से हूं,जो चाहते हैं और जिनका विचार है कि
हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है"

- बाल गंगाधर तिलक

जलवायु परिवर्तन : फसल कीटों पर संभावित प्रभाव

एस. सतपथी, बी.एस.गोट्याल, वी. रमेश बाबू एवं एस.के. झा
भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

परिचय

जलवायु परिवर्तन से तात्पर्य एक लंबी अवधि में मौसम के परिवर्तन से है । इंटर-गवर्नमेंट पैनल ऑन क्लाइमेंट चेंज (आईपीसीसी) ने जलवायु परिवर्तन को "जलवायु की स्थिति में परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया है, जिसे इसके गुणों के मध्य और / या परिवर्तनशीलता में परिवर्तन द्वारा पहचाना जा सकता है और जो एक विस्तारित अवधि के लिए बनी रहती है, आमतौर पर दशकों या उससे अधिक"। यह प्राकृतिक परिवर्तनशीलता के कारण या मानव गतिविधि के परिणामस्वरूप हो सकता है। परिवर्तन एक या कई मौसम की घटनाओं के परिमाण या परिवर्तनशीलता के परिणाम स्वरूप हो सकता है।

ग्लोबल वार्मिंग और ग्रीनहाउस गैसों में जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप ग्लोबल वार्मिंग पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए दुनिया भर में गंभीर चिंता का विषय बन गया है। पिछले सौ वर्षों में, वैश्विक तापमान में 0.80C की वृद्धि हुई है और अगली सदी के अंत तक 1.1- 5.4^{0}C तक पहुंचने की उम्मीद है। ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन को प्रभावित करने वाला प्रमुख कारक कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड जैसी ग्रीन हाउस गैसों की सांद्रता है । दूसरी ओर, वातावरण में CO_2 की सांद्रता 280 पीपीएम से बढ़कर 370 पीपीएम हो गई है और 2100 (आईपीसीसी, 2007) में इसके दोगुने होने की संभावना है।

1958 के बाद से, वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड सांद्रता में वृद्धि की दर दशक से दशक तक तेज हुई है। वायुमंडलीय CO_2 के लिए सुरक्षा सीमा 350 पीपीएम है। पिछले 10 वर्षों (1995-2005 औसत: 1.9 पीपीएम प्रति वर्ष) के दौरान वार्षिक CO_2 एकाग्रता वृद्धि दर अधिक थी । 1988 की शुरुआत से वायुमंडलीय CO_2 का स्तर 350 पीपीएम से अधिक बना हुआ है। वातावरण में ग्रीनहाउस गैसों के संचय ने ग्रह को गर्म कर दिया है और वैश्विक जलवायु में परिवर्तन का कारण बना है। जीएचजी के अलावा कोई भी चालक पिछले कुछ दशकों में वैश्विक और राष्ट्रीय स्तर पर देखी गई अधिकांश वार्मिंग की वैज्ञानिक रूप से ध्वनि व्याख्या प्रदान नहीं करता है । आईपीसीसी (2007) रिपोर्ट ने पिछले परिदृश्यों की पुष्टि की है कि 2100 तक, उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में वर्षा कम हो जाएगी और चरम घटनाएं अधिक बार हो जाएंगी। हालांकि, जलवायु में परिवर्तन पहले से ही देखे जा रहे हैं- पिछले 60 वर्षों में सबसे गर्म थे। पिछले 1000 वर्षों और वर्षा के पैटर्न में बदलाव के कारण विश्व स्तर पर बाढ़ या सूखे की अधिक घटनाएं हुई हैं।

कृषि में जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन का पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं, पानी की उपलब्धता, फसल उत्पादन और खाद्य सुरक्षा पर प्रमुख प्रभाव पड़ेगा। फिलीपींस में फसल की अवधि कम होने (तापमान में प्रति 10^{0}C वृद्धि पर चावल की पैदावार में 10% की कमी) (पेंग एट अल., 2004) के कारण बढ़े हुए तापमान ने धान (ओरिज़ा सैटिवा एल.) के उत्पादन को काफी प्रभावित किया है । तापमान में 60°C की वृद्धि और 300 मि.मी. की वर्षा की कमी से यूरोपीय संघ में मक्का (Zea mays L.) की उपज 36% कम हो गई (Ciais et al., 2005)।

जैसा कि वैश्विक स्तर पर है, भारतीय जलवायु ने पिछले 100 वर्षों में औसतन 0.56^{0}C डिग्री सेल्सियस की वृद्धि के साथ वार्षिक तापमान में बढ़ती प्रवृत्तियों के प्रकट होने से सामान्य स्थिति से धीरे-धीरे बदलाव दिखाया है (आईपीसीसी, 2007; राव एट अल, 2009)। आजकल मानसून के बाद की अवधि अधिक तापमान का अनुभव कर रही है और सर्दियों में गर्म दिनों की संख्या अधिक होती है। हालांकि, प्राप्त कुल वर्षा में मामूली वृद्धि हुई, वर्षा के दिनों की संख्या में कमी आई। देश के वर्षा आधारित क्षेत्र में कुल वर्षा की धीरे-धीरे घटती मात्रा एक

नियमित घटना बन गई है (डी. मुखोपाध्याय, 1998, राव एट अल., 2009)। देश के अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में अलग-अलग परिमाण (20-30%) के सूखे की व्यापकता की अधिकतम संभावना थी, जिससे जल स्तर और फसल विफलताओं में तेज गिरावट आई (लाल, 2003; राव एट अल, 2009; सामरा, 2003)। अगली सदी (2100) के अंत तक, भारत में तापमान 1-5^{0}C (दे मुखोपाध्याय, 1998; लाल, 2003; आईपीसीसी, 2007) तक बढ़ने की संभावना है। इसके वितरण में उच्च स्तर की भिन्नता के साथ वर्षा में 15-40% की वृद्धि होगी। इसके अलावा, देश में बार-बार होने वाली चरम जलवायु घटनाओं (NATCOM, 2004; IPCC, 2007) का अनुभव होने की संभावना है।

एक उष्ण कटिबंधीय देश होने के कारण, आने वाले दिनों में देश में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों की अधिक चुनौती है। पहले से ही, भारतीय कृषि की उत्पादकता मानसूनी वर्षा पर इसकी उच्च निर्भरता से सीमित है, जो अक्सर अनियमित और इसके वितरण में अपर्याप्त होती है (चांद और राजू, 2009)। अनिश्चित जलवायु चालित परिवर्तन नई समस्याएं पैदा होगी, जो वांछित कृषि उत्पादन प्राप्त करने में एक बड़ी चुनौती होगी।

फसलों के कीटों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

भारत में, आठ प्रमुख फसलों में कीटों के कारण होने वाली औसत वार्षिक हानि 17.5% होने का अनुमान लगाया गया है। फसल की विविधता में कमी और ग्लोबल वार्मिंग के कारण कीटों की बढ़ती घटनाओं के परिणामस्वरूप कीटों से होने वाले नुकसान में वृद्धि की संभावना है। मौसमी और दीर्घकालिक जलवायु परिवर्तन फसलों के कीटों को कई तरह से प्रभावित करते हैं। कीटों में कम समय में उच्च प्रजनन दर की क्षमता होती है और इसलिए वे जलवायु परिवर्तन से सबसे अधिक प्रभावित होने की संभावना होती हैं क्योंकि पर्यावरणीय कारकों का इस पर एक मजबूत प्रभाव पड़ता है। संभावित प्रतिक्रियाओं के कारण फेनोलॉजिकल पैटर्न में परिवर्तन, आवास चयन और विस्तार, और/या भौगोलिक वितरण का संकुचन होगा। प्रजातियों की प्रतिक्रियाएं जीवन इतिहास विशेषताओं के लचीलेपन पर निर्भर करती हैं और विभिन्न विकास दर और डायपॉज आवश्यकताएं प्रजातियों के वितरण और जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित कर सकती हैं (बेल एट अल., 2002)। ग्लोबल वार्मिंग से अपरिपक्व अवस्थाओं का तेजी से विकास होगा और वयस्क पहले की तुलना में बहुत पहले उभरेंगे। कुल मिलाकर जलवायु में यह परिवर्तन कीटों को विविधता, बहुतायत भौगोलिक वितरण, विकास, जनसंख्या गतिशीलता, कीटों के लिए मेंजबान-पौधे प्रतिरोध और प्रबंधन हस्तक्षेप की प्रभावशीलता को प्रभावित करेंगे।

जीवों की विविधता में कमी

सामान्य तौर पर दक्षिण एशिया और भारत में विशेष रूप से विविध कृषि-पारिस्थितिक स्थितियों के कारण, जलवायु, मिट्टी समृद्ध जीव और पुष्प जैव-विविधता का आनंद लेती है। सबसे बड़ी प्राकृतिक संपदा में जैव विविधता की समृद्धि किसी भी क्षेत्र की कृषि को अनुकूल रूप से प्रभावित करती है। हाल के दशकों में बढ़ते औद्योगीकरण और प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन से जलवायु पैटर्न में बदलाव के कारण पौधों, पशुओं और कीड़ों की कई प्रजातियां खतरनाक रूप से घट रही हैं।

जैविक विविधता का नुकसान अभी भी तेजी से हो रहा है जो जलवायु परिवर्तन के लिए पारिस्थितिकी तंत्र के लचीलेपन को कम करता है। जलवायु परिवर्तन के कारण विभिन्न कीट प्रजातियों की सापेक्ष बहुतायत तेजी से बदल सकती है और निकट भविष्य में तनाव का सामना करने में असमर्थ प्रजातियां खो सकती हैं, यह आर्थ्रोपोड प्रजातियों के विलुप्त होने का एक प्रमुख कारक बन जाएगा। पर्वतीय प्रजातियां में इसके विलुप्त होने की सबसे अधिक संभावना है। (थॉमस एट अल., 2004) ठंड की स्थिति के अनुकूल प्रजातियों को उच्च अक्षांशों की ओर बढ़ने के लिए मजबूर होंगे। एक आवास में कीट विविधता एक पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता को इंगित करती है। वे पर्यावरण परिवर्तन के बहुत अच्छे संकेतक हैं (ग्रेगरी एट अल. 2009), खाद्य श्रृंखला में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण फसलों में से कई के लिए उत्कृष्ट परागणक हैं। विश्व की लगभग 6.83% कीट प्रजातियाँ भारत में पाई जाती है (अल्फ्रेड, 1998)। जलवायु परिवर्तन के नकारात्मक प्रभाव जैव विविधता के नुकसान की दर को तेज कर रहे हैं। जैव विविधता का नुकसान पारिस्थितिक तंत्र और वन्यजीव आवास की संरचना, संरचना और कामकाज को नकारात्मक रूप से

प्रभावित कर सकता है जिससे विनाशकारी कीटों और बीमारियों का प्रकोप हो सकता है (टिमोनी, 2003; आईपीसीसी, 2007)।

अस्थिर प्रकृति वाले कीटों की बहुतायत

जलवायु परिवर्तन का कीटों के भौगोलिक वितरण पर बड़ा प्रभाव होता है। इसके और वितरण में उच्च तापमान की तुलना में कम तापमान की भूमिका अक्सर अधिक महत्वपूर्ण होता है। प्रकृति में पौधों और पशुओं का वितरण और बहुतायत उनके विकास, अस्तित्व और प्रजनन के लिए आवश्यक प्रजातियों की विशिष्ट जलवायु आवश्यकताओं पर निर्भर करता है। स्थानीय विलुप्त होने के साथ-साथ वार्षिक पौधों की प्रजातियों के बीच सीमा समायोजन की अंतर दर निश्चित रूप से उनके साथ जुड़े कीट जीवों के वितरण और अस्तित्व को प्रभावित करेगी (थॉमस एट अल, 2004)। पहले के शोधों से पता चला है कि बदलती जलवायु के कारण मेजबान पौधों के साथ कीट वितरण में ऊंचाई के अनुसार बदलाव पहले से ही अधिक हैं। तापमान में वृद्धि के साथ, कीटों से उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों से उच्च ऊंचाई पर समशीतोष्ण क्षेत्रों तक अपनी भौगोलिक सीमा का विस्तार करने की उम्मीद है।

एक अध्ययन के अनुसार सन्युक्त राज्य अमेरिका में, ग्लोबल वार्मिंग-परिणामस्वरूप ऊंचाई-वार सीमा विस्तार और मकई के इयरवॉर्म हेलियोथिस ज़िया (बोडी) और हेलिकोवरपा आर्मिगेरा (हबनेर) के बढ़ते ओवरविन्टरिंग अस्तित्व से मक्का में भारी उपज हानि हो सकती है और (डिफेनबॉघ एट अल., 2008)। ग्लोबल क्लाइमेंट वार्मिंग के कारण उत्तर भारत में कपास, दालों और सब्जियों का एक प्रमुख कीट हेलिकोवर्पा आर्मिगेरा (हबनेर) जैसी प्रवासी प्रजातियों में सीमा विस्तार की भविष्यवाणी (शर्मा एट अल. 2005) की गई है। फलियां पॉड बोरर एच. आर्मिगेरा और मारुका विट्राटा (गीयर) जो वर्तमान में एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका में उष्णकटिबंधीय जलवायु तक सीमित हैं, अगले 50 वर्षों में इसके उत्तरी यूरोप और उत्तरी अमेरिका में जाने की सबसे अधिक संभावना है। जलवायु परिवर्तन (शर्मा, 2014)।

कीट की स्थिति को प्रभावित करने के लिए केवल तापमान ही पर्याप्त नहीं होता है और इसलिए अन्य चर, जैसे वर्षा, आर्द्रता, विकिरण और CO_2 सांद्रता (हैरिंगटन एट अल, 2001) की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। बदलती जलवायु परिस्थितियों में फसलों के वितरण में स्थानिक बदलाव भी एक भौगोलिक क्षेत्र में कीटों के वितरण को प्रभावित करेगा (पैरी और कार्टर, 1989)। हालांकि, एक कीट फसल के साथ नए आवास में जाएगा या नहीं, यह अन्य पर्यावरणीय परिस्थितियों पर जैसे कि ओवरविन्टरिंग साइटों की उपस्थिति, मिट्टी के प्रकार और नमी निर्भर करेगा।

जीव विज्ञान, जनसंख्या की गतिशीलता और कीट प्रकोप

अधिकतम विकास सीमा के भीतर उच्च तापमान के परिणामस्वरूप तेजी से विकास होगा और कीट आबादी में वृद्धि होगी क्योंकि प्रजनन परिपक्वता का समय काफी कम हो जाएगा। विकास दर पर तापमान परिवर्तन के प्रत्यक्ष प्रभावों के अलावा, अजैविक तनावों के कारण भोजन की गुणवत्ता में सुधार से कुछ कीट प्रजातियों (व्हाइट, 1984) की वृद्धि दर में नाटकीय वृद्धि हो सकती है, जबकि कुछ कीटों की वृद्धि प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकती है (एम.एट अल., 2007)। जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप कीटों की ओवरविनटरिंग बढ़ेगी, जिससे आने वाले मौसम में बड़ी संख्या में वसंत आबादी का निर्माण होगा। ये परजीवी और शिकारियों के लिए कमजोर हो सकते हैं। यदि बाद वाले भी अधिक आसानी से ओवर विन्टर करते हैं। एच. आर्मिगेरा अंडे की व्यवहार्यता और ऊष्मायन अवधि पर तापमान का एक मजबूत प्रभाव होता है, जिसका अनुमान अंडे सेने के लिए आवश्यक डिग्री-दिनों के आधार पर लगाया जा सकता है (ढिल्लों और शर्मा, 2007)। कीट आबादी मौसम और स्थानों में भिन्न होती है। कीट के प्रकोप की शुरुआत और जनसंख्या निर्माण दोनों ही फसल उगाने के मौसम के दौरान और/या पिछली अवधि के दौरान मौसम की स्थिति विशेष से प्रभावित होते हैं, क्योंकि किसी भी दो मौसमों में समान मौसम की स्थिति नहीं होती है, कीट आबादी की गतिशीलता भी मौसम और स्थानों में भिन्न होती है, उदाहरण के लिए सभी मौसमों में आंध्र प्रदेश में ओरिएंटल आर्मीवॉर्म की चरम आबादी में एक बड़ा बदलाव। प्रकाश प्रपंच में अधिकतम कीट पकड़ने को 1980 में 31 वें मानक सप्ताह और 1976 के दौरान 40 वें मानक सप्ताह

के दौरान दर्ज किया गया था (शर्मा एट अल., 2002)। कई प्रवासी कीट एच. आर्मिगेरा, एम. सेपरेटा और स्पोडोप्टेरा लिटुरा (एफ.) जलवायु परिवर्तन के कारण नए क्षेत्रों में तेजी से आगे बढ़कर नए अवसरों का फायदा उठाने में सक्षम हो सकते हैं (शर्मा एट अल., 2002; शर्मा 2005, 2014)।

जलवायु परिवर्तन के कारण कीटों के प्रकोप की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि हुई है। कर्नाटक और महाराष्ट्र राज्यों में 2002-03 के दौरान गन्ना बेल्ट में गन्ना ऊनी एफिड, सेराटोवाकुना लैनिगेरा जेन्टनर के प्रकोप से 30% उपज का नुकसान हुआ। कीटनाशकों के दुरुपयोग से जुड़ी असामान्य स्थिति के परिणामस्वरूप चावल के पौधे पर हॉपर, नीलपर्वत लुगेंस (स्टाल) का प्रकोप हुआ और उत्तर भारत में सोगाटेला फरसीफेरा (होर्वाथ) 33,000 है. से अधिक धान क्षेत्रफल की विफलता का कारण बना। देश के कपास उत्पादक क्षेत्रों में कपास, सब्जियों और सजावटी पौधों में वर्ष 2006 में, माइलबग, फेनाकोकस सोलेनोप्सिस टिनस्ले का प्रकोप हुआ, जिसका मुख्य कारण उच्च तापमान की व्यापकता और बदलते फसल वातावरण (बीटी कपास की शुरूआत) के कारण उपज में 30-40% कमी आई। (धवन एट अल, 2007)। हाल ही में, फेनाकोकस सोलेनोप्सिस पटसन की फसल के लिए एक नए खतरे के रूप में उभरा है। पश्चिम बंगाल के उत्तर 24 परगना जिले में वर्ष 2009 की गर्मियों के दौरान जूट पर पी. सोलनोप्सिस का संक्रमण 60-80% की सीमा तक था। पिछले छह वर्षों के दौरान बने मौसम के मापदंडों में एक अंतर्दृष्टि ने संकेत दिया कि पिछले वर्षों की तुलना में अधिकतम और न्यूनतम तापमान में वृद्धि हुई है, इसके अलावा जनवरी और मई के बीच कम वर्षा और कम बारिश के दिनों की संख्या में वृद्धि हुई है। गर्मियों के महीनों के दौरान गर्म और शुष्क स्थिति माइलबग के प्रकोप के लिए पूर्व-निपटान कारक हो सकती है। बाद के वर्षों में समान जलवायु परिस्थितियों के प्रसार के कारण पटसन में फिर से यह प्रकोप देखा गया (सतपथी एट अल., 2013)।

मेंजबान पौधे के प्रतिरोध और कीट-पौधे की बातचीत में बदलाव

जलवायु परिवर्तन कीटों और उनके मेंजबान पौधों के बीच की स्थिति को बदल सकता है (बेल एट अल. 2002; शर्मा एट अल., 2005, 2014)। तनावपूर्ण वातावरण में, पौधे अपने स्वयं के रक्षात्मक तंत्र के कमजोर होने के कारण कीटों द्वारा हमलों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप कीटों द्वारा और अधिक फसल की क्षति होती है (रोड्स, 1985)। इससे अनुकूलन की कमी के कारण तनाव से कमजोर मेंजबान रक्षा, उप-इष्टतम जलवायु परिस्थितियों का कीड़ों द्वारा शोषण किया जाएगा। जलवायु परिवर्तन पानी की उपलब्धता को प्रभावित करेगा और इस प्रकार, अप्रत्यक्ष रूप से पौधों की वृद्धि और कीट-होस्ट पौधों के तालमेल को प्रभावित करेगा। सिंचित परिस्थितियों में उगाए गए पौधों की तुलना में ज्वार के पानी के दबाव वाले पौधों को धब्बेदार तना छेदक, सी. पार्टेलस, और गन्ना एफिड, मेंलानाफिस सैकरी (जेनंट) से अधिक नुकसान होता है। असामान्य रूप से गंभीर सूखा कीट प्रजातियों द्वारा नुकसान को बढ़ाता है, जैसे कि धब्बेदार तना छेदक, सी. पार्टेलस, ज्वार में (शर्मा एट अल., 2005)। सी. पार्टेलस के प्रतिरोध के मध्यम स्तर वाले ज्वार जीनोटाइप सूखे के तनाव के तहत एक अतिसंवेदनशील प्रतिक्रिया प्रदर्शित करते हैं। पोषक तत्वों की गुणवत्ता और मेजबान पौधों के द्वितीयक चयापचयों पर CO_2 के प्रभावों की प्रतिक्रिया में कीट-मेजबान पौधों की संबंध में भी बदलाव आएगा। CO_2 के बढ़े हुए स्तर से पौधों की वृद्धि में वृद्धि होगी, लेकिन वे कुछ फाइटोफैगस कीड़ों से होने वाले नुकसान को भी बढ़ा सकते हैं (ग्रेगोरीट अल. 2009)। CO_2 समृद्ध वातावरण में, शाकाहारी कीड़ों की कई प्रजातियां कम पौष्टिक मेंजबान पौधों का सामना करेंगी जो लंबे समय तक लार्वा विकास के समय और अधिक मृत्यु दर दोनों को प्रेरित कर सकती हैं। बढ़ी हुई CO_2 नाइट्रोजन-आधारित सुरक्षा (जैसे, एल्कलॉइड) में थोड़ी कमी और कार्बन-आधारित सुरक्षा (जैसे, टैनिन) में मामूली वृद्धि का कारण बन सकती है। उच्च CO_2 के कारण कम पर्ण नाइट्रोजन सामग्री शाकाहारी लोगों द्वारा भोजन की खपत में 40% तक की वृद्धि का कारण बनती है। एंडोफाइट्स, जो पौधों में दोनों अजैविक और जैविक तनावों को सहनशीलता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जलवायु परिवर्तन के कारण भी परिवर्तन से गुजर सकते हैं (न्यूटन) एट अल., 2009)। उच्च तापमान जैसे पर्यावरणीय कारक बीटी कपास में ट्रांसजीन अभिव्यक्ति को प्रभावित करने

वाले पाए गए हैं जिसके परिणामस्वरूप बीटी विषाक्त पदार्थों का उत्पादन कम हो गया है। इससे कीड़ों के प्रति हेलियोथिस विरेसेंस (एफ.) फसलों की संवेदनशीलता में वृद्धि हुई (कैसर, 1996)।

कीट प्रबंधन रणनीतियों की प्रभावशीलता

उच्च तापमान शुष्क मौसमों को और भी शुष्क बना देगा और, इसके विपरीत, वर्षा की मात्रा और तीव्रता को बढ़ा सकता है, जिससे नम मौसम वर्तमान की तुलना में और अधिक नम हो जाएगा। तापमान और वर्षा में वृद्धि के कारण कीटनाशक अवशेषों के तेजी से खर्च होने से कीटनाशकों के अधिक बार उपयोग की आवश्यकता होगी। फसल सुरक्षा के लिए एक गर्म और आर्द्र जलवायु कीटनाशकों के अधिक एवं लगातार उपयोग के माध्यम से फसल सुरक्षा की लागत में वृद्धि करेगी (चेन और मैककार्ल, 2001)। तापमान ने ऑर्गनोक्लोरीन, ऑर्गनोफॉस्फेट और कार्बामेंट्स (हालांकि कुछ अपवाद हैं) पर सकारात्मक प्रभाव दिखाया है, लेकिन सिंथेटिक पाइरेथ्रोइड्स (वांग और शेन, 2007) पर नकारात्मक प्रभाव दिखाया है। वर्षा कीटनाशक विषाक्तता को कम करती है। हालाँकि, इसके प्रभाव तीव्रता और वर्षा की मात्रा, सूत्रीकरण और उपयोग किए गए सहायक के साथ भिन्न होते हैं।

चूंकि मेंजबान पौधे और कीटों पर जलवायु प्रभावों की एक श्रृंखला होगी, मेंजबान पौधे-कीट-प्राकृतिक दुश्मनों के ट्राइट्रोफिक संबंध पर संचयी प्रभाव और बढ़ जाएगा। मेंजबान हालांकि उच्च तापमान पर कमजोर जीवन चरणों को अधिक तेज़ी से पारित कर सकते हैं, परजीवीवाद की संभावना को कम कर सकते हैं जो परजीवी के अस्तित्व और गुणन पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। बदलती जलवायु के साथ, एंटोमोपैथोजेनिक कवक की घटनाओं को लंबे समय तक नमी की स्थिति के पक्ष में किया जा सकता है और सुखाने की स्थिति द्वारा सख्ती से कम किया जा सकता है (न्यूटन एट अल., 2011)। सतत फसल संरक्षण हेतु ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन के तहत विभिन्न कीटनाशकों की प्रभावशीलता, प्राकृतिक दुश्मनों और एंटोमोपैथोजेन की गतिविधि पर पैनी नजर बनाये रखने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

कीटों को जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग विविधता, बहुतायत भौगोलिक वितरण, विकास, जनसंख्या की गतिशीलता, कीटों के लिए होस्ट-पौधे प्रतिरोध और प्रबंधन हस्तक्षेपों की प्रभावशीलता प्रभावित करेंगे। कीटों और उनके प्राकृतिक शत्रुओं का वितरण भी जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न होने वाले फसल पैटर्न में परिवर्तन से प्रभावित होगा। हाल के वर्षों में भारतीय कृषि को कई कीट प्रकोपों कीट की स्थिति में वृद्धि और मौजूदा कीटों के लिए नए मेजबानों की रिपोर्ट का सामना करना पड़ा है। इसके कारण अनाज, अनाज फलियां, सब्जियां, फलों की फसलों और जंगल के पेड़ों को अधिक नुकसान हुआ है। विभिन्न क्षेत्रों और मेंजबानों में वायुमंडलीय तापमान और कार्बन डाइऑक्साइड के प्रति कीट प्रजातियों की प्रतिक्रिया में भिन्नता पाई गई है। विभिन्न फसल कीटों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव की जटिलता को समझने के लिए अनुसंधान के उन्मुखीकरण के साथ-साथ संबद्ध दीर्घकालिक नीतियों के कार्यान्वयन से कृषि उत्पादकता पर प्रत्याशित जलवायु परिवर्तन के खतरे को कम करने में मदद मिलेगी।

"राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूँगा है"

- महात्मा गाँधी

पटसन आधारित फसल प्रणाली में जैविक खाद और जैव उर्वरक की भूमिका

बिजन मजुमदार, अमित रंजन साहा, सितांशु सरकार, रितेश साहा , अल्का पासवान, सोनाली पाल मजुमदार, देबारती दत्ता एवं सौरव घोष

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

आधुनिक कृषि में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग के बिना लगातार बढ़ती आबादी के भरण पोषण के लिए उच्च फसल उत्पादन के बारे में सोचना लगभग असंभव है। भूमि को आराम दिए बिना लगातार सघन खेती करने तथा उच्च फसल उत्पादकता के लिए रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से मृदा स्वास्थ्य दिन प्रति दिन खराब होती जा रही है । रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के अविवेकपूर्ण उपयोग ने कृषि उत्पादों की गुणवत्ता के साथ मानव और पशु स्वास्थ्य को भी प्रभावित किया है। साथ ही मृदा और जल प्रदूषण को भी बढ़ावा दिया है। कई बार, यह देखा गया है कि कम या अधिक पीएच मान के कारण, मृदा अम्लीय या क्षारीय हो जाती है और मृदा में पोषक तत्व मौजूद होने के बावजूद पौधे ऐसे मृदा से आवश्यक पोषक तत्वों को अवशोषित करने में असमर्थ होते हैं। मृदा की जल प्रतिधारण क्षमता पौधों को आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति कराने की क्षमता और पर्याप्त मात्रा में लाभकारी जीवाणुओं की उपस्थिति तथा मृदा में सामान्य रूप से कार्य करने की उनकी क्षमता मृदा की अच्छी स्वास्थ्य को इंगित करता है।

मृदा के उचित स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरक और जैविक खाद/जैव-उर्वरक या हरी खाद सहित एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का अनुसरण करने की हमेशा सलाह दी जाती है। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के अनुप्रयोग से मृदा की उचित पीएच और कार्बनिक कार्बन की मात्रा बनी रहती है। इसके साथ ही यह मृदा की जल प्रतिधारण क्षमता तथा बढ़ती फसलों को आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति कराने की क्षमता को बनाए रखने में मदद करता है। यह प्रबंधन प्रणालियाँ न सिर्फ फसल उत्पादकता एवं खाद्य सामग्री की गुणवत्ता को बढ़ाने में मदद करेगा, बल्कि इसके उपयोग से कीट और रोग के हमले के कारण फसल उत्पादन में होने वाली नुकसान को भी कम किया जा सकता है। अतः कृषक समुदाय को केवल रासायनिक उर्वरक का उपयोग न करके उसके स्थान पर निर्धारित रासायनिक उर्वरक के साथ जैविक खाद या जैव उर्वरक तथा हरी खाद का प्रयोग करना चाहिए, ताकि आने वाले वर्षों में मृदा को स्वस्थ, उपजाऊ और उत्पादक बनाए रखा जा सके तथा सीमित कृषि योग्य भूमि से हम देश की बढ़ती हुई जनसंख्या का भरण पोषण कर सके।

पटसन की खेती में जैविक खाद/जैव-उर्वरक और हरी खाद का प्रयोग

जैविक खाद : पटसन की खेती में किसानों को खेत तैयार करते समय 12 से 18 क्विंटल गोबर खाद या कम्पोस्ट खाद एक एकड़ ज़मीन में डालकर मृदा में अच्छी तरह मिलाना चाहिए। गोबर की खाद या कम्पोस्ट की अनुपलब्धता होने के कारण किसान सरसों की खली या नीम की खली 240-300 किलोग्राम प्रति एकड़ की दर से पटसन की फसल की बुवाई के 3 से 4 सप्ताह पहले मृदा में अच्छी तरह मिला कर उपयोग कर सकते हैं। कभी-कभी नीम की खली और सरसों की खली की अधिक कीमत के कारण किसान इन सांद्रित खाद का उपयोग नहीं कर पाते हैं, ऐसे में किसान खेत की तैयारी के समय 240 से 300 किलोग्राम वर्मीकम्पोस्ट (केंचुआ खाद) प्रति एकड़ का उपयोग कर सकते हैं।

हरी खाद : यदि कोई पटसन किसान पटसन की खेती के लिए मृदा में किसी भी प्रकार की जैविक खाद का उपयोग करने में सक्षम नहीं है, तो वह पटसन की खेती से पहले खेत में हरी खाद का विकल्प चुन सकते हैं। इसके अंतर्गत पटसन की खेती से 30 दिन पहले किसान खेत में ढैंचा या सनई की खेती कर सकते हैं तथा जब फसल की उम्र 30 दिन हो जाती है, तो वह ढैंचा और सनई को काटकर हल्की सिंचाई से जोतकर मृदा में मिला सकते हैं। हरी खाद मृदा के स्वास्थ्य और उर्वरता की दृष्टि से गोबर की खाद और कम्पोस्ट से बेहतर मानी जाती है। हरी खाद

डालने से मृदा में कार्बनिक कार्बन, कार्बनिक पदार्थ और नाइट्रोजन की मात्रा काफी हद तक बढ़ जाती है।

जैव उर्वरक : पीजीपीआर (प्लांट ग्रोथ प्रोमोटिंग राइज़ोबैक्टीरिया) जड़ उपनिवेशी जीवाणु (रूट कॉलोनाइजिंग बैक्टीरिया) है तथा आमतौर पर जैव उर्वरक के रूप में जाने जाते हैं, हालांकि सभी पीजीपीआर जैव उर्वरक नहीं होतें, क्योंकि कुछ जड़ उपनिवेशी जीवाणु फाइटोपैथोजेन्स या पादप रोग को रोकने की क्षमता रखते हैं तथा पौधों के विकास में मदद करते हैं । इन जीवाणुओं को जैवकीटनाशकों (बायोपेस्टीसाइड्स) के रूप में जाना जाता है। कुछ पीजीपीआर जैव उर्वरकों और जैव कीटनाशकों दोनों के रूप में पौधों की वृद्धि में भी मदद करते हैं। आमतौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले पीजीपीआर *एज़ोटोबैक्टर, एज़ोस्पाइरिलम, स्यूडोमोनस, बैसिलस, एग्रोबैक्टीरियम, आर्थ्रोबैक्टर* और *एंटरोबैक्टर* की प्रजातियां हैं । पीजीपीआर जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण, फास्फोरस घुलनशीलता, लोहे की उपलब्धता को बढ़ाकर तथा पौधों के विकास हार्मोन का उत्पादन करके सीधे पौधों की वृद्धि में मदद करता है।

पीजीपीआर कभी-कभी रोगजनकों के प्रतिरोधक क्षमता को प्रेरित करके फाइटोपैथोजेन्स के दमन द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से पौधों के विकास में मदद करता है । पीजीपीआर के अलावा, कुछ जड़ पिंड जीवाणु (रूट नोड्यूल बैक्टीरिया) यानी फलीदार पौधों की जड़ नोड्यूल में मौजूद *राइजोबियम* की विभिन्न प्रजातियां जैविक नाइट्रोजन के प्रत्यक्ष निर्धारण द्वारा पौधों की वृद्धि में एक बड़ी भूमिका निभाते हैं। ये जीवाणु वास्तव में सहजीवी जीवाणु हैं, जो फलीदार पौधों के लिए नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करते हैं और बदले में पौधों से खाद्य सामग्री लेते हैं तथा इस प्रक्रिया में नाइट्रोजन की उपलब्धता बढ़ाकर पौधों के विकास में मदद करते हैं। फलीदार प्रजातियों और प्रचलित मृदा की स्थिति के आधार पर *राइजोबियम* 50 से 60 किलोग्राम प्रति है. प्रति वर्ष की दर से नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर सकता है।

पटसन की खेती में जैव-उर्वरक का उपयोग करके, फसल की उच्च उत्पादकता के साथ-साथ मृदा की उर्वरता को भी बढ़ाया जा सकता है। पटसन की बुवाई के समय 20 ग्राम *एजोटोबैक्टर* या *एजोस्पिरिलम* को प्रति किलो पटसन के बीज के साथ अच्छी तरह मिला कर प्रयोग किया जा सकता है । इन उपचारित पटसन के बीज को पंक्तिबद्ध बुवाई या छिटकवा बुवाई (ब्रॉड कास्टिंग) के माध्यम से बोया जा सकता है । पटसन के बीज के साथ *एजोटोबैक्टर* या *एजोस्पिरिलम* की मिश्रण प्रक्रिया को छाया में करना चाहिए। इस प्रकार मृदा में *एज़ोटोबैक्टर* या *एज़ोस्पाइरिलम* मिलने से पटसन की खेती के चार महीने के भीतर लगभग 20 से 40 किलोग्राम प्रति है. की दर से नाइट्रोजन का स्थिरीकरण किया जा सकता है। यदि कोई पटसन किसान बुवाई के समय *एज़ोटोबैक्टर* या *एज़ोस्पाइरिलम* का उपयोग करने में सक्षम नहीं है, तो वह पटसन की बुवाई के तीन सप्ताह बाद *एज़ोटोबैक्टर* या *एज़ोस्पाइरिलम* के साथ *फॉस्फोबैक्टर* फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु (फॉस्फेट सॉल्यूबिलाइजिंग बैक्टीरिया) का उपयोग कर सकता है। ऐसे में खड़ी फसल में 2 किलो *एज़ोटोबैक्टर* या *एज़ोस्पाइरिलम* के साथ 2 किलो *फॉस्फोबैक्टर* प्रति एकड़ मृदा में मिलाकर प्रयोग करें । ऐसा करने से *एज़ोटोबैक्टर* या *एज़ोस्पाइरिलम* 20 से 40 किलोग्राम प्रति है. की दर से नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर सकता है तथा फॉस्फोबैक्टर मृदा में मौजूद अघुलनशील फास्फोरस को उपलब्ध फास्फोरस में बदलकर फसल की उत्पादकता बढ़ा सकता है । इसके उपयोग से फास्फोरस के इस्तेमाल को भी कम किया जा सकता है। इसलिए पटसन किसान जैव उर्वरक का उपयोग कर सकते हैं, भले ही उन्होंने पटसन की मृदा में जैविक खाद का उपयोग किया हो। यह मृदा को उपजाऊ, उत्पादक और स्वस्थ बनाने में मदद करेगा। जैव उर्वरक की जरूरत बहुत कम मात्रा में होती है और लागत के हिसाब से यह काफी सस्ता होता है, इसलिए किसानों को पटसन और अन्य फसल के लिए रासायनिक खाद के साथ-साथ जैव उर्वरक का इस्तेमाल करना चाहिए।

मृदा स्वास्थ्य को बनाए रखने में जैव उर्वरक का महत्व

- जैव उर्वरक की बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है।
- यह नाइट्रोजन जैसे आवश्यक तत्व की पर्याप्त मात्रा में आपूर्ति कर सकता है।
- बीज अंकुरण और जड़ विकास में मदद करता है।
- पटसन की खेती के लिए नाइट्रोजन स्थिर करने वाले जीवाणु जैसे *एज़ोटोबैक्टर* एवं *एज़ोस्पाइरिलम* का उपयोग बहुत मददगार है।
- ये नाइट्रोजन स्थिरक जीवाणु (नाइट्रोजन फिक्सर) एक फसल की खेती में 20-40 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति है. की आपूर्ति कर सकते हैं।
- *एज़ोटोबैक्टर* में (कवक रोधी) ऐंटिफंगल गुण होते हैं इसलिए इसका उपयोग पटसन की फसल में कवक रोगों को कम करने में मदद करता है।
- *एज़ोस्पाइरिलम* मृदा में विभिन्न विकास वर्धक पदार्थों की आपूर्ति करता है।
- *एज़ोस्पाइरिलम* के द्वारा इंडोल एसिटिक एसिड (IAA) का उत्पादन जड़ के विकास में मदद करता है
- पटसन की खेती में *एज़ोटोबैक्टर* के साथ 75% नाइट्रोजन का उपयोग करने से नाइट्रोजन की अनुशंसित खुराक (100% नाइट्रोजन) की तुलना में 24% अधिक पटसन रेशों के उत्पादन होती है।
- *बेसिलस* और *स्यूडोमोनास* जैसे कुछ सूक्ष्म जीव मृदा में मौज़ूद अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील या उपलब्ध फास्फोरस में बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- ये फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु कई कार्बनिक अम्ल जैसे ऑक्सालिक एसिड, लैक्टिक एसिड, साइट्रिक एसिड आदि का उत्पादन करते हैं जो अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील बना देते हैं।
- इनके अलावा, फॉस्फेट घुलनशील सूक्ष्म जीव भी विकास वर्धक पदार्थों का उत्पादन करते हैं जिससे पौधों की विकास में वृद्धि होती हैं।
- लौह की कमी वाली मृदा में *स्यूडोमोनस* की प्रजातियों के उपयोग से पौधों द्वारा लौह के उच्च अवशोषण में मदद मिली है।

पटसन आधारित फसल प्रणाली में, पटसन के बाद, आमतौर पर किसान धान की खेती करते हैं। तरई क्षेत्र वाले धान कीखेती में *एज़ोला* और नील-हरित शैवाल (ब्लू-ग्रीन-एल्गि) का प्रयोग बड़ी मात्रा में की जाती है। इसके अलावा, धान की खेती में जैव-उर्वरक के रूप में *एज़ोस्पाइरिलम* या फास्फोरस घुलनशील जीवाणु का उपयोग किया जाता है।

धान की खेती में एज़ोला का प्रयोग

एज़ोला एक जलीय फर्न है, तरई क्षेत्र में धान की खेती में इसका उपयोग हरी खाद के रूप में किया जाता है। हरी खाद के रूप में धान की रोपाई से 2-3 सप्ताह पहले धान के खेत में पानी भरकर 500 किलोग्राम *एज़ोला* प्रति है. की दर से डालना पड़ता है जिससे इसकी वृद्धि तेज़ी से हो सके। 2 से 3 सप्ताह के बाद, पानी को निकाल कर *एज़ोला* को मृदा में अच्छी तरह मिलाना पड़ता है।

दूसरी प्रक्रिया में, धान की रोपाई के एक सप्ताह बाद 500 किलोग्राम *एज़ोला* प्रति है. की दर से प्रयोग किया जा सकता है। कुछ दिनों के बाद, *एज़ोला* मृदा के ऊपर एक हरी परत बना देगा। *एज़ोला* में मौजूद नाइट्रोजन स्थिरीकरण जीवाणु *एनाबेना* हवा में मौजूद नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर सकतें हैं। *एज़ोला* को मृदा में मिलाने पर यह जल्दी से विघटित हो जाता है और बहुत अच्छी गुणवत्ता वाली जैविक खाद का उत्पादन करता है। *एज़ोला* के प्रयोग से, नाइट्रोजन के अलावा मृदा में पोटेशियम और कार्बनिक कार्बन की मात्रा बढ़ जाती है। *एज़ोला* एक हरी परत बनाकर तरई क्षेत्र में धान की खेती में खरपतवार नियंत्रण में भी मदद करता है, जिससे खरपतवार नहीं पनपते।

धान की खेती में नील-हरित-शैवाल (ब्लू-ग्रीन-एल्गि) का प्रयोग

धान की खेती में जैव उर्वरक के रूप में नील हरित शैवाल (बीजीए) का प्रयोग बहुत उपयोगी पाया गया है। बीजीए में नाइट्रोजन स्थिरीकरण जीवाणु जैसे *एनाबेना, सायनो बैक्टीरिया* और *नोस्टॉक* की उपस्थिति बहुत महत्वपूर्ण है। ये

नाइट्रोजन स्थिरीकारक जीवाणु सीधे वायुमंडल से नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर धान के खेत में इसकी आपूर्ति करा सकते हैं । बीजीए तैयार करने के लिए, 20 मीटर लंबाई और 2 मीटर चौड़ाई में मेंड़ के साथ एक बिस्तर को पहले 10 सेमी ऊंचाई तक पानी से भरा जाता है, ताकि पानी की न्यूनतम 2- 5 सेमी ऊंचाई हमेंशा बनी रहे। अब बीजीए के त्वरित विकास के लिए खेत में 5 किलो बीजीए और 2 किलो चूना डालना पड़ता है। बीजीए प्रयोग करने के 30 दिनों के बाद बिस्तर को सुखाना होता है। बिस्तर के शीर्ष पर बीजीए की एक मोटी परत बन जाती है। इस सूखे बीजीए को धान की रोपाई के 10 दिनों के बाद धान के खेत में 10 किलोग्राम प्रति है. की दर से उपयोग करना पड़ता है। धान की विकास के दौरान बीजीए लगभग 15 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति है. का स्थिरीकरण कर सकता है। बीजीए अपनी वृद्धि के दौरान मृदा में कुछ कार्बनिक अम्लों का भी स्राव करता है, जो मृदा में मौजूद अघुलनशील फॉस्फेट को घोलकर मृदा में उपलब्ध फास्फोरस की मात्रा को बढ़ाने में मदद कर सकता है।

धान की खेती में *एज़ोस्पाइरिलम* और फास्फोरस घुलनशील जीवाणुओं का उपयोग

सीधी बुवाई वाले धान : एक एकड़ क्षेत्र के लिए आवश्यक धान के बीज को एक बोरी में रखा जाता है। एक कंटेनर में 15 से 20 लीटर पानी में 200 ग्राम *एज़ोस्पाइरिलम* और 200 ग्राम *फॉस्फोबैक्टर* डालें और घोल बना लें। घोल बनाने के बाद इसे धान के बीज के ऊपर अच्छी तरह से डालें ताकि धान के बीज के ऊपर एक परत बन जाए। गीले धान के बीज को बुवाई से पहले छाया में अच्छी तरह सूखा लेना चाहिए।

रोपित धान : 15 से 20 लीटर पानी में 1 किलो *एज़ोस्पाइरिलम* और *फॉस्फोबैक्टर* का घोल बनाएं। एक एकड़ क्षेत्र के लिए आवश्यक धान की पौध को कई बंडल में बाँट लें। अब धान की पौध के बंडलों को इस घोल में इस प्रकार रख दें कि धान की पौध की जड़ें 8 से 10 घंटे तक घोल में पूरी तरह से डूबी रहें। उसके बाद धान के पौधे को तुरंत धान के खेत में रोपित कर देना चाहिए। धान के बीज या पौध के बीज उपचार के लिए *एज़ोस्पाइरिलम* का उपयोग करने से वातावरण से नाइट्रोजन की उपलब्धता में मदद मिलती है और साथ ही यह धान की फसल की 30% नाइट्रोजन आवश्यकता को भी पूरा करता है। बीज उपचार के लिए *फॉस्फोबैक्टर* का उपयोग करने से यह मृदा में मौजूद अघुलनशील फॉस्फेट को घोलकर मृदा में फास्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाता है और धान की फसल के विकास में मदद करता है।

"आप हिन्दी को भारत का राष्ट्रभाषा बनाने का गौरव प्रदान करें। हिन्दी सब समझते हैं। इसे राष्ट्रभाषा बनाकर हमें अपना कर्तव्य-पालन करना चाहिए"

- महात्मा गाँधी

पैकेजिंग सामग्री के रूप में पटसन : प्लास्टिक का विकल्प

ए.के. सिंह, षम्ना ए., टी. गोस्वामी एवं जी. कर

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

परिचय

लोगों की आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रकार की पैकेजिंग सामग्री बाजर में उपलब्ध हैं। इनके निर्माण के लिए विभिन्न प्रकार के कच्चे माल और प्रौद्योगिकियों का उपयोग किया जाता है। उनमें से सबसे लोकप्रिय प्लास्टिक, कागज, गैर-बुना और बुने हुए बैग हैं। प्लास्टिक बैग गैर-नवीकरणीय संसाधनों से बनाए जाते हैं, जहां प्रमुख तत्व पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस हैं। पॉलीथीन-उच्च घनत्व (एचडीपीई), कम घनत्व (एलडीपीई) और रैखिक कम घनत्व पॉलीथीन (एलएलडीपीई) प्लास्टिक बैग के निर्माण के लिए व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले कच्चे माल हैं।

वैज्ञानिकों का अनुमान है कि हर साल 11 मिलियन मैट्रिक टन प्लास्टिक कचरा समुद्र में प्रवेश करता है। 1950 से 1970 के दशक के दौरान प्लास्टिक कचरे को संभालना अपेक्षाकृत आसान था क्योंकि उस दौरान बहुत कम प्लास्टिक का उत्पादन होता था। हालाँकि, प्लास्टिक कचरे का उत्पादन 1970 और 1990 के दशक के बीच तीन गुना से अधिक हो गया, जो प्लास्टिक निर्माण में समानांतर वृद्धि का संकेत देता है। इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में, पिछले चालीस वर्षों की तुलना में अधिक प्लास्टिक कचरे का उत्पादन किया गया था। वर्तमान में, संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनईपी) का अनुमान है कि सालाना 300 मिलियन टन से अधिक प्लास्टिक कचरा पैदा होता है। इसके अतिरिक्त, लगभग 98% एकल-उपयोग वाली प्लास्टिक वस्तुएं जीवाश्म ईंधन से आती हैं। वर्ष 2040 तक, यह अनुमान लगाया गया है कि जीवाश्म ईंधन से प्राप्त पारंपरिक प्लास्टिक के निर्माण, खपत और निपटान से संबंधित ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन (जीएचजी) की मात्रा दुनिया के कार्बन बजट का 19% होगी। अनुमानों के अनुसार, 1000 नदियाँ समुद्र में 0.8 से 2.7 मिलियन टन वार्षिक प्लास्टिक उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार हैं, जिनमें छोटी शहरी नदियाँ सबसे अधिक प्रदूषित हैं।

भारत ने वर्ष 2020 में 3.47 मिलियन मैट्रिक टन से अधिक प्लास्टिक कचरे का उत्पादन किया। देश में हर दिन औसतन 4059 टन प्लास्टिक कचरा पैदा हो रहा है (चित्र 1)। इस कचरे में से अधिकांश का पुनर्नवीनीकरण नहीं किया जाता है और बढ़ते शहरों और गांवों में पुरानी अपशिष्ट प्रबंधन प्रणाली के कारण पर्यावरण को नुकसान पहुंचाता है। दक्षिण एशियाई राष्ट्र ने 2019 में लगभग 13 मिलियन मैट्रिक टन प्लास्टिक कचरे को डंप किया या रिसायकल नहीं किया, जो अब तक की सबसे बड़ी राशि है। उद्योग निकाय फिक्की (2021) के अनुसार, भारत के 43 प्रतिशत प्लास्टिक का उपयोग पैकेजिंग में किया जाता है और ये सिंगल-यूज प्लास्टिक (एसयूपी) हैं। इसके अतिरिक्त, एसयूपी बैग अक्सर पुनर्नवीनीकरण होने के बजाय लैंडफिल में समाप्त हो जाते हैं, या वे हमारे शहरों, पार्कों और नदियों में कूड़े के रूप में हो जाते हैं। प्लास्टिक कचरा सैकड़ों वर्षों तक पारिस्थितिकी तंत्र में पड़ा रह सकता है, चाहे वह नदी में हो, समुद्र में हो या जमीन पर। यह मुद्दा अधिक व्यापक रूप से पहचाना जा रहा है, और सरकारें, व्यवसाय और अन्य हितधारक कार्रवाई करने में लगे हैं।

भारत में प्लास्टिक के उपयोग पर नीति

भारतीय राज्यों ने पिछले 20 वर्षों में प्लास्टिक के उपयोग को नियंत्रित करने का प्रयास किया है। भारत सरकार ने प्लास्टिक कचरे की समस्या से निपटने के लिए देश में पहले कदम को चिह्नित करते हुए 2011 में "प्लास्टिक अपशिष्ट (प्रबंधन और हैंडलिंग) नियम" लागू किया। इस रणनीति का उद्देश्य स्थानीय सरकारों द्वारा पुनर्चक्रण के लिए मूल्य निर्धारण तंत्र और दिशा-निर्देश बना कर पॉली बैग के उपयोग को कम करना है। वर्ष 2016 में इस नियमों को संशोधित कर "प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन नियम" नाम से बदल दिया गया था। 12 अगस्त 2021 को, " प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन संशोधन नियम" को पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा एसयूपी

को चरणबद्ध करने के लिए अधिसूचित किया गया था। नए नियमों का जोर 100 माइक्रोन से छोटे प्लास्टिक के पूर्ण निषेध, बहु-स्तरित पैकेजिंग के चरण-आउट और निर्माताओं, आयातकों और ब्रांड मालिकों के लिए पर्यावरण की दृष्टि से ध्वनि सुनिश्चित करने के लिए विस्तारित उत्पादक जिम्मेदारी (ईपीआर) की शुरूआत पर था। उनके उपयोगी जीवन के अंत तक प्लास्टिक उत्पादों का प्रबंधन। भारत 31 दिसंबर, 2022 तक 120 माइक्रोन से कम मोटाई वाले कैरियर बैग को भी गैरकानूनी घोषित कर देगा (चित्र 1)।

प्लास्टिक के संभावित विकल्प

प्लास्टिक के संभावित विकल्पों में से, रेशा का एक समूह जिसे बास्ट (bast) रेशा कहा जाता है, उन विकल्पों में से एक है जिनकी स्थायी और आर्थिक दोनों दृष्टिकोण से स्वीकार्यता है। प्रौद्योगिकी में हालिया प्रगति के कारण, आर्थिक रूप से और आसानी से विघटित होने वाले कपड़े बनाने के लिए बास्ट रेशा का उपयोग किया जा सकता है और अन्य प्राकृतिक सामग्रियों के साथ जोड़ा जा सकता है। पटसन बास्ट रेशा फसल का उदाहरण है जिसकी खेती अधिक मध्यम जलवायु में की जाती है और इसकी उच्च पैदावार होती है। यह रेशे की फसल अधिक लचीली होती है, इसकी खेती के लिए कम सिंचाई और जमीन का उपयोग होती है और 120 से 125 दिनों के भीतर कटाई की जा सकती है। पटसन अपनी लंबी जड़ की संरचना के कारण एक आदर्श रोटेशन फसल है जो उच्च कार्बन अनुक्रम और प्राकृतिक पत्ती और जड़ खाद के कारण मिट्टी की गुणवत्ता को फिर से भरने के साथ-साथ ऊपरी मिट्टी को बनाए रखने में मदद करता है जो मिट्टी में पौधों के पोषक तत्वों को पुन: उत्पन्न करता है। यद्यपि पटसन के उत्पादन और पैकेजिंग के लिए उनके रेशों के उपयोग को प्राचीन काल से उल्लेखित किया गया है, पर पिछली कुछ शताब्दियों में उनका महत्व कम हो गया है क्योंकि प्लास्टिक ने पैकेजिंग के लिए एक सामग्री के

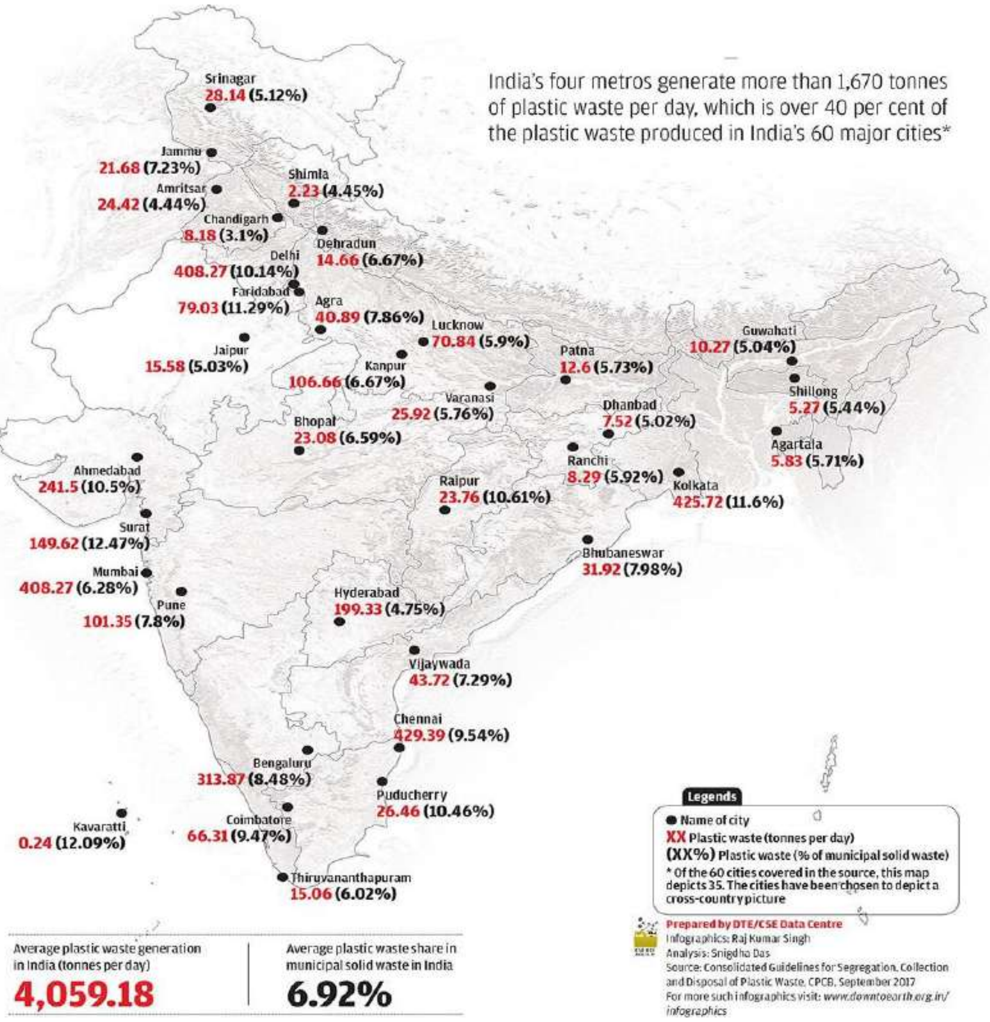

चित्र 1. भारतीय शहरों में प्रतिदिन प्लास्टिक कचरे का उत्पादन

रूप में लोकप्रियता हासिल की है।

पैकेजिंग सामग्री के कार्बन पदचिह्न

पैकेजिंग सामग्री की बढ़ती मांग ने इसके निपटान के साथ-साथ समग्र पर्यावरणीय पदचिह्न और पैकेजिंग सामग्री की स्थिरता से संबंधित विभिन्न मुद्दों को जन्म दिया है। कच्चे माल के उत्पादन से लेकर उत्पाद के अंतिम निपटान तक, उपयोग किए गए संसाधनों और पर्यावरणीय उत्सर्जन के रूप में एकत्रित सभी इनपुट और आउटपुट का एक जीवन चक्र आकलन (एलसीए) अध्ययन किया गया है। इस एलसीए अध्ययन में चुनी गई प्रणाली पटसन की खेती से लेकर पटसन की बोरियों के निपटान तक है। एक किलो पटसन बैग के उत्पादन के लिए ग्लोबल वार्मिंग क्षमता (GWP) लगभग -0.253 किलोग्राम CO_2 eq है। ऋणात्मक चिन्ह 120-125 दिनों में पटसन की फसलों की खेती द्वारा मिट्टी में CO_2 के शुद्ध अनुक्रम को इंगित करता है (चित्र 2)। कृषि फार्म स्तर पर 1 किलो कच्चे रेशा के उत्पादन के लिए लगभग 1.00 किलोग्राम CO_2 eq का उत्सर्जन होता है, और साथ ही वहीं मिट्टी में लगभग 1.26 किलोग्राम CO_2 का संचय भी होता है। पटसन के लकड़ी की छड़ें ईंधन के रूप में उपयोग किया जाता है, जो स्थानीय क्षेत्र और पटसन मिलों में समकक्ष जीवाश्म ईंधन और ईंधन की लकड़ी के प्रतिस्थापन के मामले में जीएचजी उत्सर्जन को कम करने में मदद करता है। एक पटसन बैग को पैकेजिंग के लिए प्राथमिक उपयोग के रूप में 30 से अधिक बार पुन: उपयोग किया जा सकता है। पुन: उपयोग की आवृत्ति परिस्थितियों पर निर्भर करती है, जैसे कि हैंडलिंग, सामग्री वजन, स्थान इत्यादि। सामान्य पर्यावरणीय परिस्थितियों में मिट्टी के साथ मिश्रित होने पर पटसन बैग 100 दिनों के भीतर मिट्टी में पच जाता है। कृषि फार्म से उपयोग और निपटान चरण तक पटसन बैग का समग्र जलवायु परिवर्तन प्रभाव शुद्ध कार्बन पृथक्कीरण है, यानी, पूरे जीवन-चक्र चरणों में उत्सर्जित होने की तुलना में अधिक CO_2 का मिट्टी में संचय होता है। अतिरिक्त अनुक्रमित कार्बन कार्बनिक पदार्थों में स्थिर कार्बन के रूप में छोड़ दिया जाता है, और इससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ जाती है। इस प्रकार, पटसन बैग जलवायु परिवर्तन के दृष्टिकोण से पर्यावरण के

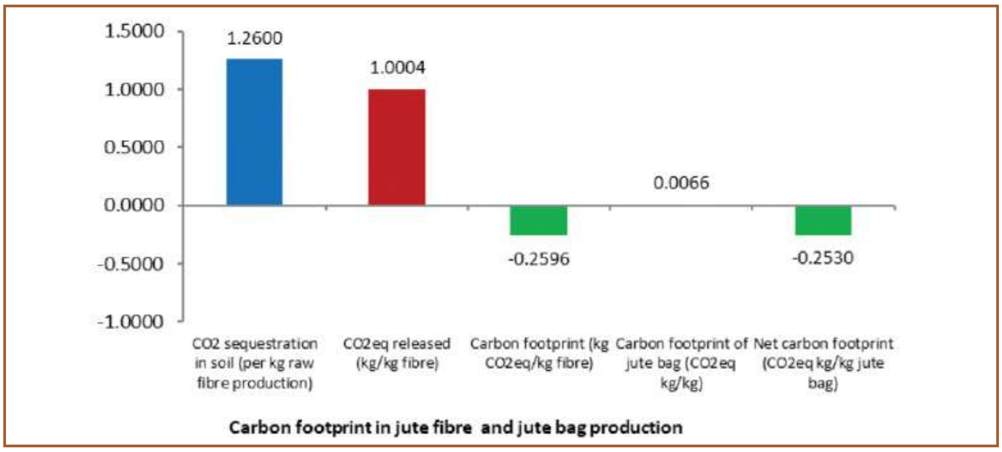

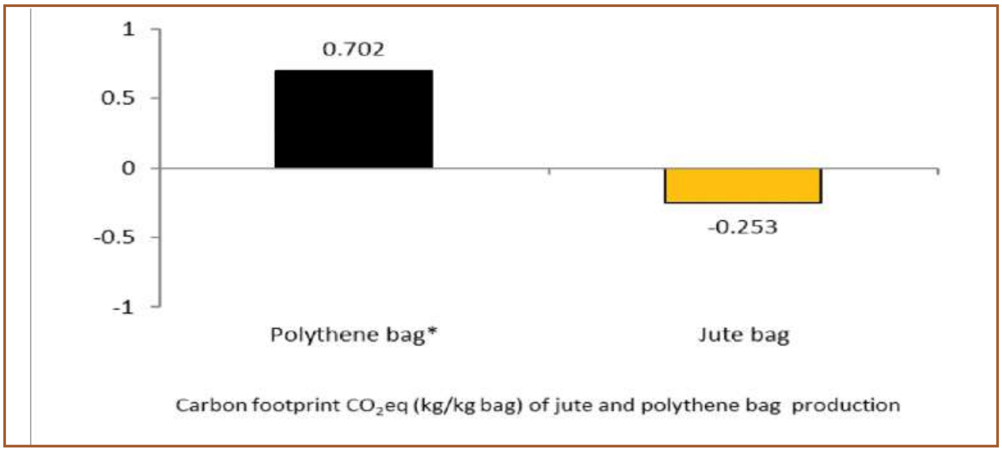

CPCB, 2018

चित्र 2. भारत में पटसन रेशा और प्लास्टिक बैग उत्पादन में कार्बन पदचिह्न

अनुकूल सामग्री है। प्लास्टिक के उपयोग को कम करने में बास्ट रेशा उत्पादों का उपयोग महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। कम कार्बन पदचिह्न वाले पटसन उत्पादों के उपयोग को लोकप्रिय बनाने से पर्यावरण की गुणवत्ता में सुधार के लिए लाभ मिल सकता है।

इस अध्ययन में प्लास्टिक बैग के प्रभावों की गणना और पटसन बैग के साथ तुलना की गई। सामान्य तौर पर, चित्र 2 यह दर्शाता है कि एलडीपीई (LDPE) प्लास्टिक बैग सामग्री का कार्बन पदचिह्न पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। एलडीपीई प्लास्टिक बैग के कुल उत्पादन का 60% हिस्सा है और यह आमतौर पर ठोस के रूप में पाया जाता है। लंबी कार्बन श्रृंखला और एलडीपीई की उच्च हाइड्रोफोबिसिटी इसे बायोडिग्रेडेशन के लिए अत्यधिक प्रतिरोधी बनाती है। सामान्य परिस्थितियों में, पॉलिमर को खनिज होने में दस दशकों से अधिक समय लगता है। इसके अतिरिक्त, जब प्लास्टिक को पर्यावरण में छोड़ दिया जाता है, तो यह सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड, पॉलीसाइक्लिक कार्बनिक पदार्थ और वाष्पशील कार्बनिक प्रदूषक जैसे खतरनाक पदार्थों का उत्सर्जन करता है। दूसरी ओर, पटसन कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करता है, जो ग्लोबल वार्मिंग का कारण बनने वाली मुख्य ग्रीनहाउस गैसों में से एक है। अध्ययनों से पता चलता है कि एक है. पटसन के पौधे लगभग 15 टन CO_2 को अवशोषित कर सकते हैं और अपने जीवन चक्र के दौरान लगभग 11 टन ऑक्सीजन छोड़ सकते हैं, जो बदले में CO_2 की वायुमंडलीय सांद्रता को कम करता है।

निष्कर्ष

सिंगल यूज प्लास्टिक (एसयूपी) उत्पाद वर्तमान में सभी पॉलिमर में सबसे व्यापक रूप से उत्पादित हैं। चीन के बाद अमेरिका और भारत एसयूपी के अगले दो सबसे बड़े उत्पादक हैं। पेट्रोलियम, एक गैर-नवीकरणीय प्राकृतिक संसाधन, का उपयोग प्लास्टिक की थैलियों को बनाने के लिए किया जाता है, जो एक मूल्यवान प्राकृतिक संसाधन को समाप्त कर देता है। एलडीपीई वाहक बैग के छोटे जीवन काल के परिणामस्वरूप, अपशिष्ट प्लास्टिक की अधिक मात्रा भूमि भरने (landfill) में समाप्त हो जाती है, एवं पर्यावरण और जीवित चीजों के स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचाती है। इसकी तुलना में, पटसन बैग के निर्माण के लिए केवल प्राकृतिक रूप से उगाए गए रेशों की आवश्यकता होती है। चूंकि पटसन प्राकृतिक रेशा है, इसलिए वे अपने कृषि चरणों के दौरान पर्याप्त मात्रा में कार्बन का स्राव करते हैं। परिणामस्वरूप, पटसन का जीएचजी (GHG) उत्सर्जन नकारात्मक पाया गया। हमारे प्राकृतिक संसाधनों के नुकसान को रोकने के लिए, पटसन से बने बैग प्लास्टिक बैग की तुलना में अधिक पर्यावरण के अनुकूल हैं। पटसन के थैले प्लास्टिक की थैलियों से भी अधिक टिकाऊ होते हैं क्योंकि उनका पुन: उपयोग किया जा सकता है, मजबूत होते हैं और लंबे समय तक इस्तेमाल किया जा सकता है।

"हिन्दी सरल भाषा है। इसे अनायास सीखकर लोग
अपना काम निकाल लेते हैं"

- जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी

पटसन किस्मों का विकास : एक अवलोकन

जितेंद्र कुमार मीना, कुमार निशांत चौरसिया, त्रिभुवन आर, नीतू मोहन, लावण्या ए.के., शाहिद मुख्तार एवं जीवन मित्र

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

व्यापार उद्योग में निवेश के रूप में काम करने के लिए केवल कुछ फसल प्रजातियों को पूरी तरह से नए वातावरण के अनुकूल बनाया गया है, पटसन इन अग्रदूतों में से एक है। इस फसल की खेती मोटे रेशों की मांग को पूरा करने के लिए सदियों से की जा रही है। प्रारम्भिक तौर पर, पटसन की खेती मार्च माह से लेकर अगस्त माह तक एकल फसल के रूप में की जा रही है। उच्च वर्षा की स्थिति में, सफ़ेद पटसन (*सी.कैप्सुलेरिस*) को तीन प्रमुख गुणों के कारण शीघ्र वृद्धि अवस्था के दौरान समय से पहले फूल आने की सहिष्णुता, जलजमाव की स्थिति का सामना करने की क्षमता और उन्नत गुणवत्ता वाले रेशा का उत्पादन तोषा पटसन (*सी.ओलिटोरियस*) से अधिक पसंद किया गया। इस दौरान किसानों द्वारा *सी.ओलिटोरियस* को वरीयता दी गई, जिससे खेती कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित रह गई थी। हालांकि, पिछले पचास वर्षों के दौरान पटसन की खेती में बहुत काफी बदलाव आया है। अब तोषा पटसन की खेती 90 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल पर की जा रही है, जबकि सफेद पटसन का क्षेत्रफल खेती के तहत कुल क्षेत्रफल का 10 प्रतिशत तक सीमित रह गया है। पटसन आधारित कृषि प्रणाली में पिछले 50-60 वर्षों में काफी बदल गई है। उत्पादकता और गुणवत्ता में सुधार हेतु प्रजनकों के समक्ष अनेक चुनौतियों के कारण खेती की शैली तथा निर्देशित प्रजनन प्रयासों में काफी बदलाव आया है।

स्वतंत्रता से पहले पटसन क़िस्मों का विकास

पश्चिम बंगाल के बर्दवान जिले में आर.एस.फिनलो द्वारा वर्ष 1904 में व्यवस्थित पटसन सुधार का कार्य शुरू किया गया। इसके बाद ढाका में वर्ष 1939 में पटसन कृषि अनुसंधान प्रयोगशाला (जेएआरएल) में प्रजनन कार्य किए गए। *कैप्सुलेरिस* पटसन में किस्मों का विकास हेतु वर्ष 1900-1920 के दौरान चयन माध्यम से कार्य शुरू किया गया। पहली पटसन किस्म, काक्या बॉम्बे को वर्ष 1916 में विकसित किया गया। काक्या बॉम्बे में और सुधार के परिणामस्वरूप वर्ष 1919 में डी-154 विकसित हुआ, जो *क्लोरोसिस* के प्रति कम संवेदनशील और तना जड़ के लिए अधिक प्रतिरोधी थी। पहली तोषा पटसन किस्म डी-38, जिसे आमतौर पर चिनसुराह ग्रीन (सीजी) के रूप में जाना जाता है, चयन के माध्यम से वर्ष 1915 में विकसित किया गया। यह तोषा पटसन की लंबी अवधि वाली एकमात्र किस्म है।

स्वतंत्रता के बाद क़िस्मों का विकास : बदला हुआ परिदृश्य

वर्ष 1947 में भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद उस समय का प्रमुख पटसन उत्पादन क्षेत्र जो वर्तमान बांग्लादेश के अंतर्गत आता है, देश से अलग हो गया। अतः पटसन मिलों को कच्चा माल की आपूर्ति बनाए रखने के लिए उत्पादन क्षेत्रों की पहचान करना भारतीय पटसन शोधकर्ताओं के लिए प्रमुख चुनौती बन गई। नतीजन पटसन प्रजनकों को व्यापक अनुकूलन वाले नए क्षेत्रों के लिए उपयुक्त किस्मों को विकसित करने का निर्देश दिया गया। पटसन शोधकर्ताओं ने वर्ष 1948-52 से धान अनुसंधान केन्द्र, चिनसुराह, हुगली, पश्चिम बंगाल में पटसन उत्पादन से सम्बंध शोध कार्य आरम्भ किया।

वर्ष 1953 के दौरान, पटसन कृषि अनुसंधान संस्थान, पश्चिम बंगाल के उत्तर 24 परगना जिले के साहेब बगान, नीलगंज, बैरकपुर में अस्तित्व में आया जो वर्ष 1990 में केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान के नए नाम से जाना जाता है। यहां पर दो बहुत ही लोकप्रिय किस्में, जे.आर.सी.-212 और जे.आर.सी.-321 को चयन माध्यम से विकसित कर इसे वर्ष 1954 में जारी किया गया। जे.आर.सी.-212 की परिपक्वता डी-154 के समान थी लेकिन बाद में बहुत अधिक उपज प्राप्त होने लगी। जबकि, जे.आर.सी.-321, निचले इलाकों में खेती के लिए उपयुक्त थी। यह उच्च उपज और जल्दी परिपक्वता के साथ, बेहतर गुणवत्ता वाले रेशा उपज

देती थी। एस किस्म ने किसानों को पटसन-चावल फसल प्रणाली में पटसन की खेती करने में सक्षम बनाया। हालांकि, वर्ष 1970 और 1980 के दशक में विकसित अन्य *कैप्सुलेरिस* किस्में लंबी अवधि (150 - 160 दिन) वाली थीं, जिन्हें धीरे-धीरे उच्च उपज वाली तोषा पटसन (*ओलिटोरियस*) किस्मों द्वारा विस्थापित कर दिया गया।

तोषा पटसन में शीघ्र पुष्पन प्रतिरोध का विकास एक पथ प्रवर्तक उपलब्धि थी। इसकी उत्पादकता अधिक थी, किन्तु प्रचलित फसल प्रणाली के लिए उपयुक्त नहीं था; क्योंकि किसानों को सफेद पटसन की तुलना में लगभग एक महीने बाद इसे बोना पड़ता था। इसके अलावा, उच्च वर्षा की स्थिति में *कैप्सुलेरिस* पटसन अधिक लाभप्रद था। हालांकि, बाद में वर्षा धीरे-धीरे कम हो गई, विशेष रूप से दक्षिण बंगाल में जहां *ओलिटोरियस* पटसन ने *कैप्सुलेरिस* पटसन का स्थान लेना शुरू कर दिया। फिर भी, वर्ष 1970 के दशक के दौरान पटसन की खेती के क्षेत्र में *कैप्सुलेरिस* किस्मों (*कैप्सुलेरिस : ओलिटोरियस* = 75:25) का पकड़ बहुत अच्छा था। अफ्रीका से एक विदेशी जर्मप्लाज्म सूडान ग्रीन (एसजी), जिसमें समय से पहले फूल प्रतिरोध की पहचान की गई। इसे वंशावली चयन द्वारा जे.आर.ओ.-632 और जे.आर.ओ.-620 के साथ संकरण किया गया, जिसके परिणामस्वरूप सत्तर के दशक में क्रिजैफ, बैरकपुर में जे.आर.ओ.-524, जे.आर.ओ.-7835 और जे.आर.ओ.-878 जैसी किस्में विकसित हुई। इन तीन किस्मों में जे.आर.ओ.-524 (नवीन) ने तेजी से कैप्सुलेरिस किस्मों को प्रतिस्थापन करना शुरू कर दिया। वर्ष 1977 में जारी होने के कारण, यह 90 के दशक की शुरुआत में किसानों के बीच लोकप्रिय हो गई और अभी भी इसका प्रभुत्व बना हुआ है। यह 120 दिनों के भीतर ही कटाई योग्य परिपक्वता अवस्था तक पहुँच जाती है। यह शीघ्र पुष्पन प्रतिरोधी तथा कीड़े और मकोड़ो के हमले के प्रति मध्यम सहनशील है। इससे करीब 34-36 क्विं./है. रेशा उपज की प्राप्ति होती है।

मांग में कमी : किस्मों के विकास पर प्रभाव

अंतरराष्ट्रीय और घरेलू बाजार में सस्ते कृत्रिम रेशे के आगमन और विभाजन पश्चात वर्तमान बांग्लादेश में पटसन उत्पादक क्षेत्र चले जाने से पटसन रेशे की मांग और आपूर्ति को प्रभावित करने वाली दो प्रमुख कारक थे। बाजार में पटसन उत्पादों की कम मांग के कारण पटसन मिलों की तालाबंदी के कारण पटसन की खेती में गिरावट आई। ऐसी परिस्थितियों में, पटसन किसानों की प्रमुख चिंता उत्पादकता के बजाय रेशा मूल्यों में उतार-चढ़ाव की हो गई थी। सूडान ग्रीन की तरह तंजानिका-1, तंजानिया के एक विदेशी नस्ल की पहचान समय से पूर्व पुष्पण प्रतिरोध के लिए की गई थी। संकरण कार्यक्रम (IC-15901 x Tanganyika-1), जे.आर.ओ.-8432 (शक्ति) में इस नस्ल का उपयोग करते हुए, वर्ष 1999 में इसे विकसित कर जारी किया गया था, जो जे.आर.ओ.-524 की तुलना में 8-12 प्रतिशत अधिक उत्पादन देता है। एक अन्य किस्म, जे.आर.ओ.-204 (सुरेन), जिसे वर्ष 2007 में जारी किया गया था, इस ने 36-38 क्विंटल/है. रेशा उपज क्षमता के साथ जे.आर.ओ.-524 और जे.आर.ओ.-8432 दोनों से बेहतर प्रदर्शन किया। इस किस्म की उच्च क्षमता के कारण और यह किसानों के बीच तेजी से लोकप्रिय हो रही है।

मांग में पुनरुत्थान : विविध प्रयोग और जलवायु में लचीलापन

पिछले एक दशक में पर्यावरणीय रूप से खतरनाक कृत्रिम रेशे की बढ़ती उपभोग ने पटसन आधारित उत्पादों के पुनरुत्थान से पटसन की नई किस्मों की मांग द्वारा पटसन उद्योग के लिए नए रास्ते खोल दिए हैं। पटसन की खेती पर्यावरण प्रदूषण को कम करने और कार्बन क्रेडिट बढ़ाने के प्रमुख समाधानों में से एक है। इसके अलावा, पटसन रेशा के प्रयोग को पिछले वर्षों में रेशा कंपोजिट से लेकर टेक्सटाइल ब्लेंड्स और जियोटेक्सटाइल तक बढ़ाया गया है। जिनमें से प्रत्येक अलग-अलग उत्पाद के लिए उपयुक्त किस्मों की आवश्यकता होती है। भू-टेक्सटाइल सामग्री को स्थायित्व और क्षमता की आवश्यकता होती है, जिसके लिए बेहतर रेशा क्षमता और कम गिरावट वाली किस्मों की आवश्यकता होती है। दूसरी ओर, कुछ किस्मों को टेक्सटाइल सामग्री में सम्मिश्रण के लिए कम अशुद्धि वाले महीन रेशा की आवश्यकता होती है। वर्ष-2002 के दौरान, जे.आर.ओ.-128 (सूर्या) को 35-40 क्विंटल/है. की उपज क्षमता के साथ गुणवत्तायुक्त रेशा (2.7 टेक्स महीनता) के रूप में जारी किया गया था। वर्ष-2005 के दौरान S-19 (सुबाला) को उच्च उपज (35-40 क्वि./हे.[1]) और बेहतर गुणवत्ता वाले

रेशा (शुद्धता 2.7 टेक्स शक्ति 25.95 ग्रा./टेक्स कम लिग्निन सामग्री के साथ) के लिए जारी किया गया। इसे मार्च के मध्य में बोया जा सकता है । जे.बी.ओ.-1(सुधांशु), जे.आर.ओ.-2407 (2.30 टेक्स) और सी.एम.-1 (2.57 टेक्स) जैसी नई किस्मों में बेहतर रेशा की सूक्ष्मता है जो कई कपड़ा और गैर-वस्त्र विविध प्रयोगों के लिए अधिक उपयुक्त है। सन-2018 में एक और तोषा पटसन किस्म NJ-7010 (रैंट) जारी किया गया है, जिसे शीघ्र पुष्पण प्रतिरोध के लिए जाना जाता है। यह वर्षा आधारित और सिंचित स्थितियों के लिए मार्च के मध्य में बुवाई के लिए उपयुक्त है। यह किस्म पटसन चावल फसल प्रणाली के लिए अधिक उपयुक्त है। सन-2020 में नवीनतम ओलिटोरियस पटसन किस्म, जे.आर.ओ.एम.यू.-1 जारी किया गया है, जिसमें उच्च उपज क्षमता और बेहतर रेशा गुणवत्ता है। यह प्रसिद्ध तोषा पटसन किस्म जे.आर.ओ.-204 से गामा किरण प्रेरित उत्परिवर्तित चयन है।

कैप्सुलेरिस पटसन में, जे.आर.सी.एम.- 2 (1.25 टेक्स), के.जे.सी.-7 (1.30 टेक्स), जे.आर.सी.-9057 (1.31 टेक्स) और जे.बी.सी.-5 (1.45 टेक्स) कपड़ा सम्मिश्रण के लिए सफेद पटसन की किस्में हैं। इन नई किस्मों की उपज क्षमता तथा रेशा महीनता अधिक है।

भाकृअनुप-क्रिजैफ देश में पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों में सुधार कार्यक्रम के लिए नोडल संस्था है। संस्थान ने नई किस्मों में वांछनीय गुणों को सफलतापूर्वक शामिल किया है। जिससे रेशा की उपज (राष्ट्रीय औसत) को 11 क्विं./है. (1960) से बढ़ कर 32 क्विं./है. हो गई है। पटसन रेशों की कुछ महत्वपूर्ण और लोकप्रिय किस्मों के साथ-साथ उनकी संभावित उपज और विशेषताओं का उल्लेख नीचे किया गया है।

तोषा पटसन की किस्में अनुशंसित क्षेत्र, उपज क्षमता और अन्य विशेष लक्षण

जे.आर.ओ.-204 (सुरेन) :- यह किस्म समय से पहले पुष्पण के लिए अत्यधिक प्रतिरोधी है। इसे मार्च के पहले सप्ताह से बोया जा सकता है। असम, बिहार, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल में आसानी से कई फसल प्रणालियों में समायोजित किया जा सकता है। इस किस्म की उपज क्षमता 40 क्विं./है. तक है। इसके साथ ही बेहतर गुणवत्ता वाली रेशा (2.3-2.4 टेक्स) का भी उत्पादन होता है, जिसकी शक्ति 27.10 ग्राम/टेक्स तक है। इसका रेशा गठान दोषों और जड़ सामग्री से मुक्त होती है।

जे.बी.ओ.-2003-एच (ईरा) :- यह किस्म देश के पूरे तोषा पटसन उत्पादक क्षेत्र के लिए मार्च के मध्य से अप्रैल के अंतिम सप्ताह बोने के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की उपज क्षमता 35 क्विं./है. तक है। यह किस्म जैविक तनाव के लिए बेहतर प्रतिरोधी रेशा कम दोष और जड़ सामग्री वाली होती है।

एस-19 (सुबाला) :- इसे पश्चिम बंगाल, असम, बिहार और उड़ीसा के लिए मार्च के अंतिम सप्ताह से अप्रैल के अंत तक बुवाई के लिए अनुशंसित की गई है। इसकी उपज क्षमता 30 क्विंटल/है. तक है एवं रेशा गुणवत्ता ग्रेड टीडी-2 है। इस किस्म को तना सड़न, जड़ सड़न और एन्थ्रेक्नोज के प्रति सहिष्णु, पीला घुन के लिए अतिसंवेदनशील, सेमीलूपर और तना घुन के लिए मध्यम सहिष्णु है।

जे.आर.ओ.जी-1 (ऋतिका):- यह किस्म मार्च के मध्य से अप्रैल माह के अंत तक बुवाई के लिए तोषा पटसन उत्पादक राज्यों के लिए अनुशंसित है। इसकी उपज क्षमता 40 क्विं./है. तक है। यह किस्म शीघ्र पुष्पन प्रतिरोधी, गुणवत्तायुक्त रेशा, अजैविक तनाव के प्रति सहिष्णु, जड़ सड़न और तना सड़न रोग प्रतिरोधी है।

जे.आर.ओ.-2407 (समाप्ति):- यह किस्म मार्च की शुरुआत में बुवाई के लिए विशेष रूप से पश्चिम बंगाल, असम, बिहार और ओडिशा राज्यों के क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इसका तना गहरे लाल रंग का होता है, जिसकी किस्म जिसकी औसत उपज 33.82 क्विं./है. तक है। इसमें समय पूर्व पुष्पन प्रतिरोधी विशेषता है। प्रारंभिक चरण में यह सूखा प्रतिरोधी और बाद में जल जमाव को सहन करने योग्य होती है।

सी.ओ.-58-(सौरभ):- यह किस्म वर्षा आधारित स्थिति और उन क्षेत्रों में जहां पटसन के बाद अमन धान लगाया जाता है, जैसी जगह में मध्यम और उच्च भूमि के लिए उपयुक्त है। इसकी उपज क्षमता 30 क्विं./है. तक है। इसकी फली नॉन-शैटरिंग प्रकार की होती है। यह शीघ्र पुष्पन प्रतिरोधी, उन्नत गुणवत्तापूर्ण रेशा, प्रमुख कीट और रोग प्रतिरोधी होती है।

जे.आर.ओ.एम.यू.-1(प्रदीप):- यह किस्म पश्चिम बंगाल, ओडिशा, बिहार और असम के लिए अनुशंसित है। इस किस्म

की रेशा उपज क्षमता 35.0 क्विं./है. तक है। यह प्रमुख कीटों और बीमारियों (तना सड़न, जड़ सड़न और सेमीलूपर, बिहार रोमिल कैटरपिलर और पीला घुन) के प्रति प्रतिरोधी है। यह मार्च के अंत से अप्रैल माह के मध्य तक बुवाई के लिए उपयुक्त है। यह शीघ्र पुष्पन प्रतिरोधी, हरा तना युक्त औसत उपज 32.89 क्विं./है. वाली किस्म है। इसकी रेशा शक्ति (20.80 ग्रा./टेक्स) और महीनता (2.90 टेक्स) होती है।

जे.आर.ओ.-524 (नवीन) :- यह किस्म विशेष रूप से पश्चिम बंगाल, असम, बिहार और ओडिशा के पटसन उगाने वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। वर्तमान में इस किस्म का बांग्लादेश निर्यात किया जा रहा है। इसकी रेशा उपज क्षमता 40 क्विं./है. तक है। यह पीले मकड़ी कीट के प्रति कम संवेदनशील है और अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में जड़ सड़न रोगों के प्रति प्रतिरोधी है

सफेद पटसन की किस्म अनुशंसित क्षेत्र, उपज क्षमता और अन्य विशेष लक्षण

के.जे.सी.-7 (श्रेष्ठा) :- मध्यम भूमि में विशेष रूप से ओडिशा, उत्तर प्रदेश और असम के लिए उपयुक्त है। यह शीघ्र पुष्पन प्रतिरोधी, 285-300 से.मी. लम्बाई, इसकी फली नॉन-शैटरिंग प्रकार की और बीज चॉकलेट भूरे रंग की होती है। इसे मार्च की शुरुआत से अप्रैल माह की शुरुआत के लिए उपयुक्त पाया गया है। इसकी औसत रेशा उपज 28-30 क्विं./है. तथा उपज क्षमता 35 क्विं./है. है।

जे.आर.सी.-9057 (ईशानी):- यह किस्म मार्च से अप्रैल के अंत तक बुवाई के लिए पूरे पटसन उत्पादक क्षेत्रों, विशेष रूप से पश्चिम बंगाल, असम, बिहार और ओडिशा के लिए

उच्च उपज देने वाली तोषा पटसन *(कोरकोरस ओलिटोरियस)* की किस्म

उच्च उपज देने वाली सफ़ेद पटसन *(कोरकोरस कैप्सुलेरिस)* की किस्म

अनुकूलित है। अमन धान के बाद पटसन के प्रचलित फसल क्रम के लिए अत्यधिक उपयुक्त है। रेशा की उपज क्षमता 36 क्विं./है. है। यह हल्के लाल पिग्मेंटेशन वाली हरा तना वाली होती है और इसकी औसत लम्बाई 3.35 मीटर है। रेशा महीन (1.31 टेक्स) होता है। स्टेम रॉट और पटसन सेमी-लूपर के प्रति अत्यधिक सहिष्णु है।

जे.आर.सी.-517 (सिद्धार्थ):- यह किस्म मध्य मार्च से मध्य अप्रैल तक पूरे *कैप्सुलर* पटसन उत्पादक क्षेत्र में बुवाई के लिए उपयुक्त है। वर्षा आधारित स्थिति में रेशा उपज क्षमता 30 क्विं./है. है और रेशा अच्छी गुणवत्तायुक्त होता है। इसकी फली नॉन-शैटरिंग हैं। वृद्धि की प्रारंभिक चरण में यह किस्म सूखा सहिष्णु है और बाद में जल जमाव का भी सामना कर सकती है।

जे.आर.सी.-532 (शशि) :- यह किस्म पूरे *कैप्सुलेरिस* पटसन उत्पादक क्षेत्र में मध्य मार्च से मध्य अप्रैल तक बुवाई के लिए उपयुक्त है। वर्षा आधारित स्थिति में रेशे की उपज क्षमता 30 क्विं./है. है। इसकी फली नॉन-शैटरिंग हैं। वृद्धि के प्रारंभिक चरण में सूखा सहिष्णु होती हैं और बाद की अवस्था में जल जमाव को भी सहन कर सकती है।

जे.आर.सी.-321 (सोनाली):- यह एक स्वदेशी जर्मप्लाज्म 'हेवटी' के चयन से प्राप्त हुआ है। यह पूरे *कैप्सुलरिस* पटसन क्षेत्र में मध्यम और ऊपर की भूमि के लिए उपयुक्त है। उत्तर बंगाल, बिहार और असम के बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में फरवरी के अंत से मार्च के मध्य तक बुवाई के लिए विशेष रूप से अनुकूल है। पत्ती के डंठल तथा फली लाल रंग की होती है। जबकि तना ताँबे जैसा लाल होता है। रेशा बेहतरीन गुणवत्ता (1.50 टेक्स) वाली तथा उपज क्षमता 32.67 क्विं./है. है।

जे.आर.सी.-212 (सबुज सोना):- यह स्वदेशी जर्मप्लाज्म (डक्का) के चयन से प्राप्त हुआ है। यह उत्तरी बंगाल, बिहार और असम के निचले बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों और उत्तर प्रदेश के तराई भागों में मध्य मार्च से मध्य अप्रैल तक बुवाई के लिए विशेष रूप से अनुकूलित है। इसमें शीघ्र पुष्पन प्रतिरोधी क्षमता होती है। इसका तना हरे रंगा का होता है। इस पौधे की ऊंचाई मध्यम, पत्ती पर्णदलनुमा, शिरा, पर्णवृंत और अनुपत्र का रंग भी हरा होता है। इसकी फली नॉन-शैटरिंग वाला होता है। इसका बीज आकार में बड़ा और चॉकलेट भूरा रंग का होता है। पत्ती तथा डंठल का रंग हरा होता है। इसकी रेशा (1.61 टेक्स) बहुत अच्छी तथा महीन होती है। इसकी उपज क्षमता 27.57 क्विं./है. है।

जे.आर.सी.-7447 (श्यामली):- यह देश के सम्पूर्ण सफेद पटसन उत्पादन क्षेत्र में मध्यम और ऊपरी भूमि पर मार्च माह के मध्य से इसकी बुवाई करना उपयुक्त होता है। यह नाइट्रोजन (N) उर्वरक की अधिक मात्रा का उपयोग करने में विशेष रूप से सक्षम है। इस किस्म में समय से पूर्व पुष्पन प्रतिरोधी गुण है। इसके डंठल के नीचे की पत्ती (stipule), तना का रंग हरा, पत्ती के डंठल का रंग हरा होता है। इसकी रेशा काफी मजबूत और उपज क्षमता 26.12 क्विं./है. है। इसकी रेशा गुणवत्ता (1.71tex) बहुत उन्नत होती है।

जे.आर.सी.-4444 (बलदेव):- यह किस्म जे.आर.सी.-12 x D-154 के बीच क्रॉस चयन से विकसित हुई है। यह क्षेत्र में मध्यम और ऊपरी भूमि पर मार्च के मध्य से अप्रैल के मध्य तक बुवाई के लिए उपयुक्त है। इसकी खेती विशेष रूप से ओडिशा राज्य के लिए उपयुक्त है। इसमें शीघ्र पुष्पन प्रतिरोधी क्षमता है। पत्ती लेमिना रंग का होता है, इसमें शिराएं होती है, डंठल और इसके नीचे पत्ती का रंग हरा होता है, तने का रंग भी हरा होता है। इसके पौधे की ऊँचाई मध्यम होती है, जिसमें फली नहीं होती है। बीज का आकार बड़ा, तथा चॉकलेट भूरा रंग का होता है। रेशा की गुणवत्ता बहुत अच्छी (1.90 टेक्स) और इसकी उपज क्षमता 25.00 क्विं./है. है।

जे.आर.सी.-698 (शरबंती सफेद):- यह किस्म उत्तर बंगाल, असम और बिहार के निचले बाढ़ प्रभावित पटसन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इसमें शीघ्र पुष्पन प्रतिरोध क्षमता विद्यमान है, पत्ती लेमिना रंग का होता है, इसमें शिराएं होती है, डंठल और इसके नीचे पत्ती का रंग हरा होता है। अनुमानतः इसमें 50 प्रतिशत फूल देर से आते हैं। तने का रंग हरा तथा पौधे की ऊँचाई मध्यम होती है। इसका बीज छोटा (3.30 ग्राम) तथा चॉकलेट भूरा रंग का होता है। इसका रेशा बहुत महीन (1.80 टेक्स) और उपज क्षमता 28.96 क्विं./है. होता है।

बिधान पाट-1:- इस किस्म की बुवाई मार्च की शुरुआत से अप्रैल के अंत तक के लिए उपयुक्त है। बुवाई के 60-65 दिनों के बाद इसे काटा जा सकता है। इसकी खेती पश्चिम बंगाल के

बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों के लिए अनुकूल है। इसकी फलियां न झरने वाली किस्म की होती है। यह प्रकाश हेतु असंवेदनशील है, पत्ती लैमिना रंग का होता है, इसमें शिराएं होती है, डंठल और इसके नीचे पत्ती का रंग हरा होता है। अनुमानतः इसमें 50 प्रतिशत फूल देर से आते हैं। तने का रंग हरा तथा पौधे की ऊँचाई मध्यम होती है। बीज का आकार बड़ा तथा चॉकलेट भूरा रंग का होता है। इसका रेशा बहुत महीन (21.81 g/tex) और उपज क्षमता 15.00 क्विं./है. होता है।

जे.आर.सी.-80 (मित्तल):- यह CIN- 11 x जे.आर.सी.-321 के बीच क्रास से विकसित की गई है। इसकी खेती उच्च और निम्न दोनों प्रकार की भूमि में मार्च के मध्य से अप्रैल की शुरुआत में की जा सकती है। यह वृद्धि के प्रारंभिक चरण में सूखे और इसके बाद के चरण में जल जमाव का सामना करने में सक्षम होता है। यह विशेष रूप से उत्तरी बंगाल, असम और उत्तर प्रदेश के लिए अनुकूल है। इसमें समय से पहले फूल आने की प्रतिरोधी क्षमता मौजूद है। पत्ती लैमिना रंग का होता है, इसमें शिराएं होती है, डंठल और इसके नीचे पत्ती का रंग हरा होता है। अनुमानतः इसमें 50 प्रतिशत फूल देर से आते हैं। तने का रंग हरा तथा पौधे की ऊँचाई कम होती है। इसमें फली स्फुटन अनुपस्थित होता है। इसके बीज का आकार अपेक्षाकृत बड़ा तथा चॉकलेट भूरा रंग का होता है। यह बहुत अच्छी रेशा गुणवत्ता और देर से परिपक्व होने वाली किस्म है। इसका रेशा बहुत अच्छा (1.25 टेक्स) और उपज क्षमता 28.30 क्विं./है. है।

बी.सी.सी.सी.-2 (बिधान पाट-5) :- यह किस्म CIN-492 के शुद्ध चयन से प्राप्त हुआ है। इसके तना एवं पत्ती का रंग हरा होता है। पत्ती अंडाकार-लांसोलेट आकार का होता है, पत्ती लैमिना रंग का होता है, इसमें शिराएं होती है, डंठल और इसके नीचे पत्ती का रंग हरा होता है। इसका पौधा लंबा होता है, जिसमें फली स्फुटन नहीं होता है। इसके बीज का आकार में बड़ा (3.66 ग्रा.) तथा यह चॉकलेट भूरे रंग का होता है। इसमें समय से पहले फूल आने की प्रतिरोधी क्षमता मौजूद है। इसकी खेती पश्चिम बंगाल राज्य के वर्षा आधारित क्षेत्रों में मध्य और उच्च कृषि अनुकूल भूमि पर मार्च के पहले सप्ताह से 3 सप्ताह तक बुवाई के लिए उपयुक्त है। यह सेमी-लूपर और बिहार में पाए जाने वाले हैरी-कैटरपिलर के लिए सहिष्णु है। रेशा की गुणवत्ता बहुत अच्छी (1.68 टेक्स) और उपज क्षमता 36.69 क्विं./है. है।

जे.आर.सी.एम.-2 (पार्थो):- यह सफेद पटसन उगाने वाले सभी राज्यों जैसे पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, ओडिशा, बिहार और असम के लिए अनुशंसित है। इसकी उपज क्षमता 32 क्विं./है. है। यह तना और जड़ सड़न, पीला मकड़ी, तना घुन और हैरी-कैटरपिलर सहित प्रमुख कीटों और रोगों के प्रति प्रतिरोधी है।

निष्कर्ष

पिछले सत्तर वर्षों के दौरान पटसन किस्मों की विकास की यात्रा उनके उतार-चढ़ाव की उपलब्धियों से भरी हुई है। सफेद पटसन की उत्पादकता में प्रारंभिक सुधार के साथ-साथ, तोषा पटसन किस्मों में पूर्व-परिपक्व फूल सहिष्णुता के विकास के अनुसरण द्वारा पूर्वी भारत की चावल आधारित फसल प्रणाली में इस फसल को विकसित होने का अवसर प्राप्त हुआ। फसल की अवधि 160 से घटकर 120 दिन हो गई, जिससे रेशा के विकास और परिपक्वता पर प्रभाव पड़ा। वास्तव में उत्पादकता में जो वृद्धि हुई है, उसे उल्लेखनीय माना जा सकता है क्योंकि कटाई योग्य रेशा कुल हरे बायोमास का होता है। हालांकि इस फसल का वर्तमान क्षेत्र पिछले दो दशकों से अनेक कारणों से धीरे-धीरे कम हो रहा है तथा क्षेत्र विस्तार की संभावना भी बहुत कम या नहीं के बराबर है। इस अवधि के दौरान उत्पादकता में लगातार वृद्धि हुई है, जो उन्नत फसल उत्पादन और फसल संरक्षण प्रौद्योगिकियां को विकसित करने के अनुसंधान प्रयासों की सफलता को दर्शाता है।

धीमें बहते हुये जल में पटसन सड़न की एक उन्नत तकनीक : परीक्षण व परिणाम

आर.के. नायक, षम्ना ए., बिजन मजुमदार, एस.के. झा, एम.एस. बेहेरा एवं गौरांग कर

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

परिचय

पटसन (*Corchorus spp.*) एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्राकृतिक रेशा और नकदी (लाभदायक) फसल है। पटसन रेशा जैव विघटनशील, पुर्नचक्रण और पर्यावरण के अनुकूल है। पटसन-रेशे पौधे की छाल को सड़ाने के बाद प्राप्त किया जाता है। पटसन रेशा का पारंपरिक सड़न व निष्कर्षण जल आधारित जीवाणुओं द्वारा होता है जहाँ पटसन बंडलों को पानी में डुबोया जाता है और पेक्टिन, हेमीसेलुलोज और अन्य लस्सेदार पदार्थों के अपघटन पर आधारित है।

अधिकांश किसान ठहरे हुए पानी में पूरे पौधे को डुबाने की पारंपरिक पद्धति का उपयोग करते हैं। कटाई के बाद पटसन की पौधों को लगभग 3-5 दिनों तक खेत में पत्ती झड़ने के लिए रखा जाता है। पत्ते झड़ने जाने पर बंडलों को स्थायी रूप से उपलब्ध पास की तालाब, सड़क के किनारे की गडढे या नदी में जाकर सामग्री को डाल दिया जाता है। पारंपरिक विधि रेशा की गुणवत्ता को बाधित करती है और पर्यावरण को प्रदूषित करती है, क्योंकि यह बायोमास को विघटित करता है। इसके अलावा, आजकल जलवायु परिवर्तन के कारण सीमित कटाई अवधि के दौरान नदी, तालाबों / नहरों के सूखने के कारण पटसन को सड़ाना मुश्किल हो रहा है।

आदर्श पटसन सड़न प्रक्रिया के लिए धीमी गति से बहते पानी की आवश्यकता होती है। इस तरह की धीमी गति से बहने वाला पानी जैव रासायनिक प्रतिक्रिया की स्थल से विघटित उत्पादों को हटा देता है और यह निष्कासन सड़न प्रक्रिया को तेज करता है। तेजी से बहने वाला पानी वांछनीय नहीं है क्योंकि निम्निकरण वाले उत्पादों के साथ-साथ यह कारण-वाचक सूक्ष्मजीवों को भी हटा देता है। आजकल के जलवायु परिवर्तन परिदृश्य में ताजे पानी की कमी है और यह पटसन की सड़न में एक बड़ी समस्या बन गई है। इसलिए, धीमी गति से बहता पानी के साथ एक कृत्रिम सड़न टैंक बनाना पारंपरिक सड़न प्रक्रिया का एक विकल्प हो सकता है।

धीमी गति से बहते पानी की परिस्थिति का निर्माण

उपरोक्त परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए, भाकृअनुप-क्रिजैफ ने धीमी गति से बहते पानी वाली पटसन सड़न प्रौद्योगिकी प्रणाली की अवधारणा की है। धीमी गति से बहने पानी वाली की परिस्थिति को प्राप्त करने के लिए डॉ. टी. घोष फार्म में सड़न टैंक की एक इकाई का निर्माण किया गया है और इसका लेआउट आरेख चित्र 1 में दिया गया है।

एक यूनिट रेटिंग टैंक का लेआउट ड्राइंग

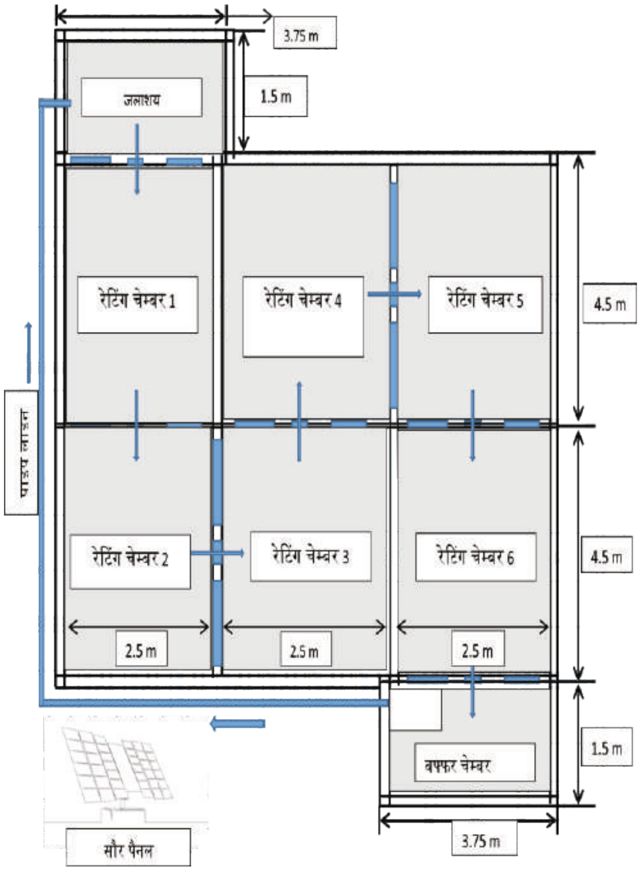

चित्र 1. धीमी गति से बहते पानी के साथ रेटिंग टैंक की एक इकाई का लेआउट ड्राइंग

इस तकनीक में एक जलाशय और एक बफ्फर कक्ष के साथ छह (6) सड़न कक्ष शामिल हैं (चित्र 2)। प्रणाली में संबंधित कक्षों में जल परिसंचरण के सृजन के लिए 2 hp सबमर्सिबल सौर हाइब्रिड पंप लगाया गया है। पंप दिन के समय सौर ऊर्जा द्वारा संचालित होता है और रात में यह या तो बैटरी पावर या बिजली द्वारा संचालित होता है। पंपिंग प्रणाली में सौर पैनल, पंप के साथ सौर-हाइब्रिड सबमर्सिबल मोटर (2 hp), बैटरी, इन्वर्टर, चेंज ओवर स्विच आदि शामिल हैं। यह प्रणाली संबंधित कक्षों से पानी का संचार इस तरह से करता है कि यह न केवल पटसन को ठीक से सड़ा सके बल्कि यह नियमित अंतराल में टैंक से मृत मलबे को फ़िल्टर करता है और पानी को पुन: उपयोग के लिए उपयुक्त बनाता है। लगभग 1 एकड़ जमीन के पटसन के पौधे को एक बार में सड़ाया जा सकता है और एक साल में एक यूनिट सड़न टैंक में लगभग 3-4 बार इस प्रक्रिया को किया जा सकता है।

चित्र 2. धीमी गति से बहते पानी प्रणाली के साथ निर्मित आरसीसी सड़न टैंक

फसल मौसम के दौरान किए गए सड़न प्रयोग से पता चला कि पटसन की सड़न पाउडर या तरल माइक्रोबियल फॉर्मूलेशन 'क्रिजैफ सोना' के साथ 10-12 दिनों में पूरी हो जाती है। तेजी से सड़न के कारण रेशा रिकवरी में वृद्धि होती है और 24.80-25.4 ग्राम/टेक्स की रेशा शक्ति और 2.65-2.74 टेक्स की रेशा को उत्कृष्ट पाया गया है। माइक्रोबियल फॉर्मूलेशन के साथ इस प्रकार की एक बेहतर सड़न प्रक्रिया मिलेगा। रेशा में रूट सामग्री 2-4.2% दर्ज किया गया है। सड़न टैंक में सड़न के पूर्व और बाद के पानी की गुणवत्ता परिणाम से पता चलता है कि पानी की गुणवत्ता में सभी मानकों का परिणाम सड़न प्रक्रिया के दौरान बढ जाता है।

प्रणाली का लाभ

- धीमी गति से बहता पानी टैंक के पानी का एक समान तापमान पर बनाए रखता है।
- यह प्रणाली सड़न प्रक्रिया को तेज करती है।
- विघटित उत्पादों को जैव रासायनिक प्रतिक्रिया वाले स्थान से हटा देता है।
- रेशे की गुणवत्ता को प्रभावित किए बिना उसी सड़न वाले पानी का पुन: उपयोग किया जा सकता है।
- जल उपयोग दक्षता बहुत अधिक होता है।
- पटसन की सड़न की दुर्गंध को कम करता है।
- यह सड़न प्रणाली कठिन श्रम को कम करता है, इसका जल भी बहुत स्वच्छ होता है। किसानों को गंदे प्रदूषित जल निकाय के अंदर लंबे समय तक खड़े होने की आवश्यकता नहीं होती।
- पटसन के बंडलों की लोडिंग, अनलोडिंग, रेशे की स्ट्रिपिंग सड़न टैंक की दीवार से ही की जा सकती है। इसलिए जल जनित रोगों और सांप, घोंघे की समस्याओं की संभावना से बचा जा सकता है।
- यह विधि विविध उत्पादों के लिए उपयुक्त है एवं एक अच्छी गुणवत्ता वाले रेशा का उत्पादन करती है, जो प्राकृतिक युक्त बहते पानी के साथ तुलनीय है।
- इस पद्धति में प्रारंभिक उच्च लागत शामिल है, लेकिन एसएचजी, पैक्स, पंचायत स्तर और जूट उद्योग द्वारा इसे आसानी से अपनाया जा सकता है।

निष्कर्ष :

धीमी गति से बहता पानी पटसन सड़न तकनीक पारंपरिक स्थिर जल स्तरीकरण प्रक्रिया पर केवल एक मामूली संशोधन है जिसका उपयोग पूरे भारत में अधिकांश किसान करते हैं। यह तकनीक न केवल रेशे की गुणवत्ता में वृद्धि करता है, बल्कि पर्यावरण के अनुकूल भी है। इस तकनीक का उपयोग करके पारंपरिक स्थिर जल अवधारण में उत्पन्न प्रदूषण को आसानी से टाला जा सकता है। साथ ही सड़न के बाद पानी को एकीकृत खेती, मछली की खेती आदि में सुरक्षित रूप से इस्तेमाल किया जा सकता है। सड़न प्रक्रिया के दौरान पानी को फ़िल्टर किया जाता है और लगातार परिचालित किया जाता है इसलिए खराब सड़न सामग्री के जमा होने की अनुमति नहीं देता है।

"संस्कृत की विरासत हिंदी को तो जन्म से ही मिली है"

- राहुल सांकृत्यायन

सनई बीज उत्पादन तकनीक

एस.के. सरकार
भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

सनई (क्रोटेलेरिया जुनसिया) एक महत्वपूर्ण बहुउद्देश्यीय फैबेसियस फसल है, जो पूरे भारत में रेशा, हरी खाद और चारे के उद्देश्यों के लिए उगाई जाती है। साठ के दशक तक यह भारत की एक प्रमुख फसल थी, लेकिन हरित क्रांति और सस्ते सिंथेटिक रेशा के आगमन के साथ इसका क्षेत्र धीरे-धीरे कम होता गया और वर्तमान में यह केवल लघु और सीमांत किसानों के हाथों में रह गया है। हरित क्रांति और रासायनिक उर्वरकों (एनपीके) के गहन उपयोग से चावल-गेहूं फसल क्रम हावी है, जिसने देश के विभिन्न हिस्सों में मिट्टी की उर्वरता और उत्पादकता को प्रभावित किया है। वर्तमान समय में सनई के महत्व को पुनः इसके जैव-विघटनशील रेशा के साथ - साथ हरी खाद की गुणों के कारण इसे बड़े पैमाने पर उत्पादित किए जाने की आवश्यकता है। दुर्भाग्य से बीज की अनुपलब्धता फसल विस्तार में एक बाधा है। देश में व्यवस्थित बीज उत्पादन और वितरण प्रणाली अभी शुरू नहीं हुई है। हाल ही में भाकृअनुप ने सनई और ढैंचा के गुणवत्तापूर्ण बीज के उत्पादन पर जोर दिया है। किसान कम से कम देखभाल के साथ अपने स्वयं के उपयोग के लिए अरहर/हावर के साथ मिश्रित या खेत के मेढ़ पर चारों तरफ सनई उगाते हैं। सनई के विस्तार हेतु बड़े पैमाने पर गुणवत्ता वाले बीज उत्पादन पर ध्यान देना समय की माँग है।

बीज की फसल

फली बनने की अवस्था

फली परिपक्वता / कटाई चरण

फली में बीज की व्यवस्था

सनई के स्वस्थ काले बीज

सनई के स्वस्थ पीले बीज

जलवायु : जलवायु की स्थिति में निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए (i) 240 N से नीचे अक्षांश, (ii) हल्की सर्दी जिसमें न्यूनतम तापमान 100 डिग्री सेल्सियस से कम न हो, (iii) अच्छी धूप, (iv) बीज बनने के चरण के दौरान कोई वर्षा न हो।

भूमि की तैयारी : भूमि को अच्छी तरह से जुताई किया जाना चाहिए। 2-3 जुताई कल्टीवेटर से और उसके बाद पाटा लगाना चाहिए। बीज के बेहतर अंकुरण के लिए बुवाई के समय मिट्टी में नमी की मात्रा 25-30% रखनी चाहिए।

किस्में : K-12 येलो, K-12 ब्लैक, SH-4 (शैलेश), SUIN 053 (स्वस्तिक), SUIN 037 (अंकुर) और JRJ 610 (प्रांकुर) सनई के महत्वपूर्ण प्रकार हैं।

बुवाई का समय : सनई बीज उत्पादन के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारक बुवाई का समय है। आम तौर पर सनई देश के उत्तरी और उत्तर पश्चिमी भाग में अप्रैल से अगस्त तक उगाया जाता है | एक अल्प अवधि की फसल होने के कारण सितंबर के मध्य में फूल आना शुरू हो जाता है, जो नवंबर तक जारी रहता है। बुवाई से फूल आने तक की न्यूनतम अवधि 30-40 दिन होती है। इस प्रकार जब जल्दी बोई गई फसल को बीज उत्पादन के उद्देश्य के लिए छोड़ दिया जाता है, तो वनस्पति विकास अधिक हो जाता है, जो बीज उत्पादन के लिए अवांछनीय है। इसके अलावा अत्यधिक कीटों और बीमारियों के कारण से बीज उत्पादन बुरी तरह प्रभावित होता है। बुवाई का सबसे उपयुक्त समय जुलाई के अंत से अगस्त के पहले पखवाड़े तक होता है। अगस्त के बाद बोई गई फसल में वृद्धि कम होती है। उत्तरी भारत में उस समय जब फूल आते हैं। तापमान गिर जाता है, जो परागणकों (ज़ाइलोकोपा लैटिपीस, ज़ाइलोकोपा फेनिस्टोइड्स और मेंगाखिले लैनाटा) की गतिविधि को प्रभावित करता है, जिससे कम बीज उत्पादन होता है। हालांकि, हल्की ठंड वाले क्षेत्रों (पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और दक्षिण भारत) में रबी के मौसम (सितंबर से मार्च) में बीज उत्पादन संभव है। ऐसे क्षेत्रों में बुवाई का सबसे उपयुक्त समय सितंबर-अक्टूबर है।

बीज दर : बीज फसल के लिए 20-25 कि.ग्रा./है. बीज की बुवाई पर्याप्त होती है। बेहतर पौध जमाव और घनत्व के लिए कार्बेन्डाजिम 50WP @ 0.2% के साथ बीज उपचार की सिफारिश की जाती है।

रिक्ति : सनई में, सभी प्रकार की शाखाएँ अर्थात प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक शाखाओं पर ध्यान दिया जाता है और अंतिम शाखाओं पर ही फूल आना शुरू हो जाते हैं। देर से बोई जाने वाली फसल में, विपुल शाखाएँ आम हैं। आम तौर पर 25-30 सें.मी x 5-10 सें.मी. के फासले वाले रेशा फसल को बीज उत्पादन के लिए छोड़ दिया जाता है, जिससे पर्याप्त बीज पैदा नहीं होता है। अधिक बीज उत्पादन करने के लिए अधिक दूरी (40 सेमी x 20 सेमी) आवश्यक होती है।

निराई गुड़ाई

शीर्ष कतरन

सिंचाई : सनई बीज की फसल आमतौर पर बारानी फसल के रूप में उगाई जाती है। बुवाई के समय मिट्टी में पर्याप्त नमी जरूरी होती है। फसल के शुरुआती विकास के चरण में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है, लेकिन फूल आने, बीज बनने और फली पकने की अवस्था में दो से तीन बार सिंचाई करने से अधिक उपज प्राप्त होती है। यदि केवल एक सिंचाई उपलब्ध हो तो उसे फूल आने/फली बनने की अवस्था में देना चाहिए।

उर्वरक : दलहनी फसल होने के कारण किसान किसी उर्वरक का प्रयोग नहीं करते हैं, लेकिन नाइट्रोजन 20 कि.ग्रा./है. फास्फोरस 40 कि.ग्रा./है. तथा पोटाश @ 40 कि.ग्रा./है. के प्रयोग से बीज की उपज में काफी वृद्धि होती है। सभी उर्वरकों को आधारी खुराक के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए।

कीट और रोग : सनई बीज की फसल कई कीटों और बीमारियों से प्रभावित होती है, जिनमें से नाज़ारा स्पीसीज, उटेथाइसा पुलचेला और लस्पेरेसिया ट्राइसेन्ट्रा के कारण फली में छिद्र सबसे महत्वपूर्ण है, जिससे बीज की उपज में लगभग 20 % की हानि होती है।

शीर्ष शूट बोरर : इस कीट के कारण रेशा की उपज में हानि 10-20% के बीच होती है। लार्वा शुरू में शीर्ष भाग में छेद करते हैं और विशेषता पित्त बनाते हैं, फली बनने के चरण में लार्वा फली में छेद करते हैं और बीज को नष्ट कर देते हैं। आमतौर पर यह कीट मानसून के मौसम में गंभीर हो जाता है। कीटों की संख्या वृद्धि होने में वर्षा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वयस्क पहली वर्षा के तुरंत बाद बाहर निकलता है और संक्रमित पौधे में 12-14 दिनों के भीतर गॉल का पता चलता है।

प्रबंध : यदि अप्रैल में बोया जाता है तो फसल कीट से बच सकती है, कार्बोफ्यूरन 3 जी @ 0.5 किग्रा a.i. /है. का मिट्टी में प्रयोग और उसके बाद कार्बेरिल 50 डब्ल्यूपी @ 0.1% का दो छिड़काव शीर्ष शूट बोरर की रोकथाम में प्रभावी होते हैं।

सनई बालों वाली कैटरपिलर / फली बोरर (उटेथाइसा पुल्चेला)

पूरे भारत में विशेष रूप से दक्षिण भारत में होने वाले गंभीर कीट। भीषण गर्मी (जून-जुलाई) में अधिक जनसंख्या के कारण यह एक गंभीर समस्या बन जाती है। कैटरपिलर दो प्रकार के नुकसान का कारण बनते हैं। शुरुआत में, यह पत्ते को तेजी से खाता है और इसे पूरी तरह से कंकालनुमा कर देता है। फली बनने के चरण में, यह ऊपर की ओर पलायन करता है और फली में छेद कर कच्चे बीजों को खा जाता है। इस तरह बीज की उपज में 20% तक की कमी आती है। प्रत्यक्ष नुकसान के अलावा फली बेधक बीज के खराब होने वाले माइकोफ्लोरा द्वारा संक्रमण को भी बढ़ाते हैं। फसल में पैदा होने वाले फली छेदक को नष्ट करने के लिए प्रोफेनोफोस @ 0.1 - 0.1% का 50 % फली सेटिंग चरण पर छिड़काव करने की सिफारिश की जाती है। छिड़काव शाम के समय किया जाना चाहिए ताकि परागणकों की गतिविधियां प्रभावित न हों।

सनई विल्ट (फ्यूसैरियम उडुम एफ.एसपी क्रोटेलेरिया)

यह सनई का एक महत्वपूर्ण रोग है। आम तौर पर यह बढ़ कर 10-12% पौधों को नुकसान पहुँचाता है, लेकिन अनुकूल परिस्थितियों में इसकी संख्या 60-80 तक हो सकती है। कार्बेन्डाजिम उपचारित बीजों को उच्च भूमि में बो कर कुछ हद तक इस संक्रमण को रोका जा सकता है।

फली बोरर और कवक प्रभावित फली और कीटनाशक का छिड़काव

सनहेम्प विल्ट

फाइलोडी : शिखर की पत्तियों का पीला पड़ना, टर्मिनल रेशमी में बड़ी कलियों का बनना, पार्श्व रेशम में पुष्प विभज्योतक का वानस्पतिक अवस्था में रूपांतरण, कलियाँ फीलॉइड बनना। लगभग सभी पुष्प भागों को पत्तेदार संरचना में बदल दिया गया है और वस्तुतः कोई बीज सेटिंग नहीं हुई थी।

कटाई : जब फली के अंदर का बीज चटकने लगे तब बुवाई के 120-140 दिनों में दरांती द्वारा कटाई करनी चाहिए। थ्रेसिंग ट्रैक्टर से या फली को सख्त सतह पर पीटकर करनी चाहिए। थ्रेसिंग और विनोइंग के बाद, भंडारण के लिए बीज में नमी की मात्रा 10% होनी चाहिए।

बीज की उपज : सनई बीज की उपज जलवायु और प्रबंधन तरीकों के आधार पर जगह-जगह बदलती रहती है। बीज उत्पादकता की सीमा नीचे प्रस्तुत की गई है।

तालिका 1 - विभिन्न स्थानों पर सनई की बीज उपज क्षमता

सनई बीज की उपज विभिन्न स्थानों पर	स्थानीय बीज उपज (क्वि./है.)
प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश	14-18
बैरकपुर, पश्चिम बंगाल	14-18
कोयंबटूर, तमिलनाडु	10-14
अकोला, महाराष्ट्र	12-15
बामरा, ओडिशा	12-16
पंतनगर, उत्तराखंड	12-16
बंगलौर, कर्नाटक	10-15

बीज की गुणवत्ता और मानक : भारत में सनई बीज उत्पादन के लिए कोई एजेंसी नहीं है और तदनुसार, सनई और अन्य हरी खाद फसलों जैसी फसलों के लिए न्यूनतम बीज मानक का कोई रखरखाव नहीं है। हाल ही में, बीज समिति ने सनई बीजों का न्यूनतम मानक तय किया है

सनई का न्यूनतम बीज मानक

फैक्टर	फाउंडेशन बीज	प्रमाणित बीज
शुद्ध बीज (न्यूनतम)	98 %	98 %
निष्क्रिय सामग्री (अधिकतम)	2 %	2 %
अन्य फसल बीज (अधिकतम)	10% प्रति कि.ग्रा. बीज	20% प्रति कि.ग्रा. बीज
कठोर बीज सहित अंकुरण (न्यूनतम)	80 %	80 %
नमी सामग्री (अधिकतम)	9 %	9 %
नमी सामग्री (वाष्प प्रूफ कंटेनर के लिए)	8 %	8 %

कृषि में ड्रोन का योगदान

सौरव घोष, देबारती दत्ता, एन.एम. आलम एवं गौरांग कर

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

ड्रोन एक मानव रहित विमान (यूएवी) है, जो मूल रूप से एक उड़ने वाला रोबोट है। इसे दूर से नियंत्रित किया जा सकता है या यह स्वतंत्र रूप से उड़ सकता है। साफ्टवेयर-नियंत्रित सिस्टम के जरिए भी यह उड़ान भर सकता है। इसमें एक जीपीएस आधारित नेविगेशन सिस्टम, कई तरह के सेंसर और एक नियंत्रक होता है। यह बैटरी आधारित ऊर्जा पर काम करता है। नियंत्रक से इसे उड़ाया और नियंत्रित किया जाता है। इस पर उपयोग के आधार पर कई तरह के उपकरण जैसे कि कैमरा, कीटनाशक छिड़काव यंत्र आदि भी लगे होते हैं। ड्रोन तकनीक लगातार विकसित हो रही है। आज की बात करें तो भारतीय सेना के अलावा, मौसम की निगरानी, भविष्यवाणी, यातायात निगरानी, राहत और बचाव कार्य, खेती, फोटोग्राफी आदि में ड्रोन का उपयोग हो रहा है। आधुनिक ड्रोन डुअल ग्लोबल नेविगेशन सैटेलाइट सिस्टम (डीजीएनएसएस) के साथ जुड़े होते हैं। कृषि ड्रोन के इस्तेमाल से एक बड़े क्षेत्रफल में महज कुछ घंटों में कीटनाशक या दवाओं या नैनो यूरिया जैसे खाद का छिड़काव किया जा सकता है। इससे किसानों की लागत में कमी आएगी, समय की बचत होगी और सबसे बड़ा फायदा यह होगा की सही समय पर खेतों में कीट प्रबंधन किया जा सकेगा। ड्रोन की तकनीक का इस्तेमाल ऊर्जा बचाने के मकसद से किया जाता है। सुदूर और दुर्गम इलाकों की जानकारी लेने में भी ड्रोन काफी कारगर हैं। ड्रोन के उपयोग से किसानों को उनकी फसलों के बारे में नियमित रूप से सटीक जानकारी मिल सकती है, जिससे उन्हें निर्णय लेने में आसानी हो सकती है। साथ ही संसाधन की बर्बादी को रोका जा सकता है। किसानों की उपज और आय दोनों आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, जियो-टैगिंग, सैटेलाइट मॉनिटरिंग और फार्म मैनेजमेंट सॉफ्टवेयर जैसी तकनीकों से ही बढ़ाई जा सकती है।

ड्रोन के प्रकार और उनकी कार्यप्रणाली

किसी भी ड्रोन को खरीदने या प्रयोग करने से पहले किसानों को बाजार में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के ड्रोन, उनकी कार्यप्रणाली और विभिन्न प्रयोगों का समुचित ज्ञान होना बहुत जरुरी है।

मल्टी-रोटर ड्रोन

यह ड्रोन का सबसे सरल रूप है जिसका बाजार में सबसे ज्यादा आधिपत्य है। इसमें एक केन्द्रीय चेसिस पर 4-8 फिक्स्ड-पिच प्रोपेलर (पंखे) लगे होते हैं जो ड्रोन की गति, दिशा और ऊंचाई को नियंत्रित करते हैं। इससे खुले और संकीर्ण दोनों जगह ही पर अत्यधिक सटीकता के साथ उड़ान भरी जा सकती है। फिक्स्ड-विंग ड्रोन की तुलना में इसकी दायरा और गति दोनों कम होती है। इसके रख-रखाव का वार्षिक खर्च भी अधिक होता है।

मल्टी-रोटर ड्रोन

मल्टी-रोटर कृषि ड्रोन की महत्वपूर्ण विषेशताएँ

- **स्प्रे टैंक परिमाण:** 10-12 लीटर
- **छिड़काव क्षमता:** 5-8 एकड़/घंटा (20 मिनट में लगभग 1 है.)
- **अनुशंसित छिड़काव ऊंचाई :** सस्य वितान (crop canopy) से 2 मीटर ऊपर
- **अधिकतम उड़ान गति:** 7-12 मीटर/सेकंड
- **अधिकतम उड़ान अवधि:** 15-20 मिनट
- **स्प्रे चौड़ाई:** 4 मीटर (सस्य वितान से 1.5-2 मीटर ऊपर; 4 नोजल)
- **प्रति नोजल अधिकतम स्प्रे गति:** 0.85 ली./मिनट

फिक्स्ड विंग ड्रोन

फिक्स्ड-विंग ड्रोन में हवाई जहाज की तरह पंखों का प्रयोग होता हैं। शुरू में इसे उड़ाने के लिए बाहरी बल लगाना पड़ता है। इसलिए इस ड्रोन को सीमित कृषि कार्यो के लिए प्रयोग किया जाता है लेकिन यह तेज और बड़े क्षेत्र के लिए किफायती होता है। इसका ड्रोन के रखरखाव का खर्चा बहुत कम और जीवनकाल अधिक होता है। इसे भू-क्षेत्रों के मानचित्रीकरण, सर्वेक्षण और कीटनाशक के छिड़काव आदि में ही प्रयोग किया जाता है।

फिक्स्ड विंग ड्रोन

सिंगल-रोटर हेलीकॉप्टर ड्रोन

सिंगल रोटर हेलीकॉप्टर ड्रोन डिजाइन और संरचना में वास्तविक हेलीकॉप्टरों के समान दिखते हैं। मल्टी-रोटर ड्रोन के विपरीत, इसमें सिर्फ एक बड़े आकार का रोटर होता है। इसको नियंत्रित करने के लिए इसकी पूंछ पर एक छोटा रोटर होता है। यह मल्टी रोटर ड्रोन की तुलना में ज्यादा कुशल, स्थिर और अधिक समय तक उड़ान भरने वाले होते हैं, लेकिन ये बहुत अधिक जटिल, महँगे और चलाने में जोखिम भरे होते हैं।

सिंगल-रोटर हेलीकॉप्टर ड्रोन

परिशुद्ध कृषि में ड्रोन के विभिन्न उपयोग

ड्रोन प्रौद्योगिकी पारंपरिक कृषि पद्धतियों को तेजी से बदल रही है और उन्हें निम्नानुसार पूरा कर रही है :-

1. उत्पादन वृद्धि

किसान ड्रोन तकनीकी द्वारा व्यापक सिंचाई योजना, फसल स्वास्थ्य की पर्याप्त निगरानी, मिट्टी के स्वास्थ्य के बारे में सटीक जानकारी और पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति तीव्र अनुकूलन के द्वारा फसल उत्पादन की क्षमताओं में वृद्धि कर सकता है। फसल की सटीक जानकारी होने से उपलब्ध संसाधनों का प्रयोग बिना अपव्यय के कर सकता है। नियमित जानकारी होने से भविष्य की फसल योजनाओं को संशोधित करके अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

2. कीटनाशक और उर्वरकों का सटीक छिड़काव

कृषि में ड्रोन प्रौद्योगिकियों के अद्वितीय फायदों को देखते हुए, कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय (कृषि और किसान कल्याण विभाग) ने इस क्षेत्र के सभी हितधारकों के साथ परामर्श करके, कीटनाशक और पोषक तत्व अनुप्रयोग में ड्रोन के उपयोग के लिए मानक संचालन प्रक्रियाएँ (एसओपी)

निकाली हैं जो इसके प्रभावी और सुरक्षित संचालन के लिए संक्षिप्त अनुदेश प्रदान करती है।

ड्रोन के माध्यम से फसलों पर कीटनाशकों और उर्वरकों का छिड़काव करना आसान हो गया है। कृषि ड्रोन इस कार्य को पारंपरिक तरीके की तुलना में बहुत तेजी और बेहतर तरीके से अंजाम दे सकता है। अन्य तरीकों की तुलना में ड्रोन से हवाई छिड़काव पाँच गुना तेज होता है। ड्रोन अधिक सटीकता के साथ खेतों को स्कैन करके और फसलों और विभिन्न क्षेत्रों में सही मात्रा की तुरंत गणना करके कीटनाशक और उर्वरकों का तेज और किफायती छिड़काव कर सकता है। इससे जमीन की शुद्धता भी बनी रहती है और इन रसायनों के अविवेकपूर्ण प्रयोग पर रोक लगाता है। ड्रोन के जरिए छिड़काव करने से किसानों की कई तरीके से बचत होगी।

- कम समय में छिड़काव - ड्रोन केवल 15-20 मिनट में लगभग 2.5 एकड़ में कीटनाशकों/ उर्वरकों को छिड़क सकते हैं।
- यह हानिकारक रसायनों से मानव संपर्क को सीमित करता है।
- ड्रोन के जरिए खेत में हर जगह एक समान छिड़काव होता है जबकि, पारंपरिक तरीके से छिड़काव किया जाए तो सब जगह एक समान छिड़काव नहीं हो पाता।
- यदि पांरपरिक तरीके से छिड़काव किया जाए तो दो-तीन लग जाते हैं। यदि एक मजदूर की मजदूरी 500 रुपये भी रखें तो 1500 रुपये मजदूरी ही हो गई। ड्रोन से छिड़काव में एक एकड़ का किराया महज 400 रुपये का होगा।
- यदि पारंपरिक तरीके से एक एकड़ खेत में दवा का छिड़काव किया जाए तो 150 से 200 लीटर पानी की जरूरत होती है। यदि ड्रोन से यही छिड़काव किया जाए तो महज 10 लीटर पानी में ही यह हो जाता है। इससे कीटनाशक का उपयोग 80% तक और पानी का उपयोग 96% तक कम हो जाता है।

खेतों में कीटनाशक और उर्वरकों का छिड़काव

3. फसल स्वास्थ्य की निगरानी

व्यक्तिगत रूप से फसलों के स्वास्थ्य की देखभाल करना एक कठिन और बहुत समय लेने वाला हो सकता है। मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर और आरजीबी सेंसर के साथ आने वाले कृषि ड्रोन खरपतवार, बीमारियों, संक्रमण और कीटों से संक्रमित क्षेत्रों का पता लगा सकते हैं। ड्रोन से नियर-इन्फ्रारेड (NIR) सेंसर, मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर या सामान्यीकृत अंतर वनस्पति सूचकांक (NDVI) सेंसर के साथ खेत का मानचित्रण किया जाता है। इन मानचित्रों में अंकित विभिन्न रंगों के विश्लेषण द्वारा खेत के विभिन्न भागों में फसल के स्वास्थ्य, खरपतवार की उपस्थिति, बीमारी के प्रकोप और कीटों के संक्रमण का पता लगाया जाता है। यह डाटा फसल स्वास्थ्य को ट्रैक करने के लिए मल्टीस्पेक्ट्रल इमेंज बनाने में मदद करता है। इसके बाद लगातार निगरानी से फसलों को बचाने में मदद मिल सकती है। कुछ नए ड्रोनों में इस विश्लेषण को स्वचालित सॉफ्टवेयर द्वारा खुद-ब-खुद करने की क्षमता भी होती है। फिर डाटा के अनुसार संक्रमण से लड़ने के लिए रसायनों का सही मात्रा का उपयोग कर लागत को कम कर सकते हैं।

फसल स्वास्थ्य की निगरानी के लिए ड्रोन का व्यवहार

4. संसाधनों का अधिकतम उपयोग

कृषि ड्रोन किसान को विभिन्न संसाधनों- बीज, पानी, उर्वरक, कीटनाशक का अधिकतम उपयोग करने में सक्षम बनाता है। एक खेत के सभी क्षेत्रों को एक जैसा उपचार देने की बजाय आवश्यकता अनुसार उपचार देने से उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग लिया जा सकता है। किसान शीघ्रता से खेत का मुआयना करके समस्याग्रस्त क्षेत्रों जैसे संक्रमित / अस्वस्थ फसलों, मिट्टी में नमी के स्तर आदि पर ध्यान केन्द्रित कर सकता है और आवश्यकता-आधारित सटीक स्थानीय उपचार कर सकता है। मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर बीज रोपने के पैटर्न, पूरे क्षेत्र की मिट्टी का विश्लेषण, सिंचाई और नाइट्रोजन-स्तर के प्रबंधन के लिए उपयोगी डाटा को हासिल करने में मदद कर सकता है। किसान अपने खेत की मिट्टी की स्थिति का अच्छी तरह से विश्लेषण 3-डी (3D) मैपिंग से कर सकते हैं।

5. सिंचाई निगरानी

ड्रोन में उपस्थित हाइपरस्पेक्ट्रल, थर्मल या मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर से उन क्षेत्रों की पहचान कर सकते हैं जो बहुत शुष्क होते हैं या जिनमें जल जमाव की समस्या होती है। यह फसलों में वाष्पीकरण और फसल वाष्पोत्सर्जन की निगरानी करता है और वनस्पति सूचकांक की गणना भी करता है, जिससे सिंचाई की सटीक योजना बनाई जा सकती है। इससे उपलब्ध जल को अधिकतम दक्षता के साथ प्रयोग किया जा सकता है। साथ ही सिंचाई के दौरान संभावित रिसाव के बारे में भी जानकारी हासिल की जा सकती है। इससे किसान को पूरे क्षेत्र में बेहतर सिंचाई में सहायता मिल सकती है। उदाहरण के लिए किसान टाइम-लैप्स फोटोग्राफी के माध्यम से पता लगा सकते हैं कि उनकी फसल का कौन-सा हिस्सा ठीक से सिंचित नहीं हो रहा है।

6. अधिक सुरक्षित किसान

किसान इस तकनीक से दुर्गम क्षेत्रों, पहाड़ी इलाकों और अधिक क्षेत्रफल की भूमि की प्रभावी ढंग से देख-रेख कर सकता है। यह फसलों में जहरीले कीटनाशकों के छिड़काव को अधिक सुरक्षित करता है। इससे कम कीटनाशक के प्रयोग से अधिक भूमि को आच्छादित किया जा सकता है जिससे मृदा प्रदूषण भी कम होता है।

7. फसल नुकसान का आकलन और दस्तावेजीकरण

किसान ड्रोन से किसी भी फसलीय नुकसान का आकलन कर सकता है और बीमा कंपनी के पास नुकसान-भरपाई का दावा मजबूती के साथ रख सकता है। ड्रोन से प्राप्त जीपीएस आधारित सटीक और भरोसेमंद जानकारी को झुठलाना किसी भी व्यक्ति हेतु आसान नहीं रहता है। मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर और आरजीबी सेंसर के साथ लगे कृषि ड्रोन से किसान बीमा दावों के लिए फसली क्षति का सटीक आंकलन एवं दस्तावेजीकरण भी कर सकता है।

8. बंजर भूमि या बड़े क्षेत्र में बीजों का रोपण

बंजर या दुर्गम भूमि में बीजरोपण का कार्य दुष्कर, महंगा और अधिक समय लेने वाला हो सकता है। रोपण को कृषि ड्रोन, सेंसर तकनीक और इंटेलिजेंट सिस्टम बहुत आसान बनाते हैं। रोपण प्रणाली से लैस ड्रोन सीधे मिट्टी में बीज को लगा सकते हैं। यह कार्य ड्रोन के द्वारा बीज को मिट्टी में सीधा फायरिंग करके किया जाता है। कुछ ड्रोन एक दिन में लगभग एक लाख तक बीज बो सकते हैं। इससे कृषि वानिकी को भी अप्रत्याशित लाभ मिलता है।

9. पशुधन ट्रैकिंग

ड्रोन सर्वेक्षण से किसान न केवल अपनी फसलों पर नजर रख सकते हैं, बल्कि अपने मवेशियों की गतिविधियों पर भी नजर रख सकते हैं। थर्मल सेंसर तकनीक खोए हुए जानवरों को खोजने में मदद करती है।

10. टिड्डी नियंत्रण

आकस्मिक कीटों के आक्रमण जैसे कि टिड्डियों के झुंड के उन्मूलन के लिए ड्रोन का उपयोग करना एक तत्काल, प्रभावी और व्यावहारिक तरीका हो सकता है। ड्रोन 15 मिनट में करीब 2.5 एकड़ में कीटनाशक का छिड़काव कर सकता है। ऐसे में ड्रोन इस समस्या का हल हो सकता है।

11. ड्रोन से मौसम पूर्वानुमान

किसानों के लिए ड्रोन की उपयोगिता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि भारतीय मौसम विभाग (IMD) ने मौसम पूर्वानुमान के लिए ड्रोन के इस्तेमाल का प्लान बनाया है। वेदर बैलून से मौसम पूर्वानुमान से आगे बढ़कर अब ड्रोन की मदद से मौसम का सटीक आकलन किया जाएगा। वेदर बैलून ड्रोन की तुलना में काफी महंगा भी है। ऐसे में वायुमंडल का डेटा जमा करने के लिए अब ड्रोन के इस्तेमाल की संभावनाएं तलाशी जा रही हैं।

पटसन आधारित फसल प्रणाली में ड्रोन का प्रयोग

देश के उत्तर पूर्वी राज्यों में पटसन की व्यापक खेती की जाती है, जिसमें पटसन आधारित फसल प्रणाली जैसे पटसन-धान-सरसों/गेहूँ, पटसन-धान-आलू/प्याज/सब्ज़ियाँ, पटसन-धान-मसूर इत्यादि प्रचलित है। इन फसलों को नुकसान से बचाने के लिए कीटनाशकों और कवकनाशी के व्यापक प्रयोगों की आवश्यकता होती है। पारंपरिक छिड़काव विधियों में कई समस्याएं है जैसे समय पर श्रम की अनुपलब्धता, स्प्रेयर की खराब कार्य क्षमता, स्प्रे की कम एकरूपता इत्यादि जिससे अक्सर पर्याप्त कीट/रोग नियंत्रण नहीं हो पाते हैं। इसके इलावा कीट प्रतिरोध और कीट पुनरुत्थान जैसे भयानक स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है। विशेष रूप से, पटसन में कीटनाशकों का पारंपरिक छिड़काव, बुवाई के लगभग 50-60 दिनों के बाद मुश्किल हो जाता है क्योंकि पौधे 1 मीटर से अधिक ऊंचाई के हो जाते हैं। इसके अलावा धान में मजदूरों को अक्सर गहरे पानी में या तालाब की मिट्टी में चलके स्प्रे करना पढ़ता है जिससे मजदूरों को परेशानी होती है। इसलिए पटसन आधारित फसल प्रणाली में ड्रोन के उपयोग के लिए बहुत बड़ा अवसर है। पारंपरिक छिड़काव की तुलना में ड्रोन छिड़काव की कार्य कुशलता (2-5 है./घंटा) बहुत अधिक होती है। ड्रोन में कम मात्रा और अत्यधिक केन्द्रित स्प्रे होता है जो प्रभावकारिता की अवधि को बढ़ाता है। रोटार द्वारा बनाई गई वायु प्रक्षोभ (air turbulence) पटसन, धान जैसी घनी फसलों में स्प्रे के प्रवेश में मदद करती है। ड्रोन से लंबवत (ऊपरी पत्ती से निचली पत्ती तक) और साथ ही क्षैतिज रूप से (कैनोपी में) स्प्रे की एकरूपता होती है और पौधे के निचले हिस्से में संक्रमित बीमारियों या छिपे हुए कीटों को भी नियंत्रण करता है। इसी तरह आलू, प्याज़ और सब्ज़ियों जैसी उच्च मूल्य वाली सर्दियों की फसलों में ड्रोन का उपयोग फंगल रोगों और हानिकारक कीटों के प्रकोप को रोकने या नियंत्रण करने के लिए किया जा सकता है, ताकि अधिकतम उच्च पैदावार हो सके।

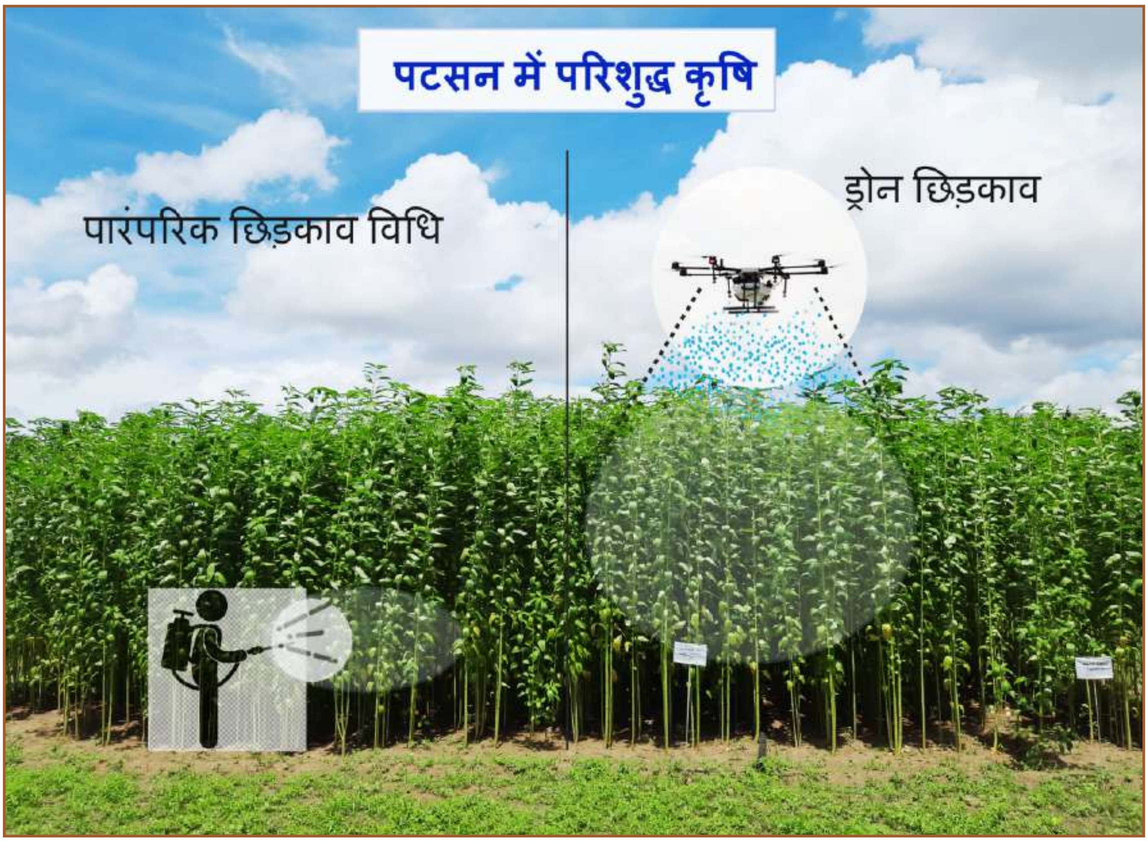

पटसन की परिशुद्ध खेती में ड्रोन का प्रयोग

सरकारी पहल और नीति विनियम

कृषि को बढ़ावा देने के लिए केन्द्र सरकार ने " कृषि यंत्रीकरण उप-मिशन (एसएमएएम)" योजना शुरू की है। इसके तहत केन्द्रीय कृषि मंत्रालय ने कृषि ड्रोन की खरीद, किराए पर लेने और प्रदर्शन में सहायता करके इस तकनीक को किफायती बनाने के लिए भाकृअनुप के संस्थानों, कृषि विज्ञान केन्द्रों और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों को वित्त पोषण दिशा-निर्देश जारी किए हैं।

कृषि स्नातकों को सब्सिडी

- ड्रोन तकनीक के बड़े पैमाने पर प्रदर्शन आयोजित के लिए फार्म मशीनरी प्रशिक्षण और परीक्षण संस्थानों, भाकृअनुप के संस्थानों, कृषि विज्ञान केन्द्रों और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, राज्य और केन्द्र सरकार के अन्य कृषि संस्थान / विभाग, भारत सरकार के कृषि गतिविधियों में संलिप्त सार्वजनिक उपक्रम द्वारा ड्रोन की खरीद के लिए अनुदान के रूप में कृषि ड्रोन की लागत का 100% या 10 लाख रु. (जो भी कम हो) देने की अनुशंसा की गई है।
- इसके अलावा किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) को ड्रोन खरीदने के लिए 75% तक की वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। यह वित्तीय सहायता 31 मार्च 2023 तक लागू रहेगी।
- प्रदर्शन के लिए ड्रोन किराए पर लेने वाले एजेंसियों को 6,000 रुपए/है. हर बार आक्समिक खर्च के तौर पर दिए जाएंगे। ड्रोन खरीद कर प्रदर्शन करने वाले एजेंसियों को आक्समिक खर्च के तौर पर 3,000 रुपए/है. दिए जाएंगे।
- कस्टम हायरिंग सेंटर्स स्थापित करने वाले कृषि स्नातक, ड्रोन और उसके संलग्नकों की मूल लागत का 50% या ड्रोन खरीद के लिये 5 लाख रुपए तक का अनुदान प्राप्त करने हेतु पात्र होंगे।
- मौजूदा या नए कस्टम हायरिंग सेंटर्स, पहले से स्थापित या

किसानों की सहकारी समिति द्वारा स्थापित किये जाने वाले किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ) और ग्रामीण उद्यमी ड्रोन की मूल लागत पर अनुदान के रूप में 40% (अधिकतम 4 लाख रुपए) प्राप्त करने के हकदार हैं। ग्रामीण उद्यमियों को किसी मान्यता प्राप्त बोर्ड से दसवीं कक्षा की परीक्षा उत्तीर्ण होना चाहिए और नागर विमानन महानिदेशालय (डीजीसीए) द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थान से रिमोट पायलट लाइसेंस होना चाहिए।

निष्कर्ष

पिछले कुछ वर्षों में कृषि ड्रोन तकनीक में काफी सुधार हुआ है। अब किसान भी इस बात को समझने लगे हैं कि कैसे ड्रोन तकनीक से उन्हें मदद मिल सकती है। आमतौर पर कृषि क्षेत्र में ड्रोन का उपयोग मैपिंग तथा सर्वेक्षण से लेकर कीटनाशक छिड़काव में होता है। ड्रोन आधारित कीटनाशक/कवकनाशी छिड़काव से रसायन की मात्रा और लागत की बचत, प्रयोग दक्षता में वृद्धि, श्रम की कम आवश्यकता जैसे विविध लाभ हैं। इसके अलावा ड्रोन द्वारा छिड़काव किसानों को हानिकारक रसायनों के सीधे संपर्क से बचाता है और स्वास्थ्य के खतरों को कम करता है। ड्रोन सटीक डाटा प्रोसेसिंग के साथ सर्वेक्षण करता है, जिससे किसानों को तेजी से और सटीक निर्णय लेने में मदद मिलती है। ड्रोन द्वारा एकत्रित किए गए डाटा की मदद से समस्याग्रस्त क्षेत्रों, संक्रमित/अस्वस्थ फसलों, नमी के स्तर आदि पर ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है। इससे सिंचाई योजना, फसल स्वास्थ्य की निगरानी, फसल विकास, पैदावार का आकलन, शाकनाशक, उर्वरक जैसे सामग्री का प्रयोग, मिट्टी की गुणवत्ता की जानकारी, कीट संक्रमण प्रभावित क्षेत्रों का आकलन करने आदि में मदद मिल सकती है। ड्रोन को किसानों की जरूरतों के हिसाब से बदला भी जा सकता है। ड्रोन के उपयोग से चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों, संक्रमित क्षेत्रों, लंबी फसलों और बिजली लाइनों के नीचे कीटनाशकों का छिड़काव किया जा सकता है। कृषि क्षेत्र में ड्रोन के उपयोग को बढ़ावा देने की घोषणा से खेती पहले की तुलना में आसान हो जाएगी। साथ ही यह कदम कृषि क्षेत्र को भविष्य के लिए तैयार करेगा। हाल ही में भारत सरकार ने विदेश से ड्रोन के आयात को प्रतिबंधित कर दिया है, इससे भी स्थानीय स्तर पर ड्रोन के विकास में मदद मिलेगी। बाजार में, कृषि ड्रोन की लोडिंग क्षमता और अंतिम प्रयोग के आधार पर कीमत आमतौर पर 3-10 लाख तक हो सकती है। किसी छोटे किसान के लिए इसे खरीदना काफी महंगा पड़ता है, लेकिन कस्टम हायरिंग सेंटर के माध्यम से इसे किराए पर लेकर वे इस प्रौद्योगिकी का फायदा उठा सकते हैं। वर्तमान में किसान 400-500 रुपये प्रति एकड़ की मामूली कीमत पर कीटनाशक छिड़काव के लिए ड्रोन आधारित सेवा प्रदाताओं की मदद ले सकते हैं। इसे वर्तमान बजट में बड़े किसान, कस्टम हायरिंग सेंटर या कृषि संस्थान प्रस्तावित सरकारी आर्थिक सहायता का प्रयोग करके इसे खरीद सकते हैं। इस तरह किसान ड्रोन तकनीक निर्विवाद रूप से एक क्रांतिकारी तकनीक है जो किसानों की आय दोगुनी करने की क्षमता रखता है।

"हिन्दी भाषा के लिए मेरा प्रेम सब हिन्दी प्रेमी जानते हैं"

- महात्मा गाँधी

जैव ईंधन : स्त्रोत और उत्पादन

**लक्ष्मी शर्मा, गौरंग कर, सुमन रॉय, प्रतीक सत्या, सुरेन्द्र कुमार पाण्डेय,
बिजन मज़ूमदार, टिंकू गोस्वामी एवं बिनीता देव**

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

गतिशील प्रौद्योगिकी के साथ-साथ परिवहन पर अर्थव्यवस्था की निर्भरता ने हमारे दैनिक जीवन में ऊर्जा की मांग को कई गुणा बढ़ा दिया है। फलस्वरूप जीवाश्म व्युत्पन्न ईंधन की बढ़ती खपत वैश्विक स्तर पर होने वाले पर्यावरणीय प्रदूषण ने हमारे समक्ष गम्भीर समस्याउत्पन्न कर दिया है। इसके प्रयोग से ग्रीन हाउस गैसें जैसे कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) व अन्य जहरीली गैसें - मीथेन, कार्बन मोनोऑक्सीड, क्लोरोफ्लुरो कार्बन इत्यादि ने जलवायु परिवर्तन व ग्लोबल वार्मिंग जैसे वैश्विक मुद्दों को जन्म दिया है। 21वीं सदी के मध्य तक ग्रीन हाउस गैसों में लगभग 43 मिलियम मैट्रिक तून्नेस की वृद्धि का अनुमान है। 75 प्रतिशत CO_2 केवल सड़क मार्ग अर्थात् कार, ट्रक और बस द्वारा उत्पन्न होते हैं (आ.ई.ए., 2020)। अतः इसका कुप्रभाव मानव जाति व पर्यावरण पर प्रतिकूल रूप धारण करता जा रहा है, जो अक्षय और स्थायी स्रोतों द्वारा उत्पादित वैकल्पिक ऊर्जा के उपयोग को अपरिहार्य बनाते है। हाल के वर्षो में वैज्ञानिको ने अक्षय ईंधन, ऊर्जा व रसायन के शोध में दिलचस्पी दिखाई है।

बायोऊर्जा अथवा बायोमास ऊर्जा का प्रयोग शताब्दियों से प्रचलित है। बायोऊर्जा प्रयोग का आरम्भ तभी हो गया था, जब आदिमानव ने भोजन पकने या वातावरण में ताप उत्पन्न करने के लिए आग जलाई थी। ऐसे कई और साक्ष्य है जिनसे प्रमाणित होता है कि मनुष्यो ने अरबो वर्ष पहले ही बायोमास ऊर्जा का प्रयोग आरम्भ कर दिया था। धरती पर मानव अस्तित्व को बनाये रखने के लिए बायोमास ऊर्जा की उपयोगिता केवल सल्लुलोसिक या लकड़ी, रेशेदार सामग्री की सहायता से भोजन पकाने व ताप उत्पन्न करने तक ही सिमित नहीं था। 12वीं सदी के आगमन से ही मनुष्यों ने इन कार्यो के साथ-साथ अल्कोहल का आसवन या शुद्धिकरण करना आरम्भ कर दिया था। उस समय अनाज भरपूर मात्रा में उपलब्ध हुआ करता था, यह एक बेहतरीन फीड-स्टॉक के रूप में प्रचलित हुआ और इससे इथेनॉल भी आसानी से बनाया गया। इसके पश्चात् खनन और ड्रिलिंग को व्यावहारिक तथा व्यावसायिक रूप में अपनाया जाने लगा, जैव-ईंधन के स्थान पर कोयले और कच्चे तेल ने लोकप्रियता प्राप्त करना आरम्भ किया। इसके बाद विद्युतीकरण का प्रसार हुआ और जैव-ईंधन के प्रयोग की गति धीमी हो गई। इसी कारण हम धीरे-धीरे कोयले और कच्चे तेल पर अधिक आश्रित होते गए और प्रत्येक प्रौद्योगिकी क्षेत्र में जीवाश्म इंधनों का प्रयोग होने लगा। हमारे जीवनचर्या के लगभग सभी क्षेत्रों में इन इंधनों का प्रयोग निश्चित हो गया है। पारम्परिक ईंधनों के बढ़ते प्रयोग से पर्यावरण लगातार दूषित होता जा रहा है। मनुष्यों में वह जैव 1970 के दशक में प्राकृतिक गैस की कमी ने एक बार फिर से बायो ऊर्जा में सबकी रूचि पैदा की। विश्वभर में शोधकर्ताओं ने जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग एवं ग्रीन हाउस गैसें उत्सर्जन के परिणामों के प्रसंग में सार्वजनिक स्तर पर चर्चा की, जिससे साधारण मनुष्यों में जागरूकता उत्पन्न हुई। पर्यावरण प्रदूषण और जीवाश्म ईंधनों की स्थायित्व को देखते हुए, विश्व स्तर पर विभिन्न अर्थ-व्यवस्थाएँ बायोऊर्जा की प्रद्योगिकी को पुनः निर्माण व संचालन करने में एक साथ जुटे हुए हैं।

जैव ईंधन एक प्रकार का जैव स्रोत द्वारा व्ययुत्पन्न ऊर्जा ईंधन है, जिसे मुख्य रूप से पौधों और जीवित वस्तुओं के बायोमास से उत्पन्न किया जाता है। इन जैविक बायोमास स्रोत (पौधे व जीवित वस्तु) को बार-बार उगाया एवं काटा जा सकता है। नवीकरणीय ऊर्जा ईंधन के स्थान पर उपयोग किये जाने वाले जैव ईंधन मुख्य रूप से पौधों व अन्य बायोमास से प्राप्त किया जाता है। जैव ईंधन ठोस पदार्थ, तरल या गैसीय वस्तु के रूप में मौजूद होते हैं। ठोस जैव ईंधन जैसे - बीजारोपण, बायोब्रिकेटस इत्यादि चारकोल, लकड़ी के छर्रे/अवशेषों, जानवरों के अपशिष्ट अदि से उत्पन्न होते हैं। ये जैव ईंधन ताप, विद्युत् उत्पादन में प्रयोग होने वाले ठोस जैविक, गैर जीवाश्म ऊर्जा ईंधन है। तरल जैव ईंधन मुख्यतः बायोमास से व्युत्पत्ति बायोइथेनॉल, बायो ब्यूटेनॉल, बायो आयल, ड्राप

इन फ्यूल नया है अथवा ट्राइग्लिसराइड आधारित बायो डीजल बायोमास या वनस्पति तेल, हाइड्रोजनेटेड तेल द्वारा भी उत्पादित होते है। गैसीय जैव ईंधन जैसे बायो गैस, बायो हाइड्रोजन, सिनगैस इत्यादि कम घनत्व युक्त जैविक डिंग = हाँ है जो पाईरोलीसीस या गैसीकरण से उत्पन्न होते हैं।

जैव ईंधन चाहे किसी भी स्थिति में हो, उसका उत्पादन, बायोमास (पौधे और उनके अवशेष, किसी फसल, उप-उत्पाद, ठोस अपशिष्ट आदि) से ही होता है। नवीकरणीय आधार पर बायोमास संसाधनों का उपयोग प्रत्यक्ष रूप में ऊर्जा की तरह या अप्रत्यक्ष रूप में परिवर्तित ऊर्जा की तरह प्रयोग किया जाता है। इन संसाधनों को "फीडस्टॉक" कहा जाता है। बायोमास फीडस्टॉक के भिन्नता के आधार पर जैव ईंधनों को चार पीढ़ियों में वर्गीकृत किया गया है :

प्रथम पीढ़ी के जैव ईंधन तेल आधारित पौधों, शर्करा और स्टार्च से बनाए जाते हैं। उनकी शुरूआत के बाद से 1996-1997 में आनुवंशिक रूप से रूपांतरित फसल का विकास लगातार बढ़ रहा है। चूंकि प्रथम पीढ़ी के जैव ईंधन का उत्पादन पूर्ण रूप से स्थापित प्रौद्योगिकियों और प्रक्रियाओं, जैसे कि किण्वन, आसवन और ट्रांसस्टरीफिकेशन के माध्यम से किया जाता है, इसे आमतौर पर "पारंपरिक जैव ईंधन" भी कहा जाता है।

द्वितीय पीढ़ी के जैव ईंधन गैर-खाद्य उपज वाले होते हैं। यह मुख्य रूप से कृषि और लकड़ी अवशेषों से उत्पादित होता है। दूसरी पीढ़ी के जैव ईंधन की एक प्रमुख विशेषता यह है कि वे गैर-खाद्य फीडस्टॉक्स जैसे कि ऊर्जा समर्पित फसलें (मिसकैंथस, स्विचग्रास, शॉर्ट रोटेशन कॉपिसिस और अन्य लिग्नोसेल्यूलोसिक पौधे), कृषि अवशेष, वन अवशेष और अन्य अपशिष्ट सामग्री, नगरपालिका ठोस अपशिष्ट) से प्राप्त होते हैं। द्वितीय पीढ़ी के स्थायी लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास से प्राप्त जैव ईंधन खाद्य सुरक्षा प्रदान करता है।

शैवाल द्वारा उत्पादित तृतीय पीढ़ी के जैव ईंधन का बड़े पैमाने पर उत्पादन किया जा सकता है। इसे परिष्कृत करना अपेक्षाकृत आसान है। इसी कारण शैवाल उत्पादित तृतीय पीढ़ी जैव ईंधन बहुत सारी मान्यता को आकर्षित किया है। दूसरी और तृतीय पीढ़ी के जैव ईंधन को अक्सर 'उन्नत जैव ईंधन' के रूप में संदर्भित किया जाता है। इनकी उत्पादन तकनीक अभी भी अनुसंधान और विकास, पायलट या प्रदर्शन के चरण में हैं।

जैव ईंधन की चतुर्थ पीढ़ी जेनेटिकली इंजीनियर्ड साइनोबैक्टीरियल विकास का उपयोग करती है, जो एक नया और तेजी से विकसित होने वाला क्षेत्र है। आनुवंशिक रूप से संशोधित शैवाल बायोमास जैव ईंधन के उत्पादन, प्रकाश संश्लेषक की दक्षता में वृद्धि और प्रकाश की पैठ बढ़ाने में प्रभावी है। जैव ईंधन उत्पादन की तृतीय और चतुर्थ पीढ़ी में "शैवाल-से-जैव ईंधन" तकनीक शामिल है। तृतीय पीढ़ी के जैवईंधन मूल रूप से जैव ईंधन उत्पादन के लिए शैवाल बायोमास का प्रसंस्करण करती है, जबकि चतुर्थ पीढ़ी ऑक्सीजनिक प्रकाश संश्लेषक सूक्ष्मजीवों के माध्यम से से जैव ईंधन के उत्पादन शैवाल की चयापचय इंजीनियरिंग द्वारा करती है।

तरल जैवईंधन का उपयोग परिवहन क्षेत्र में पारंपरिक ईंधन के विकल्प के रूप में किया जाता है, जो प्राथमिक ऊर्जा खपत का लगभग 18% योगदान देता है। आज लगभग 80% तरल जैव ईंधन बायोएथेनॉल के रूप में उत्पादित किया जाता है और शेष बायोडीजल के माध्यम से होता है। बायोएथेनॉल जैसे नवीकरणीय ईंधन कुल जैव ईंधन का 65% हिस्सा हैं और वैश्विक ऊर्जा और आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं (आई.ई.ए, 2020)। विश्व में संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्राजील प्रमुख बायोएथेनॉल उत्पादक देश हैं, जो दुनिया भर में कुल उत्पादन का 84% हिस्सा है। यूरोपीय संघ 2019 में 5,443 मिलियन लीटर (वैश्विक उत्पादन का 5%) तक पहुंचने वाले तीसरे स्थान पर है। हालांकि नवीकरणीय ईंधन द्वारा लगातार पर्यावरणीय लाभों का विस्तार हो रहा है। ईंधन इथेनॉल मुख्य रूप से खाद्य-संबंधित फसलों - मकई (यूएसए), गन्ना रस और चुकंदर (ब्राजील और यूरोपीय संघ), गेहूं (चीन) वाणिज्यिक पैमाने पर उत्पन्न होता है (एसोसिएशन, 2021)। वर्ष 2019 में, संयुक्त राज्य अमेरिका में कुल बायोएथेनॉल उत्पादन का 94% मकई स्टार्च पर आधारित था। जो ग्रीनहाउस गैसों को हटाने में 36-49% का योगदान देता है। यह खाद्य आधारित उत्पादन प्रथम पीढ़ी बायोएथेनॉल है और इसकी प्रौद्योगिकी औद्योगिक स्तर पर

परिपक्व है। हालाँकि, प्रथम पीढ़ी बायोएथेनॉल उत्पादन में भोजन बनाम भूमि विवाद प्रचलित है और इस आधार पर यह वैश्विक स्तर पर खाद्य सुरक्षा पर सवाल खड़ा करता है। फलस्वरूप, विभिन्न देशों में खाद्य और फ़ीड के लिए भूमि उपयोग की रक्षा, जैव ईंधन में जीवाश्म ईंधन की तुलना में मापने योग्य ग्रीनहाउस गैस बचत की सुनिश्चिता, स्थिरता मानदंड स्थापना के लिए वैश्विक स्तर पर कई निर्देशों को लागू किया गया है। भारत में राष्ट्रीय जैव ईंधन नीति के तहत नए फीडस्टॉक का विकास और द्वितीय पीढ़ी बायोरिफाइनरियों की स्थापना का लक्ष्य रखा गया है। इसने उन्नत जैव ईंधन के उत्पादन के लिए फीडस्टॉक के रूप में अन्य लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास सामग्री का उपयोग करने का मार्ग प्रशस्त किया है।

जैव ऊर्जा के स्रोत

जैव ऊर्जा को बायोमास - परम रासायनिक भंडारण बैटरी की खपत से प्राप्त किया जाता है। बायोमास में पहले सूर्य से प्राप्त ऊर्जा को यानी पौधे प्रकाश संश्लेषण के माध्यम से अवशोषित करते हैं और कार्बन डाइऑक्साइड और पानी को पोषक तत्वों (कार्बोहाइड्रेट) में परिवर्तित किया जाता है। अधिकांश बायोमास की प्राप्ति प्रकाश संश्लेषित पौधों द्वारा संचित होती है। बायोमास धरती पर सबसे अधिक और स्थायी कार्बन स्रोतों में से एक है। ऊर्जा प्राप्ति के लिए बायोमास के कई आपूर्ति स्रोत हैं, जो बड़े और विविध भौगोलिक क्षेत्रों में फैले हुए हैं। आज भी ईंधन के रूप में उपयोग लाए जाने वाले अधिकांश ऊर्जा बायोमास खाद्य, चारा और रेशा उत्पादन के उप-उत्पादों या सह-उत्पादों से उत्पन्न होती है। जैव ऊर्जा के उत्पादन के लिए प्रमुख बायोमास फीडस्टॉक कृषि फसल अवशेष, शैवाल, वानिकी अवशेष, लकड़ी प्रसंस्करण अवशेष हैं। इन बायोमास स्रोतों को बायोमास फीडस्टॉक्स कहा जाता है। इन जीवों की ऊर्जा को प्रत्यक्ष (ताप और बिजली) और अप्रत्यक्ष (जैव ईंधन) के माध्यम से प्रयोग करने योग्य ऊर्जा में रूपांतर किया जा सकता है। जैव ईंधन के उत्पादन के आधार पर बायोमास को भी प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ पीढ़ी के फीडस्टॉक के रूप में भी वर्गीकृत किया गया है। वर्तमान में बायो एनेर्जी के क्षेत्र में में अधिक विकास तरल जैव ईंधन के उत्पादन से हो रहा है। विशेष रूप से बायोएथेनॉल परिवहन के लिए कृषि फसलों को फीडस्टॉक्स के रूप में उपयोग कर रहा है। यद्यपि वैश्विक बायोएथेनॉल उत्पादन में शर्करा और स्टार्च आधारित जैव ईंधन प्रमुख हैं, उच्च बायोमास उपलब्धता के कारण सेल्यूलोसिक जैव ईंधन की महता में क्रमशः वृद्धि होती जा रही है। सेल्युलोसिक जैव ईंधन का प्राथमिक व सर्वोत्तम स्रोत लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास है। सेल्यूलोज और लिग्निन पृथ्वी पर सबसे विपुल रूप से उपलब्ध है। ये लिग्नोसेल्यू-लोसिक बायोमास के मुख्य अवयव हैं। अतः इन्हें जैव ईंधन उत्पादन के सशक्त स्रोत के रूप में जाना जाता है। बायोमास उत्पादों के प्रयोग उन्मुख डाउनस्ट्रीम प्रसंस्करण के संदर्भ में, लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास को एक बेहतर विकल्प के रूप में दिखाया है। लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास एक जटिल मैट्रिक्स है। यह एक मोटी लिग्निन और हेमिसेलुलोज संरचना से बना होता है, जो सेल्यूलोज अणुओं के चारों ओर से लपेटता है। इसके अवशिष्ट भाग में तेल, राख और प्रोटीन जैसे अर्क शामिल है। यह अपने अवयव के रासायनिक गुणों के कारण जैव-तकनीकी रूप से मूल्यवान सब्सट्रेट हैं। लिग्नोसेल्यूलोज सामग्री ऊर्जा यौगिकों में उच्च होते हैं और विभिन्न उद्योगों में कच्चे माल के रूप में उपयोग में लायी जा सकती हैं। जैव शोधन के लिए इसके अपशिष्टों से विशिष्ट अवयव के जैव-रूपांतरण का उपयोग विभिन्न प्रकार के जैव उत्पादों के उत्पादन के लिए किया गया है। लिग्नोसेल्यूलोसिक बायो रिफाइनरी में दो अलग-अलग प्रकार के रूपांतरण होते हैं (i) शर्करा (बायोमास से प्राप्त शर्करा का किण्वन) और (ii) सिनगैस / थर्मोकेमिकल रूपांतरण (सिनगैस का उत्पादन करने के लिए बायोमास गैसीकरण)। शर्करा किण्वन में, लिग्नोसेलुलोसिक अवयव को जैव ईंधन और जैव उत्पादों में बदल दिया जाता है। दूसरी ओर, सिनगैस या थर्मोकेमिकल रूपांतरण द्वारा बायोमास को उपयोगी सब्सट्रेट में परिवर्तित करने के लिए डाउनस्ट्रीम किण्वन किया जाता है। लिग्नोसेल्यूलोज जैवरूपान्तरित जैव उत्पादों के मुख्य उदाहरण कार्बनिक अम्ल, बायोपॉलिमर, प्रोटीन, जैव उर्वरक, कंपोजिट, औद्योगिक एंजाइम और जैव ईंधन है।

बायोमास रूपांतरण : बायोएनेर्जी का उत्पादन

बायोएनेर्जी उत्पादन में प्रत्यक्ष ज्वलन (जलना) और थर्मोकेमिकल, रासायनिक और जैविक रूपांतरण शामिल

होता हैं। थर्मोकेमिकल रूपांतरण ठोस, तरल और गैसीय ईंधन उत्पन्न होता है, जबकि अन्य दो रूपांतरण विधियों से तरल और गैसीय ईंधन बनती हैं।

थर्मोकेमिकल रूपांतरण

बायोमास को थर्मल रूपांतरण द्वारा जला कर ऊर्जा के लिए उपयोग किया जा सकता है। थर्मल रूपांतरण में बायोमास फीडस्टॉक को जलाने, निर्जलित करने या इसे स्थिर करने के लिए उष्ण करना शामिल है। थर्मल रूपांतरण के लिए सबसे परिचित बायोमास फीडस्टॉक कच्चे माल जैसे नगरपालिका ठोस अपशिष्ट (एमएसडब्ल्यू) और कागज या लकड़ी मिलों से उपलब्ध होता हैं। विभिन्न प्रकार की ऊर्जा प्रत्यक्ष फायरिंग, सह-फायरिंग, पायरोलिसिस, गैसीकरण और अवायवीय अपघटन के माध्यम से बनाई जाती है।

बायोमास को जलाने से पहले सुखाया जाना चाहिए। इस रासायनिक प्रक्रिया को टॉरफेक्शन कहा जाता है। टॉरफेक्शन के दौरान, बायोमास को लगभग 200^0 से 320^0C (390^0 से 610^0 F) तक गर्म किया जाता है। बायोमास को ऐसे सुखाया जाता है कि इसके बाद यह नमी को अवशोषित करने या सड़ने की क्षमता खो देता है। यह सूखा बायोमास अपने मूल द्रव्यमान का लगभग 20% खो देता है, लेकिन अपनी ऊर्जा का 90% बरकरार रखता है। खोई हुई ऊर्जा और द्रव्यमान का उपयोग टॉरफेक्शन प्रक्रिया को बढ़ावा देने के लिए किया जा सकता है। टॉरफेक्शन के दौरान बायोमास एक सूखा एवं काला पदार्थ बन जाता है। फिर इसे ब्रिकेट में संकुचित किया जाता है। बायोमास ब्रिकेट बहुत ही हाइड्रोफोबिक होते हैं अर्थात वे पानी को अपकर्षण करते हैं। इससे उन्हें नम क्षेत्रों में संग्रहित करना आसान हो जाता है। ब्रिकेट में उच्च ऊर्जा घनत्व होता है और प्रत्यक्ष या सह-फायरिंग के दौरान जलना आसान होता है।

डायरेक्ट फायरिंग और को-फायरिंग : ज्यादातर ब्रिकेट सीधे जला दिए जाते हैं। फायरिंग प्रक्रिया के दौरान उत्पन्न भाप एक टरबाइन को शक्ति प्रदान करती है, जो एक जनरेटर को चालू करती है और बिजली पैदा करती है। इस बिजली का उपयोग इमारतों में किया जा सकता है। बायोमास को सह-निकाल भी दिया जा सकता है, या जीवाश्म ईंधन के साथ जलाया जा सकता है। बायोमास को अक्सर कोयला संयंत्रों में से निकाल दिया जाता है। को-फायरिंग से नए कारखानों में बायोमास के प्रसंस्करण के लिए की आवश्यकता नहीं होती। को-फायरिंग से कोयले की मांग में भी कमी होती है। यह जीवाश्म ईंधन ज्वलन से निकलने वाली कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा को भी कम करता है।

पायरोलिसिस : पायरोलिसिस बायोमास को गर्म करने की एक अन्य विधि है। पायरोलिसिस के दौरान, बायोमास को गैर-ऑक्सीजन अवस्था में 200° से 300°C (390° से 570° F) तक गर्म किया जाता है। यह इसे दहन से रोकता है और बायोमास को रासायनिक रूप से परिवर्तित करता है। पायरोलिसिस विधि द्वारा पायरोलिसिस तेल (एक गहरे तरल), एक सिंथेटिक गैस (सिनगैस) और एक ठोस अवशेष (बायोचार) की उत्पत्ति होती है। इन सभी घटकों का उपयोग ऊर्जा के लिए किया जा सकता है। पायरोलिसिस तेल, जिसे कभी-कभी बायो-ऑयल या बायोक्रूड कहा जाता है, एक प्रकार का टार है। इसे बिजली पैदा करने के लिए ज्वलित किया जा सकता है। इसका उपयोग अन्य ईंधन और प्लास्टिक में एक अव्यय के रूप में भी किया जाता है। पेट्रोलियम के संभावित विकल्प के रूप में वैज्ञानिक और इंजीनियर पायरोलिसिस तेल का अध्ययन कर रहे हैं। Syngas को ईंधन (जैसे सिंथेटिक प्राकृतिक गैस) में परिवर्तित किया जा सकता है। इसे मीथेन में भी परिवर्तित किया जा सकता है और प्राकृतिक गैस के प्रतिस्थापन के रूप में उपयोग किया जा सकता है। बायोचार एक कार्बन युक्त ठोस है, जो कृषि में विशेष रूप से उपयोगी है। बायोचार मिट्टी को समृद्ध करता है जो कीटनाशकों और अन्य पोषक तत्वों के रिसाव से रोकता है। बायोचार एक उत्कृष्ट कार्बन सिंक भी है।

गैसीकरण : गैसीकरण के माध्यम से बायोमास को सीधे ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है। गैसीकरण प्रक्रिया के दौरान एक बायोमास फीडस्टॉक को ऑक्सीजन की नियंत्रित मात्रा के साथ 700°C (1,300°F) से अधिक तक गर्म किया जाता है। फलतः अणु टूट जाते हैं और सिनगैस और स्लैग उत्पन्न करते हैं। सिन्गैस हाइड्रोजन और कार्बन मोनोऑक्साइड का एक संयोजन है। सिनगैस को गैसीकरण के दौरान सल्फर, पार्टिकुलेट, पारा और अन्य प्रदूषकों से साफ किया जाता है। स्वच्छ सिनगैस को ताप या विद्युत् के लिए जलाया जा सकता

है। इसे परिवहन जैव ईंधन, रसायन और उर्वरकों में संसाधित किया जा सकता है। बायोडीजल निर्माता इस संश्लेषित गैस (सिनगैस) का उपयोग बायोडीजल बनाने के लिए करते हैं।

अवयवीय अपघटन : अवयवीय अपघटन वह प्रक्रिया है, जिसमें सूक्ष्मजीव आमतौर पर बैक्टीरिया, ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में सामग्री को तोड़ते हैं। अवयवीय अपघटन लैंडफिल में एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जहां बायोमास को संकुचित किया जाता है, जिससे अवयवीय (गैर-ऑक्सीजन) वातावरण बनता है। अवयवीय वातावरण में बायोमास का क्षय होता है और एक मूल्यवान ऊर्जा मिथेन गैस का उत्पादन होता है। यह जीवाश्म ईंधन की जगह ले सकती है। लैंडफिल के अलावा अवयवीय अपघटन को खेत और पशुधन फार्मों पर भी लागू किया जा सकता है। खाद और अन्य जानवरों के अपशिष्टों को ऊर्जा में परिवर्तित कर स्थायी रूप से व्यवहार किया जा सकता है। बायोगैस या बायोमीथेन का उत्पादन सीवेज उपचार संयंत्रों या डेयरी और पशुधन फार्मों और अवयवीय डाइजेस्टरों में होता है, ताकि वे अपने खेती में ऊर्जा के जरूरतों को पूरा कर सके।

जैव रासायनिक रूपांतरण जैव ईंधन

बायोमास एकमात्र नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत है जिसे इथेनॉल और बायोडीजल जैसे तरल जैव ईंधन में परिवर्तित किया जा सकता है। जैव ईंधन का उपयोग वाहनों को बिजली देने के लिए किया जाता है। गैसीकरण द्वारा जैव ईंधन स्वीडन, ऑस्ट्रिया और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देशों में उत्पादित किया जा रहा है। वर्तमान में इथेनॉल उच्च कार्बोहाइड्रेट युक्त बायोमास- (गन्ना, गेहूं या मकई) को किण्वित कर बनाया जाता है। बायोडीजल को जानवरों की चर्बी, रिसाइकिल कुकिंग फैट या वनस्पति तेल के साथ मिलाकर बनाया जाता है। ट्रांस-एस्टरीफिकेशन एक रासायनिक रूपांतरण प्रक्रिया है जो वनस्पति तेलों, पशु वसा और ग्रीस को फैटी एसिड मिथाइल एस्टर (ऍफ़ ए एम् ई) में परिवर्तित करती है। बायोडीजल उत्पादन में ऍफ़ ए एम् ई का उपयोग किया जाता है।

जैव ईंधन गैसोलीन की तरह कुशलता से काम नहीं करते हैं। हालांकि, इसे वाहनों और मशीनरी को कुशलतापूर्वक बिजली देने के लिए गैसोलीन के साथ मिश्रित किया जा सकता है, और एक एकड़ मकई से लगभग 1,515 लीटर (400 गैलन) इथेनॉल का उत्पादन होता है। लेकिन यह रकबा भोजन या अन्य उपयोगों के लिए अनुपलब्ध होता है। इथेनॉल उत्पादन के लिए पर्याप्त मकई उगाने से रोपण में भिन्नता की कमी और कीटनाशकों के उच्च उपयोग से पर्यावरण पर भी दबाव पड़ता है। आवासीय फायरप्लेस में लकड़ी के लिए इथेनॉल एक लोकप्रिय विकल्प बन गया है। इसे जलाने पर यह आग की लपटों के रूप में गर्मी और धुएं के बजाय जलवाष्प का उत्सर्जन करता है।

बायोचार

पायरोलिसिस के दौरान उत्पादित बायोचार कृषि और पर्यावरण के लिए महत्वपूर्ण है। जब बायोमास सड़ता या जलता है (स्वाभाविक रूप से या मानव गतिविधि से), तो यह वातावरण में उच्च मात्रा में मीथेन और कार्बन डाइऑक्साइड का उत्सर्जन करता है। हालाँकि, जब बायोमास जल जाता है, तो यह अपनी कार्बन सामग्री को अलग या संग्रहित करता है। जब बायोचार को वापस मिट्टी में डाला जाता है, तो यह कार्बन को अवशोषित करना जारी रख सकता है और सीक्वेंस्ड कार्बन-कार्बन सिंक के बड़े भूमिगत भंडार बना सकता है। बायोचार मिट्टी को समृद्ध बनाने में भी मदद करता है। बायोचार पानी और पोषक तत्वों को अवशोषित और बरकरार रखता है। ब्राज़ील में स्लैश-एंड-चार नामक प्रक्रिया में ब्राजील के अमेज़ॅन वर्षा वन में बायोचार का उपयोग किया जाता है। स्लेश-एंड-चार कृषि स्लैश-एंड-बर्न की जगह लेती है, जो अस्थायी रूप से मिट्टी के पोषक तत्वों को बढ़ाती है लेकिन यह कार्बन सामग्री का 97% खो देती है। स्लैश-एंड-चार के दौरान, जले हुए पौधे (बायोचार) मिट्टी में वापस मिल जाते हैं और मिट्टी अपने कार्बन का 50% बरकरार रखती है।

बायोडीजल का उत्पादन

बायोडीजल डीजल इंजनों के लिए एक वैकल्पिक ईंधन है जो कि मेंथनॉल जैसे अल्कोहल के साथ वनस्पति तेल या पशु वसा की रासायनिक प्रतिक्रिया से उत्पन्न होता है। आमतौर पर एक मजबूत आधार जैसे कि सोडियम या पोटेशियम हाइड्रॉक्साइड का प्रयोग किया जाता है और मिथाइल एस्टर नामक नए रासायनिक यौगिकों का उत्पादन होता है। इसी

एस्टर को बायोडीजल के रूप में जाना जाता है। वनस्पति बीज और पशु वसा (ट्राइग्लिसराइड्स) से बायोडीजल एस्टर में निकाले गए तेलों को परिवर्तित करने के लिए इंटर-एस्टरीफिकेशन प्रक्रिया में ग्लिसरीन के सह-उत्पाद भी होते हैं और कुछ वनस्पति तेलों से, पशु आहार के लिए उच्च प्रोटीन भोजन भी प्राप्त किया जाता है।

एक या दो चरणों में एक रिएक्टर में अल्कोहल, उत्प्रेरक और तेल को मिलाया जाता है और लगभग 1 घंटे के लिए 60^{0} C पर उत्प्रेरित किया जाता है। प्रतिक्रिया के बाद मिथाइल एस्टर से ग्लिसरॉल हटा दिया जाता है। अतिरिक्त मेंथनॉल घुलनशीलता के रूप में कार्य करता है और पृथक्करण को धीमा कर सकता है। हालांकि, इस अतिरिक्त मेंथनॉल को आमतौर पर प्रतिक्रिया धारा से तब तक नहीं हटाया जाता है जब तक कि ग्लिसरॉल और मिथाइल एस्टर को ट्रांस एस्टेरिफिकेशन प्रतिक्रिया को उलटने की सम्भावना समाप्त न हो। ग्लिसरॉल के पृथक्करण को बेहतर बनाने के लिए ट्रांस एस्टेरिफिकेशन पूरा होने के बाद प्रतिक्रिया मिश्रण में पानी मिलाया जा सकता है। ग्लिसरॉल से अलग होने के बाद मिथाइल एस्टर एक न्यूट्रलाइजेशन चरण में प्रवेश करते हैं और फिर पानी धोने से पहले एक मेंथनॉल स्ट्रिपर, आमतौर पर एक वैक्यूम फ्लैश प्रक्रिया या एक गिरने वाली फिल्म बाष्पीकरण से गुजरते हैं। किसी भी अवशिष्ट उत्प्रेरक को बेअसर करने और प्रतिक्रिया के दौरान बनने वाले किसी भी साबुन को विभाजित करने के लिए एसिड को बायोडीजल में मिलाया जाता है। साबुन पानी में घुलनशील लवण और मुक्त फैटी एसिड बनाने के लिए एसिड के साथ प्रतिक्रिया करेगा। पानी धोने के चरण के दौरान नमक हटा दिया जाएगा और मुक्त फैटी एसिड बायोडीजल में रहेगा। पानी धोने के चरण का उद्देश्य बायोडीजल से किसी भी शेष उत्प्रेरक, साबुन, लवण, मेंथनॉल या मुक्त ग्लिसरॉल को हटाना है। धोने से पहले न्यूट्रलाइजेशन से आवश्यक पानी कम हो जाता है और बायोडीजल में धोने के पानी को मिलाने पर इमल्शन बनने की संभावना कम हो जाती है। धोने की प्रक्रिया के बाद बायोडीजल से किसी भी शेष पानी को वैक्यूम फ्लैश प्रक्रिया द्वारा हटा दिया जाता है। विभाजक से निकलने वाली ग्लिसरॉल धारा केवल लगभग 5 0 % ग्लिसरॉल है। इसमें कुछ अतिरिक्त मेंथनॉल और अधिकांश उत्प्रेरक और साबुन होते हैं। ग्लिसरॉल को लगभग 85% तक परिष्कृत किया जाता है और मेंथनॉल को प्रक्रिया में या भंडारण के लिए पुन: उपयोग करने के लिए अलग किया जाता है।

बायोएथेनॉल का उत्पादन

बायोएथेनॉल परिवहन क्षेत्र के लिए उपयोग किया जाने वाला सबसे पसंदीदा जैव ईंधन है, जो विभिन्न बायोमास से प्राप्त होता है। लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास की प्रचुरता के कारण यह सबसे पसंदीदा फीडस्टॉक है। इससे बायोएथेनॉल का उत्पादन चार प्रमुख चरणों में किया जाता है - प्रीट्रीटमेंट, सैक्रिफिकेशन, किण्वन और आसवन।

प्रीट्रीटमेंट/पूर्व-उपचार : प्रीट्रीटमेंट बायोमास के प्रमुख अवयवों जैसे सेल्युलोज, हेमिसेलिल्यूलोज और लिग्निन को अलग करने की विधि है। लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास को विघटित करने से लिग्निन हटता है, जो शर्करीकरण में सहयोग करता है। प्रीट्रीटमेंट की कुछ तकनीकें है - भौतिक, रासायनिक, जैविक और भौतिक-रासायनिक है, जिनका उपयोग किया जाता है। लिग्नोसेल्यूलोज बायोमास प्रीट्रीटमेंट प्रक्रियाओं द्वारा संरचनात्मक रूप को बदलना, पॉलिमर के विघटन में सहायता करना और जैव ईंधन में लिग्नोसेल्यूलोज के बाद के शर्करीकरण के लिए बायोमास सतह क्षेत्र में वृद्धि किया जाता है। सबसे अच्छी प्रीट्रीटमेंट विधि फीडस्टॉक्स, उनका पर्यावरण और आर्थिक प्रभावों पर निर्भर करती है।

पूर्व-उपचार	विधि
भौतिक	यांत्रिक बाहर निकालना, सुखाने, माइक्रोवेव, अल्ट्रासाउंड, और पायरोलिसिस
रासायनिक	एसिड, क्षार, आयनिक तरल और ऑक्सीडेटिव उपचार
भौतिक-रासायनिक	भाप विस्फोट, टॉरफेक्शन और अमोनियम रेशा विस्फोट
जैविक	लिग्निनोलिटिक एंजाइम या सूक्ष्मजीव जैसे कवक और बैक्टीरिया

शर्करीकरण : बायोमास में स्थित सेल्यूलोस का एंजाइम द्वारा जल विश्लेषण कर किंवाणिया शर्करा में रूपांतरित करने की प्रक्रिया को शर्करीकरण कहते है । इसे प्रभावी डीकंस्ट्रक्टिव एंजाइम मिश्रण के माध्यम से पूरा किया जाता है, जिसमें कई हाइड्रोलाइटिक सेल्युलेस और एक्सेसरी एंजाइम होते हैं। आम तौर पर सेल्युलेस मिश्रण में शामिल होने वाले प्रमुख सेल्यूलस एंडोग्लुकैनेस (EG), सेलोबियोहाइड्रॉलिस (CBH) और β-ग्लूकोसिडेस (BG) हैं, जो सेल्युलोज को मोनोमर ग्लूकोज में रूपांतर करने में सहक्रियात्मक रूप से काम करते हैं । ईजी सेल्युलोज श्रृंखलाओं के भीतर आंतरिक ग्लाइकोसिडिक बंधनों को तोड़ते हैं, जिससे सीबीएच के लिए अधिक ग्लूकेन श्रृंखला समाप्त होती है। सीबीएच सेल्यूलोज श्रृंखला को श्रृंखला के छोर से प्रक्रियात्मक रूप से हाइड्रोलाइज करते हैं और मुख्य रूप से सेलोबायोज उत्पन्न करते हैं। फिर, बीजी सेलोबायोज को ग्लूकोज में बदल देते हैं। प्रमुख हाइड्रोलाइटिक सेल्युलस के अलावा, लाइटिक पॉलीसेकेराइड मोनोऑक्सीजिनेज (LPMO) संगठित क्रिस्टलीय सेलुलोज क्षेत्रों के भीतर ग्लाइकोसिडिक बंधन को तोड़ सकता है और सेल्यूलोज एंजाइमों के लिए सेल्यूलोज की अधिक प्रतिक्रियाशील साइट उत्पन्न कर सकता है । लिग्नोसेल्यूलोसिक सब्सट्रेट की एक श्रृंखला के कुशल एंजाइमेंटिक शर्करीकरण को बढ़ावा देता है । लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास का किण्वन योग्य शर्करा में रूपांतरण बायोरिफाइनरी प्रक्रिया के लिए एक आवश्यक कदम है क्योंकि यह पूरी प्रक्रिया की आर्थिक व्यवहार्यता को निर्धारित करता है।

किण्वन : शर्करीकरण द्वारा उत्पादित किंवाणिया शर्करा को सूक्ष्मजीव की मदद से इथेनॉल में रूपांतरित करने की विधि को किण्वन कहते है। यीस्ट जैसे सूक्ष्मजीव शर्करा की एक विस्तृत श्रृंखला को किण्वित करके बायोएथेनॉल उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । वे इथेनॉल उपज में मूल्यवान गुणों (>90.0% सैद्धांतिक उपज), इथेनॉल सहिष्णुता (>40.0 ग्राम / एल), इथेनॉल उत्पादकता (> 1.0 g/L/h), सरल, सस्ते मीडिया में वृद्धि और अवरोधकों और मंदबुद्धि के प्रतिरोध) के कारण औद्योगिक संयंत्रों में उपयोग किया जाता है। बायोएथेनॉल उत्पादन में आमतौर पर तीन प्रक्रियाओं का उपयोग किया जाता है – (i) विभक्त हाइड्रोलिसिस और किण्वन (SHF), (ii) समकालिक शर्करीकरण और किण्वन (SSF) और (iii) समकालिक शर्करीकरण और सह-किण्वन (SSCF)।

SHF में लिग्नोसेल्यूलोसिक सब्सट्रेट का हाइड्रो - लिसिस और इथेनॉल किण्वन अलग से किया जाता है । एंजाइमैटिक हाइड्रोलिसिस और किण्वन का पृथक्करण से एंजाइम को उच्च तापमन पर संचालित कर बेहतर प्रदर्शन करता है जबकि किण्वन के लिए सूक्ष्मजीव को मध्यम तापमान पर संचालित किया जा सकता है। SSF और SSCF की एक छोटी समग्र प्रक्रिया है, क्योंकि एंजाइमी हाइड्रोलिसिस और किण्वन प्रक्रिया एक साथ होती है। इसलिए ग्लूकोज की सांद्रता कम रखी जाती है। SSF में किण्वन के लिए ग्लूकोज और पेन्टोज को अलग किया जाता है जबकि SSHF में ग्लूकोज और पेन्टोज को एक ही रिएक्टर में किण्वित किया जाता है। SSF और SSCF दोनों को प्राथमिकता दी जाती है क्योंकि SHF के मुकाबले शर्करीकरण और किण्वन ऑपरेशन एक ही टैंक में किया जा सकता है। दोनों प्रक्रियाओं में कम लागत, उच्च इथेनॉल उपज और कम प्रसंस्करण समय का लाभ उठाया जा सकता है। बायोएथेनॉल का उत्सर्जन बैच, फैड-बैच, दोहराया बैच या निरंतर मोड में किया जा सकता है। बायोएथेनॉल के उत्पादन को प्रभावित करने वाले कई कारक हैं- तापमान, चीनी एकाग्रता, पी. एच, किण्वन समय, आलोड़न दर, और इनोकुलम आकार होते हैं। इनके अनुकूलन से ही सर्वोत्तम इथेनॉल उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

किण्वन के पश्चात क्रूड इथेनॉल युक्त ब्रोथ को आसवन के लिए प्रसंस्करण किया जाता है। तत्पश्चात विशुद्ध इथेनॉल को नमी मुक्त कर जैवईंधन की तरह व्यवहार किया जाता है।

जीनोम एडिटिंग : फसल सुधार के अंतर्गत एक सफल प्रौद्योगिकी

त्रिभुवन आर, जितेंद्र कुमार मीणा, कुमार निशांत चौरसिया एवं सुमन रॉय

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि वर्ष 2050 तक विश्व की जनसंख्या 10 बिलियन तक पहुंच जाएगी और इस विशाल आबादी के भरण-पोषण हेतु खाद्य उत्पादन में 60-100% तक की वृद्धि करने की आवश्यकता होगी। इस तथ्य को देखते हुए ऐसा कहा जा सकता है कि यह एक बड़ी चुनौती है, क्योंकि अधिकांश खाद्य फसलों की उपज दर स्थिर हो गई है और फसल सूचकांक को और आगे बढ़ाने के लिए हमारे पास संसाधन सीमित हैं। मौसम की अनियमितता, कृषि भूमि में कमी, माइनर कीट और बीमारियों के प्रकोप जैसी अन्य बाधाओं के कारण यह चुनौती और भी अधिक बढ़ गई है। इन सभी कठिनाइयों के बीच बढ़ती हुई आबादी के साथ तालमेल स्थापित करने के लिए, उन्नत और लचीली फसल किस्मों के विकास में तेजी लाने की आवश्यकता है। वर्षों से चली आ रही प्रणाली के अन्तर्गत पादप प्रजनन ने यद्यपि 1960 के दशक में पहली हरित क्रांति में योगदान दिया, लेकिन इस काम को पूरा करने में काफी समय लग गया। आणविक मार्करों और मार्कर सहायक चयन के आगमन ने इस प्रक्रिया को काफी तेजी प्रदान की है। इसके साथ ही भौतिक, रासायनिक और जैविक म्युटाजेनेसिस और ट्रांसजेनिक प्रौद्योगिकियों ने किस्मों के विकास में लगने वाले समय को और कम कर दिया है। हालाँकि, इन तकनीकों के लिए कुछ महत्वपूर्ण सीमाएँ हैं। उदाहरण के लिए भौतिक और रासायनिक म्युटाजेनेसिस पूरी तरह से यादृच्छिक होते हैं और कई बार इसमें अवांछनीय दुष्प्रभाव भी दिखाई देते हैं, जबकि जैविक उत्परिवर्तन (आरएनए हस्तक्षेप सहित) के मामले में जीन के अपूर्ण और ऑफ-टारगेट व्यवधान की अत्यधिक संभावना होती है। दूसरी ओर, ट्रांसजेनिक किस्में हमेशा होने वाले समस्याओं से ग्रस्त हैं और कई देश अभी भी ट्रांसजेनिक तकनीकों के प्रति संवेदनशील हैं। जीनोम-एडिटिंग (जीई) तकनीक के रूप में लोकप्रिय विशिष्ट जीनों का लक्षित संशोधन एक उपयुक्त समय पर आ गया है और कई लक्षणों के व्यवस्थित परिवर्तन में क्रांतिकारी बदलाव आया है। फसलों की प्रजातियों (*अरबीडोप्सिस* और तंबाकू में) में इसके सफल प्रदर्शन के बाद से इसे चावल, गेहूं, मक्का, टमाटर, आलू आदि जैसे कई प्रमुख फसलों तक बढ़ा दिया गया है।

जीई के मुख्य लाभों में से एक लाभ यह है कि यह बैकक्रॉसिंग की आवश्यकता को पूरा करने वाली उन्नत किस्मों के वितरण में काफी तेजी प्रदान कर सकता है – यह पौधों के प्रजनन में उपयोग की जाने वाली एक सामान्य पारंपरिक दोष सुधार विधि है। जीई को पहले ही 25 विभिन्न देशों में 40 फसलों के लिए लागू किया जा चुका है, इसमें कृषि विज्ञान, भोजन और चारे की गुणवत्ता और तनाव सहनशीलता जैसी विशेषताओं को दर्शाया किया गया है। जीई तकनीकों में अनुकूलित साइट निर्देशित न्यूक्लीज (एसडीएन) प्रौद्योगिकियाँ और ओलिगोन्यूक्लियोटाइड निर्देशित म्युटाजेनेसिस (ओडीएम) शामिल हैं। मेंगन्यूक्लिअस , जिंक-फिंगर-न्यूक्लियस (ZNFs), ट्रांसक्रिप्शन एक्टिवेटर जैसे एफेक्टर न्यूक्लीज (TALENs) (पहली पीढ़ी) और क्लस्टर्ड रेगुलर इंटरस्पेस्ड शॉर्ट पैलिंड्रोमिक रिपीट / CRISPR से जुड़े प्रोटीन (CRISPR / Cas) (दूसरी पीढ़ी) अक्सर इस्तेमाल किए जाने वाले SDN सिस्टम हैं। इसके उपयोग में आसानी, बहुमुखी प्रतिभा, लागत-प्रभावशीलता और एक साथ कई जीनों में हेरफेर करने के लचीलेपन के कारण CRISPR/ Cas इन GE तकनीकों के बीच व्यापक रूप से लोकप्रिय हो गया है। इन खूबियों के कारण, CRISPR/ Cas ने अपनी पूर्ववर्ती GE तकनीकों को शीघ्रता से प्रतिस्थापित कर दिया है। एसडीएन सिस्टम का उपयोग करके जीनोम एडिटिंग को तीन व्यापक श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता हैं – सिंगल पॉइंट म्यूटेशन या इनडेल्स (एसडीएन -1), बाहरी डीएनए-टेम्पलेट अनुक्रम (एसडीएन -2) द्वारा कुछ बेस-जोड़े का सम्मिलन या संशोधन और पूरे जीन का सम्मिलन, ट्रांसजीन या सिस्जीन (एसडीएन-3)। इन तीनों में से, एसडीएन-1 और एसडीएन-2

पसंदीदा एडिटिंग टुल हैं क्योंकि इनमें एलियन जीन ट्रांसफर (ट्रांसजेनिक) की आवश्यकता नहीं होती है । इन जीनोम एडिटिंग तकनीकों का महत्वपूर्ण प्रसार मुख्य रूप से एनोटेट और विशिष्ट जीन के साथ विभिन्न फसलों के पूरे जीनोम अनुक्रमों की उपलब्धता का परिणाम है, जिसने जीनोम एडीटिंग लक्ष्यों की सटीकता को भी काफी बढ़ाया है।

रेशा उत्पादन के अलावा, रेशा की गुणवत्ता भी उतनी ही महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उद्योगों को घरेलू वस्त्र, जूट-आधारित परिधान और जूट-आधारित औद्योगिक वस्त्र आदि जैसे विविध जूट उत्पादों के उत्पादन करने के लिए प्रेरित करती है, जिसके लिए बेहतर गुणवत्ता वाले रेशा की अनिवार्य रूप से आवश्यकता होती है । हमारे देश में अधिकांश जूट रेशा ऐतिहासिक रूप से विभिन्न उत्पादों जैसे कि हेसियन, सैकिंग और कालीन के निर्माण के लिए उपयोग किया जाता है । परिणामस्वरूप गुणवत्ता की परवाह किए बिना अधिक रेशा के निर्माण पर ध्यान केंद्रित किया गया । हालांकि, हाल ही में उद्योगों द्वारा विविध जूट वस्तुओं के उत्पादन के लिए एक आवश्यक कदम उठाया गया है। विभिन्न मूल्य वर्धित उत्पादों के उत्पादन के लिए आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए गुणवत्ता वाले रेशे की मांग बढ़ रही है। नतीजतन, इस बढ़ती मांगों को पूरा करने के लिए रेशा की गुणवत्ता में सुधार के लिए अतिरिक्त प्रयास करने होंगे। इस लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए कृषि पद्धतियों, किस्मों के विकास, बेहतर रेटिंग प्रथाओं, एंजाइमी उपचार और अन्य रासायनिक संशोधनों के माध्यम से जूट रेशा की गुणवत्ता बढ़ाने के प्रयास किए गए हैं।

पारंपरिक म्युटाजेनेसिस के माध्यम से इन लक्षणों में परिवर्तन बाहरी कारकों के कारण होता है, जिसकी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है। उदाहरण के लिए, रेशा की गुणवत्ता उन क्षेत्रों में अधिक मानी जाती है जहां अच्छा और पर्याप्त मात्रा में पानी होता है। रेटिंग वॉटर की गुणवत्ता और मात्रा के अलावा उपयोग की जाने वाली रेटिंग तकनीक, गुणवत्ता को परिभाषित करती है । यह पाया गया है कि जूट के बंडलों के आकार के साथ-साथ कवरिंग सामग्री का विकल्प, रेटिंग टैंक या खाई में पानी की मात्रा, साथ ही पानी की सतह के नीचे जैक्स (जूट बंडलों की परतें) की गहराई, सभी रेशा की गुणवत्ता में योगदान करते हैं । इसके अलावा, इन लक्षणों का अनुमान काफी श्रमयुक्त है, जो एक कठिन और धीमी गति द्वारा बेहतर रेशा गुणवत्ता वाली प्रजनन किस्मों को बनाता है। रेशा-गुणवत्ता जैसे जटिल लक्षणों को लक्षित करने में जीनोम एडीटिंग काम आता है। हालांकि, ऐसा कोई अनुसंधान उपलब्ध नहीं है जहां जूट रेशा गुणवत्ता विशेषताओं में हेरफेर किया गया हो।

1. जीनोम-एडीटिंग विधियों का अवलोकन

डीएनए न्यूक्लियोटाइड्स को पुनर्गठित करने, जोड़ने या संशोधित करने के माध्यम से किसी जीव के डीएनए में किए गए किसी भी परिवर्तन को जीन-एडीटिंग के रूप में जाना जाता है। जीनोम एडिटिंग पिछले दशक में भारी प्रगति के साथ बुनियादी और अनुप्रयुक्त जीव विज्ञान में एक अभूतपूर्व तकनीक बन गई है। सटीक स्थान पर जीनोम को संपादित करने के लिए तंत्र के साथ निहित विशेष रूप से इंजीनियर एंजाइम रुचि के लक्ष्य जीन को संशोधित करने की सुविधा प्रदान करते हैं। जीनोम एडिटिंग की प्रमुख प्रणालियों में जिंक फिंगर न्यूक्लीज (जेडएफएन), ट्रांसक्रिप्शन एक्टीवेटर जैसे इफेक्टर न्यूक्लीज (टैलेन्स) और क्लस्टर्ड रेगुलर इंटरस्पेस्ड शॉर्ट पैलिंड्रोमिक रिपीट (सीआरआईएसपीआर/कैस9) शामिल हैं । उनकी अपार क्षमता को ध्यान में रखते हुए, जीनोम एडीटिंग को 2011 में "वर्ष की विधि" के रूप में माना गया था।

1.1 *मेंगान्यूक्लिअस*

ये एंडोन्यूक्लिअस हैं जो 12-45 बीपी डीएनए लक्ष्य साइटों की पहचान करते हैं । मेंगान्यूक्लिअस को ज्यादातर प्रकृति में होमिंग एंडोन्यूक्लाइजेस द्वारा दर्शाया जाता है, जोकि फेज, आर्कबैक्टीरिया, बैक्टीरिया और अन्य यूकेरियोट्स में पाए जाने वाले डीएनए न्यूक्लियस का एक व्यापक परिवार है । होमिंग एंडोन्यूक्लाइजेस अक्सर इंट्रॉन या इंटिंस को एनकोड करते हैं, जो मोबाइल आनुवंशिक तत्व के रूप में कार्य करते हैं। वे इंट्रोन या इंटीन मुक्त जीन का पता लगाते हैं और उन स्थानों पर एक डबल स्टेंडेड ब्रेक (डीएसबी) उत्पन्न करते हैं । जीन एडिटिंग सजातीय पुनर्संयोजन मरम्मत प्रणाली है जहां डीएसबी हुआ था।

1.2 *जिंक फिंगर न्यूक्लियस (जेड.एफ.एन.)*

जिंक फिंगर कई ट्रांसक्रिप्शन कारकों का डीएनए बाइंडिंग डोमेन है जो अधिकांशतः यूकेरियोट्स में प्रचुर मात्रा में मौजूद है

। एक विशिष्ट जिंक फिंगर टाइप यानी Cys2-Hys2 के इस डीएनए बाइंडिंग फीचर को टाइप II एंडोन्यूक्लिज यानी *Fok1 की न्यूक्लीज गतिविधि के साथ जोड़कर,* चंद्रसेग्रान और उनके सहयोगियों ने एक लक्ष्य विशिष्ट न्यूक्लियस डिजाइन किया, जिसे काइमेरिक प्रतिबंध एंजाइम (जिसे बाद में ZFN कहा गया) नाम दिया गया। जेडएफएन में त्रिपक्षीय संरचना होती है, जैसे एन-टर्मिनल पर डीएनए-बाध्यकारी डोमेन, सी-टर्मिनल पर फोक1 न्यूक्लीज डोमेन और एक पेप्टाइड लिंकर। *Fok1* nuclease की गतिविधि डिमराइज़ेशन पर निर्भर है, तदनुसार *Fok1* के मोनोमर वाले दो ZFN सबयूनिट्स को इस तरह से डिज़ाइन किया गया है कि यह टेल-टू-टेल कंफ़ॉर्मेशन में लक्ष्य अनुक्रम को पहचानता है। डीएनए में तीन साइटें हैं, जिनमें डीएनए बाइंडिंग डोमेन और स्पेसर अनुक्रम के लिए हाफ (आधा) साइटें के दो लक्ष्य हैं। जेडएफएन द्वारा जीन एडिटिंग को डीएसबी की समजातीय पुनर्संयोजन मरम्मत प्रणाली पर आधारित किया गया है, जिसे लक्ष्य जीन (एस) में जेडएफएन द्वारा प्रस्तुत किया गया है। प्रणाली ने >10% की दक्षता के साथ जीन संशोधन का नेतृत्व किया।

1.3 *इफ़ेक्टर न्यूक्लीज़ (TALENs) जैसे ट्रांसक्रिप्शन एक्टिवेटर*

इफ़ेक्टर प्रोटीन जैसे ट्रांसक्रिप्शन एक्टीवेटर की पहचान *ज़ैंथोमोनस* में की गई थी क्योंकि यह होस्ट जीन (एस) को लक्षित करने के लिए संक्रमण के बाद होस्ट में स्रावित किया गया था, उदाहरण के लिए, चावल स्वीट जीन में, संवेदनशीलता के लिए जीन जो प्रभावकारी ट्रिगर संवेदनशीलता (ईटीएस) के लिए अग्रणी है। ZFN की तरह, TALEN में भी डीएनए बाइंडिंग डोमेन होता है, जिसमें कई प्रतियां (30 यूनिट तक) होती हैं, जिसमें 12वें और 13वें स्थान पर रिपीट वेरिएबलडायरेसिड्यू (RVD) के साथ 33-34 अमीनो एसिड अवशेषों के संरक्षित अनुक्रम होते हैं। TALENS का निर्माण TALE डोमेन को इंजीनियरिंग करके और *Fok1* nuclease के साथ मिलाकर किया गया था। ZFN की तरह, TALENS भी DSB को प्रेरित करते हैं जो HR या नॉन-होमोलॉगस एंड जॉइनिंग (NHEJ) से गुजरते हैं, जिससे न्यूक्लियोटाइड विलोपन या जोड़ होता है। ZFN की तुलना में, TALEN में उत्प्रेरण विराम की दर बेहतर होती है।

1.4 *क्लस्टर नियमित रूप से इंटरस्पेस्ड शॉर्ट पैलिंड्रोमिक रिपीट (CRISPR/ Cas)*

सीआरआईएसपीआर, जिसे शुरू में फेज द्वारा संक्रमण पर बैक्टीरिया में प्रतिरक्षा प्रणाली के रूप में पहचाना जाता है, अब इसकी दक्षता और अल्प आवश्यकताओं के कारण सबसे पसंदीदा जीनोम एडीटिंग उपकरण है। सबसे अधिक शोध किए गए और व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले CRISPR मॉडल CRISPR-Cas9 और CRISPR-Cas12a हैं। CRISPR/cas9 में crRNA (CRISPR RNA), tracrRNA (ट्रांस एक्टीवेटिंग CRISPR RNA) शामिल हैं, जो एक साथ gRNA और कैस प्रोटीन बनाते हैं। एक निर्दिष्ट लक्ष्य के लिए CRISPR को लागू करने के लिए एकमात्र आवश्यकता इंटरेस्ट साइट के समीप एक प्रोटोस्पेसर आसन्न मोटिफ (PAM) अनुक्रम की उपस्थिति है। चूंकि विभिन्न लक्ष्यों के लिए सीआरआईएसपीआर का उपयोग करते समय बस अलग-अलग स्पेसर अनुक्रमों की आवश्यकता होती है, यह तेज़, त्वरित, प्रभावी, सस्ता और लचीला होता है।

1.4.1 *बेस (मूलभूत) एडिटिंग प्रणाली*

बेस एडिटिंग सिस्टम साइटोसिन या एडेनोसीन डेमिनमिनस डोमेन के साथ उत्प्रेरक रूप से निष्क्रिय CRISPR-Cas9 डोमेन (Cas9 विविधताएं) का एक संकर है जो सटीक जीनोम एडीटिंग के लिए लक्षित क्षेत्र में वांछनीय पॉवन्ट मुटेशन उत्पन्न करता है। बेस एडिटिंग डीएनए में डीएसबी की आवश्यकता के बिना लक्ष्य युक्त एवं लक्ष्य रहित दोनों स्थानों पर इंडेल गठन को रोकता है। यह डीएनए दाता की आवश्यकता के बिना सिंगल बेसपेयर रूपांतरण, या बेसपेयर प्रतिस्थापन के लिए भी सक्षम होता है।

1.4.2 *प्राईम (मुख्य) एडिटिंग सिस्टम*

कोई भी आधार-से-आधार रूपांतरण, जिसमें संक्रमण और अनुप्रस्थ परिवर्तन शामिल हैं, साथ ही लक्षित डीएनए में डीएसबी को अलग करते हुए छोटे इंडल्स, प्राइम एडिटिंग सिस्टम का उपयोग करके पूरा किया जा सकता है। तालिका 1 में सभी जीनोम एडीटिंग तकनीकों की गहन तुलना प्रस्तुत की गई है :-

तालिका 1. जीनोम एडीटिंग प्रौद्योगिकियों की तुलना

गुण	मेंगा न्यूक्लीज	जेडएफएन	टैलेन	CRISPR/Cas9	बेस एडिटिंग	प्राइम एडिटिंग
डीएनए बाइंडिंग निर्धारक	मेंगन्यूक्लीज	जिंक फिंगर प्रोटीन	ट्रांसक्रिप्शन एक्टिवेटर-प्रेरक जैसा	सीआरआरएनए / एसजीआरएनए:	डीसीएएस / एनसीएएस	nCas9/ pegRNA
एंडोन्यूक्लिएज	मेंगन्यूक्लीज	फोक I	फोक I	कैस 9	dCas	पेगना
लक्ष्य आकार (बीपी)	14-40	18-36	30-40	22	4–6	8-15
कार्य की विधि	दो संभावनाओं के साथ डबल-स्ट्रैंड ब्रेक (डीएसबी) i) नॉन-होमोलॉजी एंड जॉइनिंग (NHEJ) ii) होमोलॉजी-डायरेक्टेड रिपेयर (HDR),					कोई डीएसबी नहीं
लक्ष्य पहचान क्षमता	कम	उच्च	उच्च	उच्च	बहुत ऊँचा	बहुत ऊँचा
ऑफ-टारगेट प्रभाव	उच्च	उच्च	कम	उच्च	कम	बहुत कम
मान्यता	प्रोटीन डीएनए	प्रोटीन डीएनए	प्रोटीन डीएनए	शाही सेना डीएनए	आरएनए-डीएनए-प्रोटीन	आरएनए-डीएनए-प्रोटीन

2. जीनोम-एडिटेड फसलों के नियम और सामाजिक स्वीकृति

वर्तमान में भारत सरकार ने अनुसंधान और जीनोम-एडिटेड पौधों को जारी करने संबंधित नियमों हेतु "जीनोम-एडिटेड पौधों की सुरक्षा और मूल्यांकन हेतु दिशानिर्देश, 2022" नाम से अधिसूचित किया है (dbtindia.gov.in पर उपलब्ध)। यह जैव सुरक्षा और पर्यावरण संबंधी चिंताओं को दूर करने के लिए जाना जाता है। ये दिशानिर्देश अलग तथा साइट-डिरेक्टेड डीएनए अनुक्रम परिवर्तनों के तीन अच्छी तरह से स्थापित वर्गों के बीच अंतर को दर्शाता है, जैसा कि नीचे संक्षेप में दिया गया है :

2.1 साइट-डिरेक्टेड न्यूक्लीज (एसडीएन) -1 कोई भी साइट-डिरेक्टेड न्यूक्लीज को संदर्भित करता है जहां डीएनए टेम्पलेट्स के बिना मरम्मत किया जाता है और इसमें केवल सेल की अपनी मरम्मत मशीनरी शामिल होती है (**चित्र1**)। इस तरह के उत्परिवर्तन (मुटेशन) में छोटे सम्मिलन, विलोपन उत्परिवर्तन(मुटेशन) या न्यूक्लियोटाइड अवशेष प्रतिस्थापन शामिल होते हैं, जहाँ जीन साईलेंसिंग, जीन निष्क्रियता या इसके गुणों में परिवर्तन होता है।

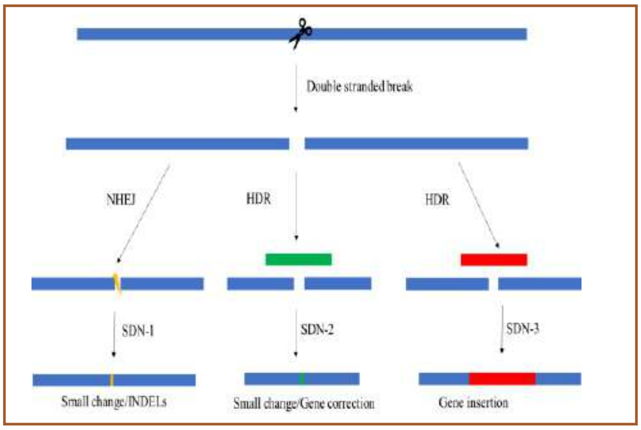

चित्र 1 : विभिन्न साइट-डायरेक्टेड म्युटाजेनेसिस विधियों द्वारा डीएनए अनुक्रम में होने वाले परिवर्तनों के प्रकार।

2.2 SDN-2 एक साइट-डिरेक्टेड उत्परिवर्तन (मुटेशन) है जिसमें मुटेशन इंटेरेस्ट को फ़्लैंकिंग क्षेत्रों में होमोलॉजी (समरूपता) के साथ एक एक्जोजिनियस डीएनए टेम्पलेट को वांछित परिवर्तन प्राप्त करने के लिए डीएनए की मरम्मत के संदर्भ में उपयोग किया जाता है। परिणामी संशोधनों में विभिन्न जीन उत्पाद गतिविधियां या परिवर्तित अभिव्यक्ति पैटर्न हो सकते हैं।

2.3 एसडीएन-3 कोई साइट-डायरेक्ट्ड परिवर्तन का संदर्भ ग्रहण करता है जिसमें एक बड़ा डीएनए अनुक्रम डाला जाता है, उदाहरण के लिए कोई जीन अनुक्रम। यह एक डीएनए संदर्भ टेम्पलेट का उपयोग करता है जहां अनुक्रम के फ़्लैंकिंग क्षेत्र होमोलॉजी-निर्देशित डीएनए मरम्मत की सुविधा के लिए होस्ट अनुक्रम के समान होते हैं। यह एसडीएन-1 और एसडीएन-2 से अलग होता है, इसमें बाहर से एक नया जीन डाला जाता है, जो जीन पूल में स्वाभाविक रूप से उपलब्ध नहीं होता है।

इनमें से, SDN-1 और SDN-2 उत्परिवर्तन (मुटेशन) सैद्धांतिक रूप से प्राकृतिक जीन पूल में पाए जा सकते हैं या अन्य म्युटाजेनेसिस विधियों के माध्यम से उत्पन्न हो सकते हैं। इसके आधार पर, दिशानिर्देशों द्वारा एसडीएन-1 और एसडीएन-2 - उत्पन्न पौधों को आनुवंशिक रूप से इंजीनियर फसलों पर लागू नियमों से छूट दी (खतरनाक सूक्ष्मजीवों / आनुवंशिक रूप से निर्मित जीवों या कोशिकाओं के निर्माण, उपयोग, आयात, निर्यात और भंडारण, नियम, 1989)। हालांकि, यह एसडीएन -3 को लागू नियमों के तहत रखता है क्योंकि वे प्राकृतिक विविधताओं से अलग होंगे या पारंपरिक उत्परिवर्तन (मुटेजेनसिस) विधियों के माध्यम से प्राप्त किए गए होंगे। यूरोपीय खाद्य सुरक्षा प्राधिकरण हाल ही में इसी तरह के निष्कर्ष पर पहुंचा, जिसने एसडीएन-1 और एसडीएन-2 को एसडीएन-3 नियमों से अलग कर दिया।

जैसा कि वर्तमान समीक्षा में चर्चा की गई है कि इस प्रकार के विकास की प्रक्रिया शोधकर्ताओं को विभिन्न लक्षणों के लिए फसलों के जीनोम एडीटिंग को आगे बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करेंगे, जैसे उत्पाद की गुणवत्ता अवयव। साथ ही, अनुमोदन प्राप्त करने में कठिनाई के कारण जैव-प्रौद्योगिकी अनुसंधान में बाधा को दूर किया जाएगा। आनुवंशिक संशोधन और पारंपरिक प्रजनन विधियों के माध्यम से जीनोम एडीटिंग पर वर्तमान सर्वेक्षण ने जीनोम-एडिटिंग फसलों के लिए उन्नत गुणवत्ता और कृषि संबंधी लक्षणों के लिए समान समर्थन दिखाया। हालाँकि, संपादित फसलों की सामाजिक स्वीकृति देखी जानी बाकी है और यह प्रौद्योगिकी की सफलता को निर्धारित करने में एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। यह विचार किया गया है कि दुनिया भर में पोषण और खाद्य सुरक्षा पर जीनोम एडीटिंग के संभावित लाभों के बारे में समाज को जागरूक करने की आवश्यकता है। नीति निर्माताओं और उपभोक्ताओं को चाहिए कि ऐतिहासिक प्रवृत्तियों को उजागर करके और डेटा निष्कर्षों को प्रस्तुत करके ऐसी तकनीकों को स्वीकार नहीं करने के परिणामों के बारे में भी प्रबुद्ध होना चाहिए।

साइट-डायरेक्टेड न्यूक्लियस -1 (एसडीएन -1) गैर-होमोलॉगस एंड जॉइनिंग (एनएचजेजे) द्वारा मध्यस्थता वाली एक अनियंत्रित मरम्मत का कारण बनता है; एसडीएन-2 में डीएनए अनुक्रम में एक छोटा स्थानीय परिवर्तन शामिल है, जिसमें होमोलॉजी-डायरेक्टेड रिपेयरिंग (एचडीआर) शामिल है; जहां एक टेम्पलेट डीएनए प्रदान किया जाता है; एसडीएन-3 भी एक प्रकार का एचडीआर है, लेकिन यह पूरे जीन अनुक्रमों की तरह बड़े डीएनए इंसर्शंस है।

"हिन्दी भाषा का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है"

- महात्मा गाँधी

फसल किस्मों का रखरखाव

हेम राज भण्डारी, चन्दन सौरभ कर, अमित बेरा एवं जितेंद्र कुमार मीणा

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता -700121

आज खेती जीवन यापन का एक माध्यम मात्र न रहकर एक उद्यम का रूप प्राप्त कर चुका है। यह लोगों को खाद्यान्न पूर्ति के साथ-साथ बड़े पैमाने पर रोजगार का अवसर भी प्रदान करता है। साथ ही यह देश की अर्थव्यवस्था का प्रमुख स्तम्भ भी माना जाता है। देश की संप्रभुता, आत्म-निर्भरता एवं आर्थिक विकास हेतु कृषि को लाभयुक्त बनाना अति आवश्यक है। 1960 के दशक में देश में हरित-क्रान्ति के आगमन से देश में खेती का स्वरूप बदला है। फलतः भारत खाद्यान्न उत्पादन में आत्म-निर्भर तो हुआ ही है, साथ ही साथ भारत वर्ष एक बड़ा खाद्य निर्यातक देश भी बन चुका है। इस क्रान्ति में फसलों की उच्च-फलनशील नस्लों का बहुत बड़ा योगदान रहा है। उच्च-फलनशील नस्ल का लाभ तभी तक उठाया जा सकता है जब तक इसके जातिगत गुणों को बरकरार रखकर इसके नस्लों का व्यापक रख-रखाव सुनिश्चित किया जाए। अतः नस्ल-रखरखाव (Maintenance Breeding) के द्वारा ही कृषि को लाभप्रद बनाया जा सकता है।

फसल क़िस्मों (नस्लों) के जातिगत गुणों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी बरकरार रखने की प्रक्रिया एवं प्रविधि को नस्ल-रखरखाव (Maintenance Breeding) कहते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा फसल के किसी नस्ल में अन्य प्रकार के पौधे जोकि उत्परिवर्तन, पर-परागण अथवा मिश्रण द्वारा आ जाते हैं,

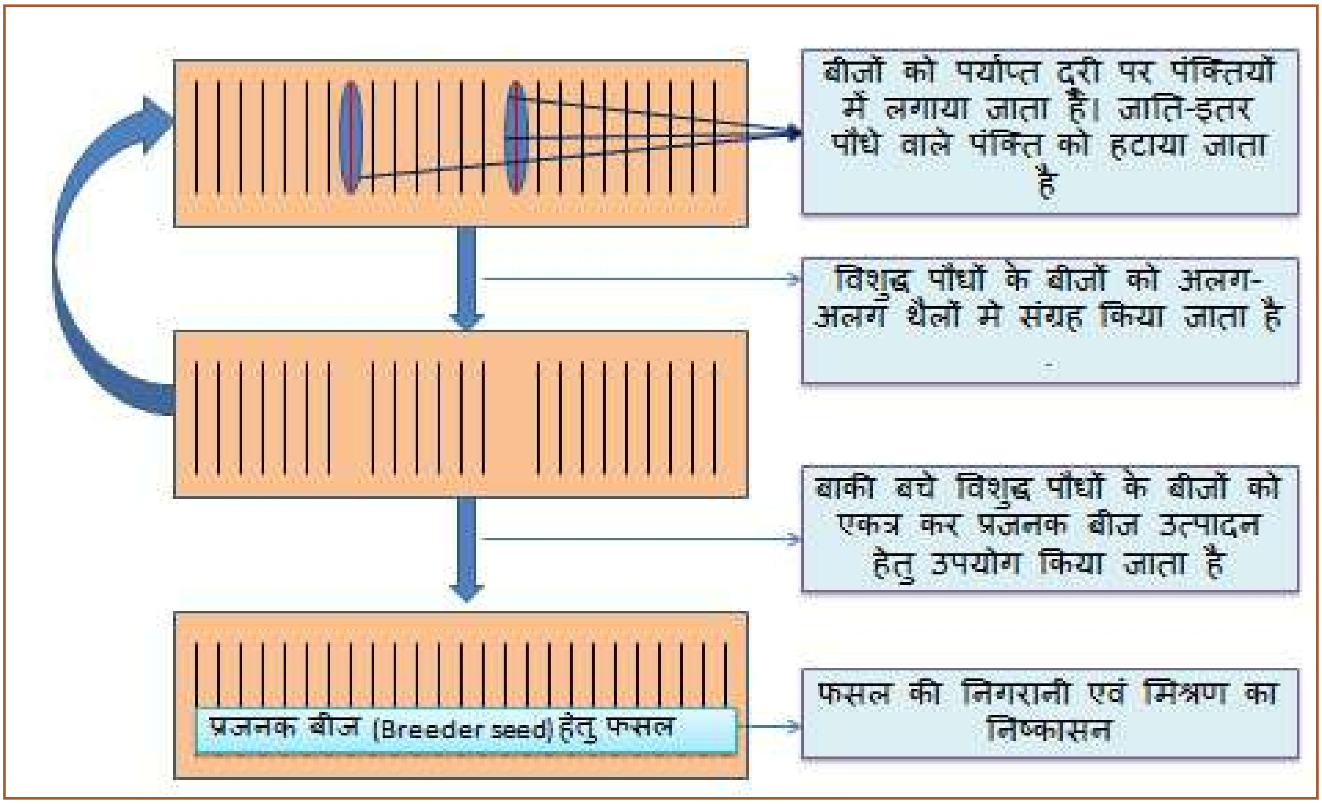

चित्र 1: फसलों में नस्ल-संरक्षण की प्रविधि

को निकाला जाता है एवं नस्ल की शुद्धता बरकरार रखी जाती है।

नस्ल-रखरखाव के लिए मुख्यतया निम्नलिखित विधियाँ हैं :

1) मातृ बीज उत्पादन प्रणाली : नई नस्ल के प्रजनक द्वारा उत्पादित अथवा दी गयी मूल बीज को मातृ/केंद्रक बीज कहा जाता है। मातृ बीज में 100% आनुवांशिक शुद्धता निर्धारित करके ही आने वाली पीढ़ियों में आनुवांशिक शुद्धता बरकरार रखी जा सकती है। इसके लिए एक विशेष प्रणाली अपनाई जाती है जिसे चित्र-1 में दर्शाया गया है, जिसका वर्णन आगे किया गया है :

प्रजनक द्वारा प्राप्त बीजों को अलग-अलग पंक्तियों में पर्याप्त दूरी पर लगाया जाता है। पूरी फसल अवधि के दौरान इसे निगरानी में रखा जाता है। यदि कोई पौधा जातिगत गुणों से इतर गुण को दर्शाता है तो वह पौधा जिस पंक्ति में है, उस पूरे पंक्ति को नष्ट कर दिया जाता है। तत्पश्चात प्रत्येक पंक्ति के पौधों से बीज का संकलन किया जाता है एवं एक-एक पौधे के बीज को अलग-अलग थैलों में रखा जाता है। बाकी शुद्ध पौधों के बीजों को एकत्र कर प्रजनक बीज (Breeder seed) उत्पादन हेतु उपयोग किया जाता है। प्रत्येक वर्ष इस प्रविधि द्वारा नस्ल की शुद्धता बरकरार रखी जाती है।

2) फसल के लिए उपयुक्त समय एवं स्थान का चुनाव : बीज की बुवाई के लिए ऐसे समय एवं जगह का चुनाव करना चाहिए जो फसल के उस नस्ल के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हो। असामान्य परिस्थितियों में पौधों के प्रतिक्रिया के कारण जातिगत गुणों से इतर पौधे देखने को मिलते हैं। ऐसे परिवर्तन बाह्य या आंतरिक (आनुवांशिक) हो सकते हैं। कालांतर में ये परिवर्तन नस्ल की विशुद्धता को कम कर देते हैं जिससे नस्ल की गुणवत्ता नष्ट हो जाती है।

3) अलगाव या पृथकता : परागण के आधार पर पौधों को दो क़िस्मों में विभक्त किया गया है : स्व-परागित एवं पर-परागित। स्व-परागित फसलों में अन्य-प्रकार के पौधे विरले ही आते हैं। पर-परागित फसलों के नस्ल में अन्य प्रकार के पौधों की उत्पत्ति प्राय-संभव है। पर-परागण में कीट-पतंगों एवं हवा का बड़ा योगदान है। अतः एक ही फसल के दो या दो से अधिक नस्लों के सम्मिश्रण को रोकने के लिए नस्लों के बीच अलगाव पृथककरण दूरी निहायत ही जरूरी है। यह अलगाव निम्नलिखित तीन तरीकों से बनाई जा सकती है :

3.1) भौतिक दूरी : बीज-गुणवत्ता बनायें रखने हेतु प्रत्येक फसल की विभिन्न नस्लों के बीच एक न्यूनतम दूरी निर्धारित की गई है। यह दूरी पर-परागण प्रतिशत एवं परागण की विधि पर निर्भर करता है। स्व-परागित फसलों में यह दूरी 3.0 मीटर से 100 मीटर तक हो सकती है एवं पर-परागित फसलों में यह दूरी 100 मीटर से 1 किलोमीटर तक हो सकती है।

3.2) बुवाई के समय में बदलाव : कई फसलों की विभिन्न नस्लों में अलग-अलग समय पर फूल आते हैं। एक ही फसल की ऐसी नस्लों की अलग-अलग समय में बुवाई करने से पर-परागण की संभावना कम हो जाती है एवं विशुद्धता बरकरार रहती है। इससे कम जमीन में ज्यादा फसल ली जा सकती है। वे फसलें जो प्रकाश या प्रकाश-अवधि के प्रति संवेदनशील होती हैं उनमें यह तरीका कारगर नहीं है क्योंकि उनमें सभी नस्लें एक ही समय में पुष्पन अवस्था में आती हैं जिससे पर-परागण की संभावना प्रबल हो जाती है। यह तरीका मक्का में अपनाया गया है। दो नस्लों को ऐसे अंतराल पर बोया जाता है ताकि उनकी पुष्पन में पर्याप्त अंतराल हो या एक नस्ल की स्त्रीकेसर निष्क्रिय होने पर ही दूसरे नस्ल में पराग सक्रिय हो।

3.3) अवरोधी फसल द्वारा : एक ही फसल के दो नस्लों के बीच बहुत ऊंची फसलों (जैसे धइंचा, अल्फा-अल्फा) द्वारा पर-परागण में अवरोध पैदा कर के हवा या कीट-पतंगों द्वारा पर-परागण को कम कर नस्लीय-विशुद्धता बरकरार रखी जा सकती है।

4) फसल प्रबंधन : नस्ल के जातिगत गुणों को संरक्षित करने हेतु फसल का समुचित प्रबंधन अति आवश्यक है। बीजों की बुवाई पंक्तियों में पर्याप्त दूरी पर करनी चाहिए। पौधों के बीच भी पर्याप्त दूरी रखनी चाहिए ताकि पौधों की निगरानी अच्छे से हो सके। समय पर उचित मात्रा में सिंचाई, खाद इत्यादि का प्रयोग करना चाहिए। फसल प्रबंधन में रोग एवं कीट नियंत्रण बहुत ही आवश्यक है। कई रोगों एवं कीटों को बीज उत्पादन में आपत्तिजनक माना गया है। रोग एवं कीटों के प्रभाव के प्रतिक्रिया-स्वरूप नस्लों में नए गुण देखने को मिलते हैं जो कई

बार नस्ल की आनुवांशिक संरचना में असर डालते है। साथ ही कई खरपतवार भी आपत्तिजनक श्रेणी में रखे गए हैं। पूरी फसल अवधि के दौरान इन खरपतवारों को नष्ट करते रहना चाहिए।

5) अवांछित पौधों का निष्कासन (Roguing) :

भौतिक मिश्रण के द्वारा भी फसल नस्लों की शुद्धता नष्ट होती है। यह मिश्रण कई प्रकार के हो सकते है। कई बार बीज की मड़ाई के समय, बीज सुखाते समय या मनुष्यों द्वारा अन्य नस्ल के बीजों का मिश्रण हो जाता है जो कालांतर में पर-परागण कर नस्ल की शुद्ध्ता को नष्ट करते हैं। कई बार कुछ बीज मिट्टी में रह जाते हैं जो आने वाली फसलों के साथ अंकुरित हो जाते हैं। इसके अलावा कई बार यह उत्परिवर्तन (mutation) के कारण भी देखा जा सकता है। कई बार स्वतः अन्य प्रकार के पौधे देखे जाते हैं जो असामान्य परिस्थितियों में देखे जाते है। कभी-कभी आनुवांशिक कारणों से भी अन्य प्रकार के पौधे देखे जाते हैं। अतः समय-समय पर अन्य-फसलों या अन्य नस्लों के पौधों को अवश्य निकाल देना चाहिए। इस प्रक्रिया को roguing कहते हैं। इस प्रक्रिया को फूल आने के पूर्व अवश्य पूरा कर लेना चाहिए। फल लगने की अवस्था में भी यह प्रक्रिया चलती रहनी चाहिए और वे पौधे जिनके लक्षण नस्ल के जातिगत गुणों से मेंल नहीं खाते उन्हें निकाल देना चाहिए। इससे पर-परागण द्वारा नस्ल-दूषण की समस्या को काफी हद तक रोका जा सकता है।

6) फसल कटाई एवं प्रबंधन : भली भांति प्रबंधित फसल की सही समय पर कटाई करनी चाहिए। फसल के परिपक्व होने पर ही कटाई करनी चाहिए। परिपक्व होने पर ज़्यादातर फसलों के पौधे एवं फली सूखने लगते हैं। जिन फसलों में बीजों का छिटकाव होता है, उनकी कटाई 75% परिपक्वता पर करनी चाहिए। इससे बीजों का नुकसान कम होता है। तत्पश्चात किसी साफ जगह पर पौधों की मड़ाई कर बीज संग्रह किया जाता है। ध्यान रखना चाहिए की मड़ाई के लिए प्रयुक्त उपकरणों जैसे ट्रैक्टर, दरी, थैले इत्यादि में पुराने अन्य फसलों या अन्य नस्लों के बीज न हों। इन बीजों को दो तीन दिन धूप में फैलाकर अच्छी तरह से सुखाना चाहिए, ताकि बीजों में नमी की मात्रा 9-10% से अधिक न हो। इसके बाद बीजों को साफ, नए थैलों में सूखे एवं सीलन-रहित जगह पर भण्डारण करना चाहिए।

"जीवन के छोटे से छोटे क्षेत्र में हिन्दी अपना दायित्व निभाने में समर्थ है"

- पुरुषोत्तमदास टंडन

संस्थान में राजभाषा गतिविधियाँ : एक झलक

मनोज कुमार राय, विकास कुमार केशरी एवं कुमार निशांत चौरसिया

भाकृअनुप – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान

बैरकपुर, कोलकाता -700121

भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान एक प्रमुख राष्ट्रीय संस्थान है जिसे पटसन एवं समवर्गीय रेशा उत्पादन में वृद्धि हेतु आवश्यक अनुसंधान तथा उसे किसानों तक पहुँचाने का दायित्व सौंपा गया है। इस संस्थान की स्थापना वर्तमान स्थान नीलगंज, बैरकपुर, कोलकाता में सन् 1953 के दौरान हुई जिसका कुल क्षेत्रफल 62.8 है. है।

संस्थान के अनुसंधान कार्य को तीन प्रभागों नामतः फसल सुधार, फसल उत्पादन तथा फसल सुरक्षा एवं पाँच अनुभागों जैसे - जैव प्रौद्योगिकी, कृषि अभियांत्रिकी, फार्म मशीनरी एवं पावर, कृषि विस्तार तथा कृषि मौसम विज्ञान के अंतर्गत व्यवस्थित किया गया है। इन अनुसंधान प्रभागों एवं अनुभागों की सहायता हेतु फार्म, वर्कशाप, पुस्तकालय, संस्थान प्रौद्योगिकी प्रबन्धन एकक, कृषि अनुसंधान सूचना प्रणाली कक्ष, प्रशासन अनुभाग, वित्त व लेखा अनुभाग भी कार्यरत हैं। संस्थान में मौलिक, सामरिक तथा क्षेत्र अनुकूल अनुसंधान कार्य हेतु आवश्यक प्रयोगशालाएँ व क्षेत्रीय सुविधायें उपलब्ध हैं।

संस्थान ने पटसन एवं समवर्गीय रेशा तथा बीजों से संबंधित अनुसंधान कार्य हेतु देश के विभिन्न भागों में 4 अनुसंधान केन्द्रों की स्थापना की हैं, जो निम्नवत है :-

1. रेमी अनुसंधान केन्द्र, सरभोग, असम (वर्ष 1959 में स्थापित), कुल क्षेत्र 60 है.।
2. सीसल अनुसंधान केन्द्र, बामरा, ओड़िशा (वर्ष 1962 में स्थापित), कुल क्षेत्र 106.4 है.।
3. सनई अनुसंधान केन्द्र, प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश (वर्ष 1963 में स्थापित), कुल क्षेत्र 12.4 है.।
4. केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा बीज अनुसंधान केन्द्र, बुदबुद, वर्दवान, पश्चिम बंगाल (वर्ष 1956 में स्थापित), कुल क्षेत्र 86.1 है.।

इन केन्द्रों के अलावा बहु-स्थानीय परीक्षण तथा तकनीकी प्रणालियों की पुनः स्थापना हेतु अखिल भारतीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा नेटवर्क परियोजना के तहत विभिन्न राज्य कृषि विश्वविद्यालयों में 9 तथा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों में 4 केन्द्र स्थापित हैं तथा इन केन्द्रों का नोडल एकक बैरकपुर मुख्यालय है।

राजभाषा गतिविधियाँ

भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान में भारत सरकार की राजभाषा नीति का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए संस्थान में एक राजभाषा प्रकोष्ठ है, इसमें एक वैज्ञानिक हिन्दी प्रभारी, एक सहायक तथा एक हिन्दी अनुवादक कार्यरत हैं।

इस संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा कृषकों के जीवन यापन में गुणात्मक सुधार हेतु पटसन एवं समवर्गीय रेशे वाली फसलों के महत्वपूर्ण कृषि तथ्यों से अवगत कराया जाता है। कृषि के क्षेत्र में इस संस्थान की साकारात्मक भूमिका रही है। विकासात्मक गतिविधियों एवं जानकारियों को अन्य भाषाओं के साथ-साथ हिन्दी में भी किसानों तक पहुंचाने में यह संस्थान प्रयासरत है। भाकृअनुप-केपसरेअसं एक वैज्ञानिक संस्थान होते हुए भी यहाँ राजभाषा हिन्दी को काफी बढ़ावा दिया जाता है। संस्थान के राजभाषा अनुभाग ने संस्थान में कार्यरत वैज्ञानिकों / अधिकारियों / कर्मचारियों के सहयोग द्वारा राजभाषा के प्रचार-प्रसार में अनेक उल्लेखनीय कार्य किए गए हैं। भाकृअनुप-केपसरेअसं., बैरकपुर में हुई इन उपलब्धियों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत हैं :-

प्रशासनिक उपलब्धियाँ

संस्थान ने प्रशासन के क्षेत्र में भी काफी महत्पूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं :-

1. भारत सरकार की राजभाषा नीति के प्रावधानों, राजभाषा अधिनियम, 1963 और अधिनियम के तहत बनाए गए

राजभाषा नियम, 1976 का कार्यान्वयन किया जाता है।

2. हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले अधिकारियों / कर्मचारियों के लिए जुलाई-दिसम्बर माह के दौरान दो हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया गया है।
3. राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा समय-समय पर जारी आदेशों का कार्यान्वयन किया जाता है।
4. राजभाषा विभाग द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम का क्रियान्वयन किया गया है।
5. संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति से संबंधित सभी मामलों पर एजेंडा नोट्स तैयार कर तथा बैठकों का आयोजन व तत्पश्चात कार्यवृत्त तैयार कर उन पर अनुवर्ती कार्रवाई की गयी है।
6. संस्थान के कार्यालयीन कार्यों में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को प्रोत्साहित करने के लिए प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी हिन्दी पखवाड़ा का आयोजन किया गया है।
7. विहित फार्मों एवं सभी मानक मसौदे द्विभाषी रूप में तैयार किए गए हैं।
8. रजिस्टरों के शीर्षक द्विभाषी रूप में तैयार किए गए हैं।
9. संस्थान में सभी रबर की मोहरें, नाम पट्ट, शीर्षक-पत्र इत्यादि द्विभाषी में तैयार किए गए हैं।
10. संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों में होने वाली चर्चायें सिर्फ और सिर्फ हिन्दी में की गयी हैं तथा उसे अमल में लाया गया है।
11. संस्थान की विभिन्न बैठकों में होने वाली चर्चायें भी अधिकांशत: हिन्दी में ही की गयी हैं।
12. प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी अन्य भाषा-भाषी लोगों के हिन्दी शब्द ज्ञान हेतु प्रतिदिन हिन्दी का एक शब्द 'आज का शब्द' लिखा गया है।
13. हिन्दी अनुभाग में प्रविष्टियाँ, टिप्पणी एवं मसौदा लेखन व अन्य कार्य हिन्दी में ही किए गए हैं तथा अन्य अनुभागों में भी अधिकांश प्रविष्टियाँ, टिप्पणी एवं मसौदा लेखन हिन्दी में ही करने के निर्देश दिए गए हैं।
14. संस्थान के सभी कम्प्यूटरों में द्विभाषी रूप में काम करने के लिए यूनीकोड की सुविधा उपलब्ध कराई गयी है।
15. संस्थान के अन्य भाषा-भाषी अधिकारियों/कर्मचारियों को हिन्दी में प्रशिक्षण करने के लिए हिन्दी शिक्षण योजना के अन्तर्गत राजभाषा कक्ष द्वारा संस्थान में ही हिन्दी कक्षायें संचालित की गयी है।
16. नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति' कोलकाता (कार्यालय-2) , सीएसआईआर-केंद्रीय काँच एवं सिरामिक अनुसंधान संस्थान, 196 राजा एस.सी. मल्लिक रोड़, कोलकाता - 700032) की छमाही बैठकों में संस्थान के निदेशक सहित अन्य अधिकारी ऑनलाइन / ऑफलाइन माध्यम से भाग लिए हैं।
17. प्रशासनिक अनुभागों सहित अन्य प्रभागों में भी टिप्पणी तथा मसौदा लेखन आदि कार्य ई-ऑफिस के माध्यम से हिन्दी में किए जा रहे हैं।
18. हिन्दी में प्राप्त पत्रों के शत-प्रतिशत उत्तर हिन्दी में दिए जाते हैं।
19. संस्थान में धारा 3(3) के अन्तर्गत आने वाले संस्थान के सभी दर आमंत्रण, निविदा-प्रपत्र, निविदा सूचनाएं एवं बिक्री सूचनायें आदि द्विभाषी रूप में जारी किए जाते हैं।
20. संस्थान द्वारा दिनांक 12.11.2022, 13.11.2022 एवं 19.11.2022 को बैरकपुर के विभिन्न कार्यालयों के अधिकारियों / कर्मचारियों हेतु परीक्षा केंद्र खोला गया, जिसमें हिन्दी प्रवीण / प्राज्ञ / पारंगत पाठ्यक्रम की परीक्षाएँ का आयोजन भी किया गया।
21. वित्तीय वर्ष 2021-2022 के दौरान हिन्दी प्रोत्साहन योजना के अंतर्गत पुरस्कार पाने वाले अधिकारी / कर्मचारी (कुल10 पुरस्कार देने का प्रावधान है)।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन

संस्थान में जुलाई-दिसम्बर 2022 के दौरान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की दो बैठकें क्रमशः दिनांक 28.09.2022 एवं 26.12.2022 को माननीय निदेशक, डॉ. गौरांग कर जी की अध्यक्षता में आयोजित की गई। इन बैठकों में संस्थान में हो रही विभिन्न गतिविधियों में हिन्दी के प्रगतिशील प्रयोग के तरीकों और साधनों पर चर्चायें की गई। इसके अलावा इन बैठकों में संस्थान के अधिकारियों / कर्मचारियों को राजभाषा विभाग द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम (2022-23) के अनुसार "ग" क्षेत्र के लिए निर्धारित 55 प्रतिशत लक्ष्यों पर भी चर्चा की गई।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठक (जुलाई-सितम्बर 2022)

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठक (अक्टूबर-दिसम्बर 2022)

हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन

एक दिवासीय हिन्दी कार्यशाला (जुलाई-सितम्बर 2022)

संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वावधान हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले संस्थान के प्रशासनिक, तकनीकी अधिकारियों एवं कर्मचारियों तथा वैज्ञानिकों की हिन्दी में काम करने की झिझक को दूर करने के उद्देश्य से दिनांक 29 सितम्बर, 2022 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला की अध्यक्षता संस्थान के माननीय निदेशक डॉ. गौरांग कर जी द्वारा किया गया। सर्वप्रथम उन्होंने भाकृअनुप-केपसरेअसं.,बैरकपुर, कोलकाता द्वारा प्रकाशित "रेशा किरण" को हिन्दी गृह पत्रिकाओं के लिए गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, भारत सरकार द्वारा प्रतिष्ठित पुरस्कार राजभाषा कीर्ति पुरस्कार योजना वित्तीय वर्ष 2021-22 से सम्मानित करने पर संस्थान के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों को बधाई दिया। आगे उन्होंने उद्घाटन भाषण में कहा कि कार्यालयीन कार्यों में हिन्दी का प्रयोग करना हमारा संवैधानिक एवं नैतिक दायित्व है। उन्होंने संस्थान के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों से कार्यालयीन कार्यों मुख्य रूप से ई-ऑफिस में सरल हिन्दी टिप्पणियों का प्रयोग करने का आग्रह किया। उन्होंने अधिकारियों / कर्मचारियों से कहा कि इस कार्यशाला का लाभ उठाते हुए वे अपने दैनंदिन कार्यों में हिन्दी का सर्वाधिक प्रयोग करें तथा ऐसे वातावरण का निर्माण करें, जिससे शत-प्रतिशत कार्य राजभाषा हिन्दी में हो सके। डॉ. सुब्रत सतपथी, प्रभारी-फसल संरक्षण प्रभाग ने कहा कि हमारा संस्थान "ग" क्षेत्र में स्थित होने के बावजूद इस संस्थान के अधिकारियों / कर्मचारियों के द्वारा राजभाषा हिन्दी का यथा संभव प्रयोग किया जा रहा है। हमारा यही प्रयास होना चाहिए कि इस प्रकार के आयोजनों के माध्यम से हमें हिन्दी में और अधिक कार्य करने के लिए प्रेरणा प्राप्त होता रहे। डॉ. बिजन मजुमदार, प्रधान वैज्ञानिक, फसल उत्पादन ने कहा कि हिन्दी इस देश में सर्वाधिक बोली तथा समझी जाने वाली भाषा है। इसलिए इसे राजभाषा का दर्जा प्राप्त है। उन्होंने सभी कर्मचारियों से टिप्पण / आलेखन में हिन्दी का प्रयोग करने का आग्रह किया। डॉ. सुनीति कुमार झा, प्रधान वैज्ञानिक ने अपना वक्तव्य रखते हुए कहा कि हिन्दी को कार्यालयीन कार्यों में अपनाना ही इसके प्रति सच्चा सम्मान होगा तथा हम सब अपना अधिक से अधिक कार्य हिन्दी में करने का संकल्प लें। डॉ. चन्दन सौरभ कर, प्रधान वैज्ञानिक, फसल उन्नतिकरण प्रभाग ने भी हिन्दी कार्यशाला में भाग लेते हुए सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों से कार्यालयीन कार्य हिन्दी में करने का आह्वान किया तथा साथ ही साथ ई-ऑफिस में हिन्दी में टिप्पणी एवं प्रारूप लेखन में हिन्दी के प्रयोग करने पर बल दिया। तत्पश्चात श्री लखन कुमार सिंह, हिन्दी प्राध्यापक, हिन्दी शिक्षण योजना, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, निजाम पैलेस, कोलकाता द्वारा संस्थान को सम्बोधित किया गया। उन्होंने प्रतिभागियों को राजभाषा नीति, नियम, अधिनियम, हिन्दी व्याकरण तथा हिन्दी टिप्पण एवं मसौदा लेखन, वर्तनी की अशुद्धियां, लिंग इत्यादि विषयों पर ऐसे उदाहरण प्रस्तुत किए जोकि प्रतिभागियों के जेहन में अक्षरश: समा गए। सभी प्रतिभागियों ने पूरे सत्र के दौरान बड़े ही उत्साहपूर्वक ज्ञानार्जन किया तथा उसके बाद खुली चर्चा का आयोजन किया गया, जिसमें प्रतिभागियों द्वारा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर मुख्य वक्ता ने सोदाहरण दिया। संस्थान के निदेशक, डॉ. गौरांग कर तथा सभी प्रभागों के प्रभागाध्यक्ष भी पूरे कार्यशाला सत्र के दौरान मौजूद रहे। कार्यशाला में लगभग 65 अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया। इस कार्यशाला का संचालन डॉ. कुमार निशान्त चैरसिया, वैज्ञानिक एवं प्रभारी, हिन्दी कक्ष, श्री मनोज कुमार राय, सहायक एवं श्री विकास कुमार केसरी, हिन्दी अनुवादक के सहयोग पूरा हुआ। कार्यशाला का समापन डॉ. सुरेन्द्र कुमार पाण्डेय, प्रधान वैज्ञानिक के धन्यवाद ज्ञापन के साथ सम्पन्न हुआ।

हिन्दी पखवाड़ा 2022 के दौरान आयोजित हिन्दी कार्यशाला में पधारे श्री लखन कुमार सिंह, हिन्दी प्राध्यापक सहित संस्थान के निदेशक एवं समस्त अनुभाग प्रभारी ।

हिन्दी पखवाड़ा 2022 के दौरान आयोजित हिन्दी कार्यशाला में व्याख्यान देते हुए श्री लखन कुमार सिंह, हिन्दी प्राध्यापक,हिन्दी शिक्षण योजना, निजाम पैलेस, कोलकाता ।

एक दिवासीय हिन्दी कार्यशाला (अक्टूबर-दिसम्बर 2022)

दिनांक 20 दिसम्बर 2022 को संस्थान के अधिकारियों / कर्मचारियों के कार्यालयीन कार्यों में हिन्दी कार्य की गति प्रदान करने के उद्देश्य से एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला की अध्यक्षता संस्थान के माननीय निदेशक, डॉ. गौरांग कर ने किया। उन्होंने अपने सम्बोधन में कहा कि कार्यालयीन कार्यों में राजभाषा हिन्दी का प्रयोग करना हम सभी का कर्तव्य है। आगे उन्होंने कार्यालयीन कार्यों में हिन्दी के सरल, सुबोध एवं आसान शब्दों के प्रयोग करने पर जोर देते हुए यह उद्घाटित किया कि राजभाषा संबंधी आदेशों का अनुपालन सुनिश्चित किया जाए। उन्होंने कार्यशाला में उपस्थित सभी प्रतिभागियों को बताया कि इस प्रकार के कार्यशाला का आयोजन करने का उद्देश्य यह है कि कार्यालय में हिन्दी में कार्य करते समय आने वाली कठिनाईयों को दूर किया जा सके इसके साथ ही साथ उन्होंने सभी प्रतिभागियों से अपील किया कि वे इस कार्यशाला में अपने दैनिक कार्यालयीन कार्य करने के दौरान हिन्दी में आने वाली समस्याओं को दूर करें तथा इस दौरान अर्जित किए गए ज्ञान को दैनिक कार्यालयीन कार्य करते समय अमल में लाएं। साथ ही उन्होंने खुशी व्यक्त किया कि संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति द्वारा दिनांक 16 नवम्बर, 2022 को कोलकाता में संयोजक माननीय प्रो. रीता बहुगुणा जोशी जी की अध्यक्षता तथा समिति के अन्य सम्मानित सदस्यों द्वारा संस्थान की राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन में हुई प्रगति का निरीक्षण किया, जिस पर समिति के संयोजक महोदया सहित अन्य सभी सदस्यों ने संतोष व्यक्त करने के साथ-साथ प्रशंसा भी की।

इस अवसर पर डॉ. सुब्रत सतपथी, प्रभारी, फसल संरक्षण प्रभाग, डॉ. ए.आर. साहा, प्रभारी, फसल उत्पादन प्रभाग तथा डॉ. एस.के. झा, प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी, कृषि प्रसार मंचासीन थे। इन सभी ने अपने-अपने व्यक्तव्य में कार्यालय के कार्यालीन कार्य में राजभाषा हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करने पर ज़ोर दिया। साथ ही सभी ने सुझाव दिया कि केंद्र सरकार के कर्मी होने के कारण हम सभी का दायित्व है कि हम अपना दैनिक सरकारी कार्यालयीन कामकाज़ राजभाषा हिन्दी में करें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस तरह के कार्यशाला का आयोजन किया जाता है। कार्यशाला में उपस्थित सभी प्रभारियों तथा आमंत्रित अतिथि वक्ता श्री निर्मल कुमार दुबे, प्रभारी-उप निदेशक (कार्यान्वयन), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, कोलकाता ने तीन प्रतिष्ठित पुरस्कार क्रमशः संस्थान को "गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार 2021" के अंतर्गत "प्रथम" पुरस्कार; "राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार 2020-21" के अंतर्गत "द्वितीय" पुरस्कार एवं गृह मंत्रालय, भारत सरकार, राजभाषा विभाग द्वारा 'राजभाषा कीर्ति पुरस्कार' के अंतर्गत संस्थान द्वारा प्रकाशित होने वाली "रेशा-किरण 2021" को "द्वितीय" पुरस्कार से सम्मानित करने पर निदेशक महोदय एवं "रेशा किरण प्रकाशन समिति के सभी सदस्यों को बधाई दिया।

कार्यशाला में श्री निर्मल कुमार दुबे ने निदेशक महोदय, डॉ. गौरांग कर का विशेष आभार व्यक्त करते हुए आयोजन समिति के अधिकारियों / कर्मचारियों को धन्यवाद देते हुए सभी प्रतिभागियों से परिचय उपरांत उन्होंने संघ की राजभाषा नीति, नियम, राजभाषा का महत्व एवं राजभाषा नियम/अधिनियम आदि विषयों पर व्याख्यान दिया। उन्होंने प्रतिभागियों से कार्यालयीन कार्य में प्रयुक्त होने वाले प्रशासनिक शब्दों / प्रशासनिक वाक्यांशों इत्यादि पर हिन्दी पर्याय पूछे। साथ ही उन्होंने हिन्दी के मानकीकरण पर भी चर्चा की। कार्यशाला में उपस्थित सभी प्रतिभागियों ने पूरे सत्र में शांतिपूर्वक, उत्साहपूर्वक एवं उत्सुकतापूर्वक ज्ञानार्जन किया तथा अधिकारियों / कर्मचारियों के शंकाओं का भी समाधान किया गया। हिन्दी कार्यशाला में 38 अधिकारी एवं 21 कर्मचारी ने भाग लिया। कार्यशाला का संचालन डॉ. कुमार निशान्त चौरसिया, वैज्ञानिक एवं प्रभारी, हिन्दी कक्ष के द्वारा किया गया। अंत में डॉ. सुरेन्द्र कुमार पाण्डेय, प्रधान वैज्ञानिक के धन्यवाद ज्ञापन के साथ कार्यशाला का समापन हुआ।

अधिकारियों/कर्मचारियों को सम्बोधित करते हुए संस्थान के निदेशक, डॉ. गौरांग कर।

श्री निर्मल कुमार दुबे, प्रभारी उप निदेशक (कार्यान्वयन), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, कोलकाता द्वारा प्रतिभागियों को प्रशिक्षण प्रदान करते हुए।

राष्ट्रीय स्तर के हिन्दी भाषा महोत्सव और संगोष्ठी का आयोजन

भाकृअनुप-केंद्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान (ICAR-CRIJAF), बैरकपुर में दिनांक 24-25 अगस्त, 2022 को दो दिवसीय राष्ट्रीय स्तर के भाषा महोत्सव और हिन्दी संगोष्ठी का उद्घाटन किया गया। इसका आयोजन भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) के विभिन्न संस्थानों / निदेशालयों / ब्यूरो आदि में कार्यरत राजभाषा से जुड़े अधिकारियों / कर्मचारियों के लिए किया गया है। संगोष्ठी का विषय "स्वतंत्रता के 75 वर्ष और राजभाषा हिन्दी का विकास"। इस दो दिवसीय कार्यक्रम में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न संस्थानों के लगभग 150 अधिकारियों / कर्मचारियों ने भाग लिया। उद्घाटन कार्यक्रम में श्री अजय ठाकुर, आईपीएस, पुलिस आयुक्त, बैरकपुर मुख्य अतिथि, श्री ए के जॉली, अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक, भारतीय पटसन निगम सम्मानित अतिथि तथा श्रीमती सीमा चोपड़ा, निदेशक (राजभाषा), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली उद्घाटन सत्र में विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित थी। कार्यक्रम की अध्यक्षता निदेशक, भाकृअनुप-क्रिजैफ, बैरकपुर डॉ. गौरांग कर द्वारा किया गया। डॉ. गौरांग कर ने सभी गणमान्य व्यक्तियों का स्वागत किया और भारत सरकार की आधिकारिक गतिविधियों के हर क्षेत्र में हिन्दी को राजभाषा के रूप में लोकप्रिय बनाने के लिए इस राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रम के महत्व के बारे में बताया। मंच पर उपस्थित सभी गणमान्य व्यक्तियों ने राजभाषा के रूप में हिन्दी के महत्व को बताया और सरकारी पत्राचार के लिए इसे जनभाषा बनाने पर जोर दिया। इस दो दिवसीय कार्यक्रम के दौरान विभिन्न सत्रों में इन महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा की गई :- (1) राजभाषा कार्यान्वयन : आधुनिकीकरण और प्रभाव : क) तकनीकी क्षेत्रों में हिन्दी की प्रगति और ख) राजभाषा के कार्यान्वयन में तकनीकी साधनों का योगदान, (2.क.) अद्यतित प्रशासनिक नियम : परिचय और अनुपालन संबंधी व्यवस्थाएं, ख) भाकृअनुप में वित्तीय नियम, (3) बदलते पर्यावरणीय परिवेश में पटसन एवं समवर्गीय रेशा की भूमिका, (4) राजभाषा कार्यान्वयन : विकास की सुदीर्घ यात्रा और प्रगति के प्रयत्न एवं विकल्पों की आलोचना, (5) राजभाषा कार्यान्वयन : वर्तमान एवं भावी योजनाएं – एक क्रियात्मक दृष्टिकोण तथा राजभाषा कार्यान्वयन की वर्तमान और भावी योजनाएं : बदलते परिदृश्य में तथा (6) तकनीकी अनुवाद : वैज्ञानिक और तकनीकी अनुवाद की समस्याएं और उनका समाधान। डॉ. गौरांग कर, निदेशक, भाकृअनुप-क्रिजैफ, बैरकपुर; श्रीमती सीमा चोपड़ा, निदेशक (राजभाषा), नई दिल्ली; डॉ. बी. के. दास, निदेशक, भाकृअनुप-सीआईएफआरआई, बैरकपुर; श्री ए के जॉली, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, भारतीय पटसन निगम, कोलकाता, श्री पी.के. जैन, सीएओ (सीनियर ग्रेड), भाकृअनुप-एनबीपीजीआर, नई दिल्ली तथा डॉ. एस. सतपथी, प्रधान वैज्ञानिक, भाकृअनुप-क्रिजैफ, बैरकपुर ने इन महत्वपूर्ण सत्रों में अध्यक्षता की। इन सत्रों में दिए गए प्रासंगिक विषय के विशिष्ट वक्ता थे - श्री अनूप कुमार, सहायक निदेशक, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, हिन्दी शिक्षण योजना, कोलकाता; श्री राजीव लाल, संयुक्त सचिव, भाकृअनुप.-केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुम्बई; श्री राजेश सहाय, निदेशक (वित्त), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली; डॉ सुनीति कुमार झा, प्रधान वैज्ञानिक, भाकृअनुप-क्रिजैफ, बैरकपुर, कोलकाता; डॉ. नवीन कुमार प्रजापति, प्रभारी, केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, राजभाषा विभाग, कोलकाता; श्रीमती सीमा चोपड़ा, निदेशक (राजभाषा), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली तथा डॉ पूरन चंद टंडन, प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय। दिनांक 25 अगस्त, 2022 को समापन कार्यक्रम में; श्रीमती नंदिनी घोष बनर्जी, सहायक महाप्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक द्वारा प्रतिभागियों को सम्बोधित किया। अंत में धन्यवाद के साथ कार्यक्रम का समापन्न हुआ।

दो दिवसीय राष्ट्रीय हिन्दी संगोष्ठी के मुख्य अतिथि के रूप में पधारे श्री अजय ठाकुर, पुलिस आयुक्त, बैरकपुर सहित भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली से श्रीमती सीमा चोपड़ा, निदेशक (राजभाषा) तथा संस्थान के निदेशक डॉ. गौरांग कर।

दो दिवसीय राष्ट्रीय हिन्दी संगोष्ठी के दौरान दीप प्रजवलित करते हुए मुख्य अतिथि श्री अजय ठाकुर, पुलिस आयुक्त, बैरकपुर सहित संस्थान के निदेशक डॉ. गौरांग कर एवं अन्य सम्मानित अतिथि गण।

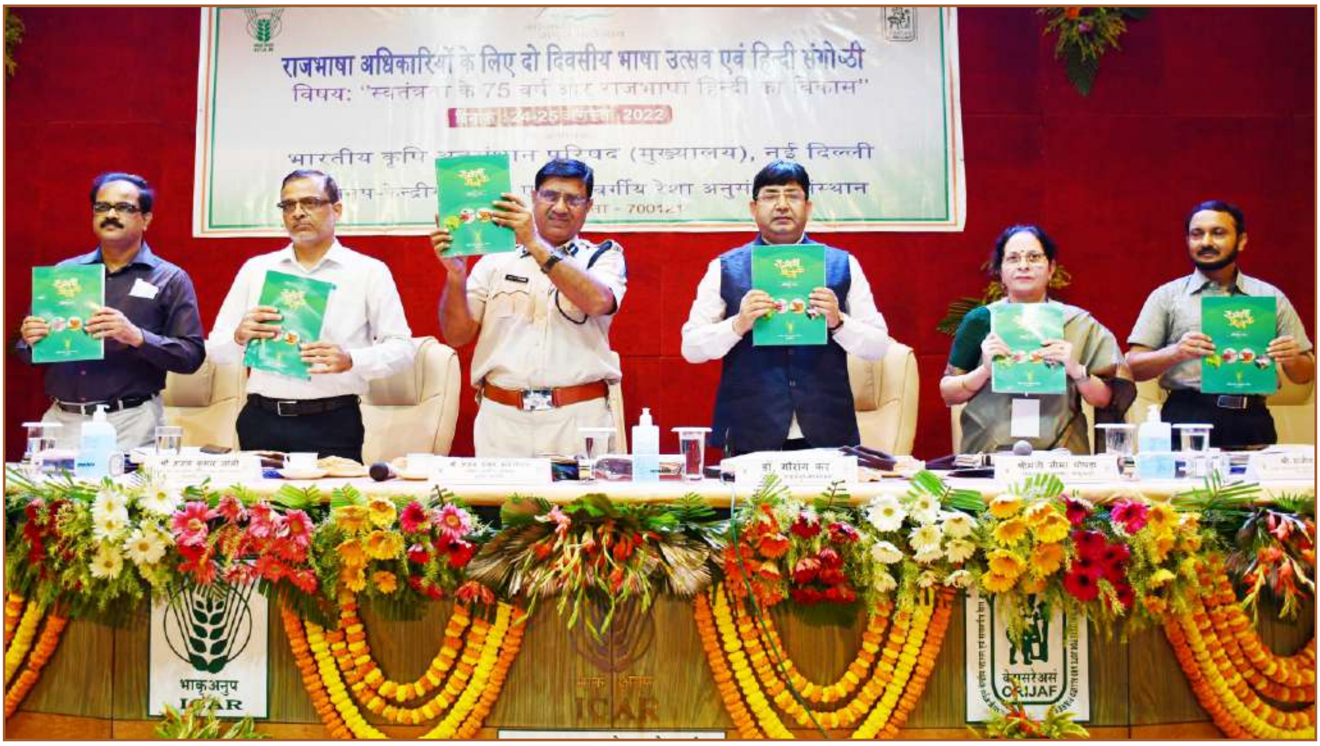

दो दिवसीय राष्ट्रीय हिन्दी संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र के में पधारे मुख्य अतिथि एवं सम्मानित अतिथियों सहित पुस्तक का विमोचन करते हुए संस्थान के निदेशक डॉ. गौरांग कर।

दो दिवसीय राष्ट्रीय हिन्दी संगोष्ठी में शामिल परिषद के विभिन्न संस्थानों के अधिकारी एवं कर्मचारी गण।

संस्थान में हिन्दी पखवाड़ा का आयोजन

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निदेशानुसार हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ाने के लिए सभी अधिकारियों व कर्मचारियों के लिए कार्यालय में दिनांक 14.09.2022 से 29.09.2022 तक हिन्दी पखवाड़ा आयोजित किया गया। राजभाषा हिन्दी का व्यापक प्रचार-प्रसार एवं जन-जन तक हिन्दी के संदेश को पहुँचाने के उद्देश्य से पूरे देश में हिन्दी दिवस एवं हिन्दी पखवाड़ा का उद्घाटन श्री अमित शाह, माननीय केंद्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री, भारत सरकार द्वारा दिनांक 14.09.2022 को सूरत (गुजरात) में आयोजित हिन्दी दिवस एवं द्वितीय अखिल भारतीय राजभाषा दो दिवसीय सम्मेलन के साथ ही पूरे देश में राजभाषा पखवाड़ा का शुभारंभ हुआ।

इस उपलक्ष्य पर गृह मंत्रालय, भारत सरकार का प्रतिष्ठित "राजभाषा कीर्ति पुरस्कार" दिनांक 14.09.2022 को सूरत, गुजरात में आयोजित हिन्दी दिवस एवं द्वितीय अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर भाकृअनुप-केपसरेअसं, बैरकपुर द्वारा प्रकाशित राजभाषा गृह पत्रिका "रेशा किरण" को वर्ष 2021-22 का द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया गया। इस हिन्दी दिवस एवं द्वितीय अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन का उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता भारत सरकार के माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री, श्री अमित शाह जी ने की। इस शुभ अवसर पर श्री भूपेंद्र भाई पटेल, माननीय मुख्यमंत्री, गुजरात, भारत सरकार के माननीय गृह राज्य मंत्री श्री अजय कुमार मिश्रा एवं माननीय गृह राज्य मंत्री, श्री निशिथ प्रामाणिक के अलावा अन्य गणमान्य व्यक्ति भी उपस्थित थे। भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान (भाकृअनुप-केपसरेअसं.), बैरकपुर के माननीय निदेशक, डॉ. गौरांग कर जी ने अन्य गणमान्य व्यक्तियों की गरिमामयी उपस्थिति में गृह राज्य मंत्री, भारत सरकार श्री अजय मिश्रा के द्वारा इस प्रतिष्ठित पुरस्कार को प्राप्त किया।

तत्पश्चात डॉ. सुनीति कुमार झा, प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी, कृषि प्रसार ने संस्थान के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों का संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की ओर से हार्दिक स्वागत करते हुए उन्हें हिन्दी पखवाड़ा के दौरान आयोजित किए जानेवाली विभिन्न हिन्दी प्रतियोगिताओं के आयोजन आदि की जानकारी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को देते हुए उनसे यह आग्रह किया कि वे इन विभिन्न हिन्दी प्रतियोगिताओं में अधिकाधिक संख्या में भाग लेकर इस आयोजन को सफल बनाएं। डॉ. एस. के. पाण्डेय, प्रधान वैज्ञानिक ने सभी अधिकारियों / कर्मचारियों से पखवाड़ा के कार्यक्रमों / प्रतियोगिताओं में बढ़-चढ़कर भाग लेने का आग्रह किया। विशेष तौर पर उन्होंने हिन्दीत्तर भाषी अधिकारियों / कर्मचारियों को पखवाड़ा के गतिविधियों में सक्रिय भूमिका निभाकर उनसे इस अवसर का लाभ उठाकर शासकीय कार्यों में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ा सकने के लिए सुझाव दिया तथा अनुरोध किया। उन्होंने यह भी अनुरोध किया की पखवाड़ा के दौरान सभी अधिकारी/कर्मचारी प्रत्येक दिवस को हिन्दी कार्य दिवस के रूप में मनाएँ और तदनुसार टिप्पण/आलेखन में ज्यादा से ज्यादा हिन्दी का प्रयोग कर वर्तमान तिमाही में हिन्दी कार्य की मात्रा बढ़ाएँ, जो परिलक्षित हो और इस राजभाषा हिन्दी पखवाड़ा के सार्थकता को रेखांकित करे।

संस्थान में हिन्दी पखवाड़ा 2022 का समापन तथा पुरस्कार वितरण का समारोह

भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता में बड़े ही उत्साह पूर्ण वातावरण में हिन्दी पखवाड़ा के समापन समारोह का आयोजन संस्थान के सभागार में दिनांक 29 सितम्बर, 2022 को अपराह्न 3.30 बजे से किया गया। स्वागत सम्बोधन में डॉ. कुमार निशान्त चौरसिया, वैज्ञानिक एवं प्रभारी हिन्दी कक्ष ने संस्थान के निदेशक, डॉ. गौरांग कर जी के संस्थान में राजभाषा हिन्दी प्रयोग के प्रति गहन लगाव की भूरी-भूरी प्रशंसा की तथा हिन्दी के प्रति उनकी आस्था को संस्थान में राजभाषा के प्रति सकारात्मक माहौल के लिए प्रेरक बताया।

इस कार्यक्रम की अध्यक्षता संस्थान के माननीय निदेशक, डॉ. गौरांग कर जी ने की। उन्होंने अपने संबोधन में कहा कि "हिन्दी हैं हम, वतन है हिन्दोस्ताँ हमारा" हर हिंदुस्तानी इस पंक्ति को बड़े उत्साह से गाता है। यह पंक्ति हम हिंदुस्तानियों के लिए अपने आप से एक विशेष महत्व रखती है

। हर वर्ष 14 सितम्बर का दिन हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है, क्योंकि इसी दिन भारत की संविधान सभा ने देवनागरी लिपि में लिखी गई हिन्दी भाषा को भारतीय गणराज्य की आधिकारिक भाषा घोषित किया था। आज विश्व में ऐसे देश भी हैं, जो अपने देश में केवल अपनी राष्ट्रभाषा से ही काम को महत्व देते हैं। रूस, चीन, जापान ऐसे ही उदाहरण हैं इन देशों में इनकी ही भाषा में काम को महत्व दिया जाता है और यही वजह है कि इनकी भाषा लगातार उन्नत होती रही है। क्या ऐसा हमारे देश में होना संभव नहीं ? यकीनन ऐसा संभव है। भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से प्रत्येक प्राणी अपने विचारों को दूसरे से अभिव्यक्त करता है। यह ऐसी दैवीय शक्ति है, जो मनुष्य को मानवता प्रदान करती है और उसका सम्मान तथा यश बढ़ाती है।

चूंकि भाषा सरकार व जन साधारण के बीच में संवाद प्रेषण का माध्यम बनती है, अतएव यह आवश्यक है कि प्रशासकीय कार्य में उपयोग की जाने वाली हिन्दी सरल, सहज तथापि संस्कारयुक्त एवं भाषा के मान्य नियमों के अनुकूल हो। इस दृष्टि से स्वतंत्रता के पश्चात जनसाधारण की दृष्टि से हिन्दी का, जो सरल एवं सहिष्णु स्वरूप विकसित हुआ है। वह राजभाषा हिन्दी या प्रशासनिक हिन्दी के रूप में परिभाषित हुआ।

उन्होंने कहा कि राजभाषा भारतवर्ष के कण-कण में विराजमान है, जिसे और व्यापक बनाने की जरूरत है। उन्होंने संस्थान के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचा से अपील किया कि हिन्दी को प्रतिबद्धता के कारण न अपनाएं बल्कि उसे हृदय की भाषा बनाएं तथा अपने-अपने कार्यालयीन कार्यों में इसका व्यापक रूप में प्रयोग करें। आगे उन्होंने कहा कि संविधान की संकल्पनाओं, राजभाषा विभाग के निदेशों, मुख्यालयों की अपेक्षाओं और कार्यालयों की अवश्यकताओं / लक्ष्यों के अनुरूप हिन्दी में कार्य हो रहा है तथा राजभाषा हिन्दी के क्रियान्वयन में इस कार्यालय ने जो मुकाम हासिल किया है, जो कृतिमान स्थापित किया है उसे बरकरार रखने में ही नहीं अपितु उसमें और भी अभिवृद्धि करने के लिए आह्वान किया।

इस अवसर पर डॉ. एस. सतपथी, प्रभागाध्यक्ष, फसल संरक्षण, डॉ. बिजन मजुमदार, प्रधान वैज्ञानिक, फसल उत्पादन, डॉ. सुरेन्द्र कुमार पाण्डेय, प्रधान वैज्ञानिक, श्री रवि मिश्र, प्रशासनिक अधिकारी एवं श्री दिलीप कुमार बरुआ, प्रभारी, आंतरिक वित्त सभी ने अपने-अपने सम्बोधन में कार्यालयीन कार्यों में राजभाषा का यथासंभव प्रयोग करने की अपील किया। साथ ही सभी मंचासीन अधिकारियों ने संस्थान के निदेशक महोदय, हिन्दी कक्ष एवं हिन्दी प्रकाशन समिति के सदस्यों को भाकृअनुप-केपसरेअसं., बैरकपुर को कार्यालयीन कार्यों में उत्कृष्ठ योगदान तथा अन्य कार्यालय प्रकाशनों में हिन्दी भाषा के प्रयोग में उत्कृष्ठ योगदान के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा प्रतिष्ठित पुरस्कारें "गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार", "राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार" तथा गृह मंत्रालय, भारत सरकार का प्रतिष्ठित "राजभाषा कीर्ति पुरस्कार" दिनांक 14.09.2022 को सूरत, गुजरात में आयोजित हिन्दी दिवस एवं द्वितीय अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर भाकृअनुप-केपसरेअसं., बैरकपुर द्वारा प्रकाशित राजभाषा गृह पत्रिका "रेशा किरण" को वर्ष 2021-22 का द्वितीय पुरस्कार से सम्मानित करने पर भूरी-भूरी प्रशंसा एवं बधाई दिया।

तत्पश्चात हिन्दी पखवाड़ा (दिनांक 14-29 सितम्बर, 2022) के दौरान आठ प्रकार के प्रतियोगितायों का आयोजन किया गया। विजेता प्रतियोगियों को क्रमशः प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार प्रदान किया गया। साथ ही हिन्दी प्रोत्साहन योजना के अन्तर्गत (वित्तीय वर्ष 2020-21) के दौरान कार्यालयीन कार्य करने पर 05 अधिकारियों/ कर्मचारियों को भी पुरस्कृत किया गया। हिन्दी पखवाड़ा 14.09.2022 से 29.09.2022 के दौरान विभिन्न प्रतिगिताओं का आयोजन किया गया, जिनका विवरण नीचे दिये जा रहे हैं :-

(1) दिनांक 17.09.2022 को आयोजित "तत्कालिक भाषण (एक्सटेम्पोर)" प्रतियोगिता में :-

(सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए)

(कुल 10 प्रतिभागियों ने भाग लिया)

1. डॉ. मानिक लाल राय, वरिष्ठ वैज्ञानिक - प्रथम
2. डॉ. सुमन राय, वैज्ञानिक - द्वितीय
3. सुश्री सतरूपा रायचौधुरी, सहायक - तृतीय

(2) दिनांक 19.09.2022 को आयोजित कम्प्यूटर पर हिन्दी टंकण (टाइपिंग) प्रतियोगिता में :-

(सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए) (कुल 31 प्रतिभागियों ने भाग लिया)

1. श्री रितेश कुमार, सहायक - प्रथम

2. श्री चन्दन कुमार वर्मा, सहायक - द्वितीय

3. डॉ. देबारती दत्ता, वैज्ञानिक - तृतीय

(3) दिनांक 21.09.2022 को आयोजित "वाद-विवाद" प्रतियोगिता में :-

(सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए)

(कुल 09 प्रतिभागियों ने भाग लिया)

1. सुश्री सतरूपा रायचौधुरी, सहायक - प्रथम

2. डॉ. जितेन्द्र कुमार मीना, वैज्ञानिक - द्वितीय

3. डॉ. कुणाल मण्डल, प्रधान वैज्ञानिक - तृतीय

(4) (क) दिनांक 22.09.2022 को आयोजित 'हिन्दी अनुवाद' प्रतियोगिता में :-

(अन्य भाषा-भाषी अधिकारियों/ कर्मचारियों के लिए)

(कुल 12 प्रतिभागियों ने भाग लिया)

1. श्री दिलीप कुमार बरुआ, सहा.प्रशा. अधिकारी - प्रथम

2. शाहिद मुख्तार, तकनीकी अधिकारी - द्वितीय

3. श्री सुरजीत बर्मन, सहायक - तृतीय

(4) (ख) दिनांक 22.09.2022 को आयोजित "हिन्दी अनुवाद प्रतियोगिता" में :-

(हिन्दी भाषी अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए)

(कुल 05 प्रतिभागियों ने भाग लिया)

1. श्री सोनू कुमार सुमन, सहायक - प्रथम

2. श्री रितेश कुमार, सहायक - द्वितीय

3. श्री रवि मिश्र, प्रशासनिक अधिकारी - तृतीय

(5) दिनांक 23.09.2022 को आयोजित 'हिन्दी निबंध' लेखन प्रतियोगिता में :-

(सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए) (कुल 7 प्रतिभागियों ने भाग लिया)

1. डॉ. लक्ष्मी शर्मा, वैज्ञानिक - प्रथम

2. श्री सोनू कुमार सुमन, सहायक - द्वितीय

3. डॉ. देबारती दत्ता, वैज्ञानिक - तृतीय

(6) दिनांक 24.09.2022 को आयोजित "हिन्दी टिप्पण तथा प्रारूप लेखन" प्रतियोगिता में :-

(अन्य भाषा-भाषी अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए)

(कुल 08 प्रतिभागियों ने भाग लिया)

1. श्री सुरजीत बर्मन, सहायक - प्रथम

2. डॉ. रितेश साहा, प्रधान वैज्ञानिक - द्वितीय

3. श्रीमती नीना मण्डल, निजी सहायक - तृतीय

(7) दिनांक 26.09.2022 को आयोजित "हिन्दी भाषा तथा इससे जुड़े रोचक तथ्यों पर आधारित एक प्रश्न मंच प्रतियोगिता" में :- (सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए) (कुल 24 प्रतिभागियों ने भाग लिया)

1. डॉ. जितेन्द्र कुमार मीना, वैज्ञानिक - प्रथम

2. श्री चन्दन कुमार वर्मा, सहायक - द्वितीय

3. श्री परितोष राय, तकनीशियन - तृतीय

(8) सांत्वना पुरस्कार : कुल 30 प्रतिभागियों को दिया गया।

हिन्दी पखवाड़ा कार्यक्रम का संचालन डॉ. कुमार निशान्त चौरसिया, वैज्ञानिक एवं प्रभारी, हिन्दी कक्ष, श्री मनोज कुमार राय, सहायक तथा श्री विकास केसरी, हिन्दी अनुवादक के द्वारा किया गया। हिन्दी पखवाड़ा में कोविड-19 दिशा-निर्देशों का पूर्णतः पालन किया गया। अंत में डॉ. एस. सतपथी, प्रभारी-प्रभागाध्यक्ष, फसल संरक्षण के धन्यवाद ज्ञापन के साथ पखवाड़ा का समापन हुआ।

हिन्दी-पखवाड़ा-2022 पुरस्कार वितरण एवं समापन समारोह के दौरान सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को सम्बोधित करते हुए संस्थान के निदेशक, डॉ. गौरांग कर।

हिन्दी-पखवाड़ा-2022 के विजेता प्रतिभागियों को पुरस्कृत करते हुए संस्थान के निदेशक, डॉ. गौरांग कर।

संसदीय राजभाषा समिति द्वारा संस्थान में राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन का निरीक्षण

दिनांक 16 नवम्बर, 2022 को कोलकाता में राजभाषा संसदीय समिति की दूसरी उप समिति के संयोजक माननीय प्रो. रीता बहुगुणा जोशी जी तथा समिति के अन्य सम्मानित सदस्यों द्वारा भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान(क्रिजैफ), बैरकपुर, कोलकाता का राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन एवं प्रयोग में हुई प्रगति का निरीक्षण तथा पुनर्विलोकन किया गया। विगत वर्षो के दौरान संस्थान में हुई राजभाषा संबंधित कार्यों का ब्यौरा संस्थान के निदेशक डॉ. गौरांग कर ने समिति के समक्ष प्रस्तुत किया, जिसपर समिति के संयोजक सहित अन्य सभी सदस्यों ने संतोष व्यक्त किया। इस निरीक्षण बैठक में माननीय सन्योजक एवं सांसद प्रो. रीता बहुगुणा जोशी के अतिरिक्त माननीय सांसद श्रीमती माला राज्य लक्ष्मी शाह तथा समिति सचिव श्री धर्मराज खटीक एवं समिति सचिवालय के अन्य अधिकारीगण उपस्थित रहे। निरीक्षण के दौरान समिति ने कुछ बिंदुओं पर और बेहतर करने का सुझाव दिया, जिसपर संस्थान के निदेशक डॉ. गौरांग कर ने आवश्यक कदम उठाने का आश्वासन दिया। इस बैठक में परिषद, मुख्यालय के वरिष्ठ पदाधिकारियों तथा संस्थान की ओर से निदेशक डॉ. गौरांग कर सहित संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन से संबंधित वैज्ञानिकों तथा अधिकारियों ने प्रतिभागिता दर्ज कराई।

समिति के संयोजक माननीय प्रो. (श्रीमती) रिता बहुगुणा जोशी जी तथा अन्य सदस्य गण।

क्रिजैफ में कौशल विकास कार्यक्रमों की कुछ झलकियाँ

भाकृअनुप-क्रिजैफ द्वारा आंचलिक क्षेत्रों सहित देश के विभिन्न प्रान्तों के महिला किसानों तथा ग्रामीण युवाओं को आत्मनिर्भर बनाने के ध्येय से समय-समय के अंतराल पर कौशल विकास कार्यक्रम के माध्यम से उन्हें सशक्त बनाया जा रहा है। इस प्रकर के कार्यक्रमों द्वारा महिला एवं पुरूष प्रतिभागी अपनी छिपी प्रतिभा को पहचाने का अवसर प्राप्त करते हैं तथा साथ ही साथ दैनिक दिनचर्या के अतिरिक्त कुछ अलग हट कर नया करने का प्रयास करते हैं, जो उनके स्वावलम्बन एवं आत्मनिर्भरता हेतु मील का पत्थर सिद्ध हुआ है।

पटसन द्वारा निर्मित विभिन्न उत्पादों पर प्रशिक्षण प्राप्त करते हुए महिला एवं पुरूष प्रशिणार्थी।

प्रतिभागियों को प्रशस्ति पत्र प्रदान करते हुए संस्थान के निदेशक, डॉ. गौरांग कर।

कृषकों को प्रोत्साहित करते हुए संस्थान के निदेशक, डॉ. गौरांग कर।

जल की बहुमुखी उपगिता संबंधित प्रशिक्षण कार्यक्रम में सम्मिलित विभिन्न प्रान्तों के कृषक सहित संस्थान के वैज्ञानिक गण।

कौशल विकास कार्यक्रमों में सम्मिलित पुरूष कृषक प्रशिक्षणार्थी ।

कौशल विकास कार्यक्रमों में सम्मिलित महिला कृषक प्रशिक्षणार्थी।

HSLC-01

आज़ादी का
अमृत महोत्सव

रेशा किरण

भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
(आईएसओ 9001 : 2015 प्रमाणित संस्थान)
बैरकपुर , कोलकाता - 700121, पश्चिम बंगाल
फ़ोन: 033-2535-6121/6122/6124 फैक्स: 033-25350415
मेल: director.crijaf@icar.gov.in
https://crijaf.icar.gov.in